शरत्-साहित्य

(तीसवाँ भाग)

विराज बहू, बचपनकी कहानियाँ

अनुवादकर्ता—
पं० रूपनारायण पाण्डेय

प्रकाशक
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड, बम्बई ।

मूल्य : एक रुपया पचास नया पैसा

दूसरी बार

नवम्बर, १९५७

प्रकाशक : नाथूराम प्रेमी मैनेजिंग डाइरेक्टर,
हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड हीराबाग, बम्बई ४
मुद्रक : ओमप्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल लि., वाराणसी (बनारस) ६२१४-१४

प्रकाशककी ओरसे

'विराज बहू' शरत् बाबूका तीसरा उपन्यास माना जाता है जो सन् १९१४ में प्रकाशित हुआ। इसके लगभग चौदह वर्ष पहले वे 'बड़ दीदी' (बड़ी बहन) और 'चन्द्रनाथ' लिख चुके थे जो बहुत समयतक पड़े रहे और १९१३ और १९१६ में प्रकाशित हुए। इन्हीं रचनाओंसे साहित्य-जगत्का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ और मर्मज्ञ पाठकोंने अनुमान किया कि साहित्य-गगनमें एक प्रतिभाशाली नक्षत्रका उदय हो रहा है। इसके बाद तो शरत् बाबूने लगातार बीस वर्षतक उपन्यास कहानियाँ नाटक और निबन्धादि लिखकर बंगला साहित्यको एकसे एक बढ़कर उज्ज्वल रत्नोंसे समृद्ध कर दिया, जिनसे हमारे पाठक अबतक काफी परिचित हो चुके हैं।

विराज बहूके भी हिन्दीमें एकाधिक अनुवाद हो चुके हैं, फिर भी हम शरत्साहित्यके प्रेमी पाठकोंके लिए यह शुद्ध और प्रामाणिक अनुवाद प्रकाशित कर रहे हैं। चरित्रहीनके समान यह भी पं० रूपनारायणजी पाण्डेयका किया हुआ है।

बचपनकी कहानियाँ (छेले बेलार गल्प) सन् १९३८ में शरत् बाबूके स्वर्गवासके बाद प्रकाशित हुई थी। वे भी इस भागमें प्रकाशित हो रही हैं। परन्तु मूल पुस्तककी ७ कहानियोंमेंसे एक कहानी 'कलकत्तेके बड़े दादा'को हमने छोड़ दिया है। क्योंकि वह श्रीकान्त प्रथम पर्वमें (पृ ७१ से ८१ तक) नाममात्रके हेर-फेरके साथ प्रकाशित हो चुकी है। एक ही पुस्तकमालामें उसकी पुनरावृत्ति उचित नहीं मालूम हुई।

विराज बहू

१

हुगली जिलेके सप्तग्राममें नीलाम्बर और पीताम्बर चक्रवर्ती दो भाई थे। उस तरफ मुर्दे जलाने, कीर्तन करने, ढोल बजाने और गाँजा पीनेमें नीलाम्बर जैसा कोई नहीं था। उसके ऊँचे पूरे गोरे शरीरमें असाधारण बल था। गाँवमें जैसे उसकी परोपकारमें प्रसिद्धि थी, गँवारपनके रूपमें वैसी ही बदनामी भी थी। लेकिन छोटे भाई पीताम्बरकी प्रकृति बिलकुल भिन्न थी। वह ठिगना और दुबला-पतला था। किसीके घर गमी होनेकी खबर सुनकर ही शामके बाद उसका शरीर न जाने कैसा होने लगता था। अपने भाईकी तरह ऐसा मूर्ख भी नहीं था और गँवारपनके पास भी नहीं फटकता था। सवेरे ही खा-पीकर, बगलमें बस्ता दबाकर घरसे निकल जाता था और हुगलीकी कचहरीके पश्चिम ओरके एक पेड़के नीचे आसन जमा देता था। दिनभर अर्जियाँ लिखकर जो कुछ कमाता था, वह शामके पहले ही घर आकर अपने बक्समें बन्द कर देता था। रातको घरके द्वार, खिड़की वगैरह अपने हाथसे बन्द करता और पत्नीसे फिर-फिर जाँच करा लेता तब सोता था।

आज सवेरे नीलाम्बर चंडीमंडपके एक ओर बैठा तमाखू पी रहा था। इसी समय उसकी कुँआरी बहन हरिमती चुपकेसे आकर पीठके पीछे घुटने टेककर बैठ गई और भाईकी पीठमें मुँह छिपाकर रोने लगी। नीलाम्बरने हुक्का दीवालके सहारे रख दिया और अंदाजसे एक हाथ बहनके सिरपर रखकर प्यारसे कहा—आज सवेरे-सवेरे तू रोती क्यों है बहन?

हरिमती मुँह रगड़कर भाईकी पीठपरसे आँसू लगाकर बोली—भाभीने मेरे गाल ऐंठ दिये हैं और काली कहकर गाली दी है।

नीलाम्बर हँसकर बोला—अरे, तुझे कानी कहती है ? देखो तो आँखें रहनेपर भी कानी कहती है, यह कानी है। किन्तु गाल क्यों भींग दिये ?

हरिमतीने रोते-रोते कहा—यों ही !

"यों ही ! अच्छा चल, देखूँ तो—" कहकर हरिमतीका हाथ पकड़े हुए नीलाम्बरने घरके भीतर जाकर पुकारा—विराज बहू !

बड़ी बहूका नाम विराजरानी है। नौ वर्षकी अवस्थामें उसका ब्याह हुआ था, तबसे सब लोग उसे विराज बहू कहकर पुकारते हैं। अब उसकी अवस्था १९-२ वर्षकी होगी। सासके मरनेके बादसे वही इस घरकी गृहिणी है। विराजरानी असाधारण सुन्दरी है। चार-पाँच साल पहले उसके एक पुत्र हुआ था, जो सौरमें ही मर गया। तबसे वह निस्सन्तान है। वह रसोईघरमें काम कर रही थी। पतिके पुकारनेपर चौकेसे बाहर आकर भाई-बहनको एक साथ देखकर जल उठी। बोली—कलमुँही, उससे नालिश करने गई थी ?

नीलाम्बरने कहा—क्यों न जाय ? तुमने उसे कानी कह दिया, जो सरासर झूठ है। लेकिन तुमने गाल क्यों भींग दिये ?

विराजने कहा—इतनी बड़ी हो गई, सोकर उठी, न मुँह धोया, न धोती बदली, गोशालामें घुसकर बछड़ा खोल दिया और मुँह बाये खड़ी देखती रही। आज एक बूँद दूध नहीं मिला। इसे पीटना चाहिए।

नीलाम्बरने कहा—नहीं जी, नौकरानीको ग्वालेके यहाँ दूध लानेके लिए भेज देना चाहिए।—अच्छा बहन तूने एकाएक बछड़ा क्यों खोल दिया ? यह काम तो तेरा नहीं है।

हरिमती भाईके पीछे खड़ी थी। धीरेसे बोली—मैंने समझा कि दूध दुहा जा चुका है।

"अब और किसी दिन ऐसा समझा तो ठीक कर दूँगी !" कहकर विराज चौकेमें जानेको हुई कि नीलाम्बरने हँसकर कहा—इस उमरमें तुमने भी एक दिन मौसा पालतू तोता उड़ा दिया था। पिंजड़ेकी खिड़की यह समझकर खोल दी थी कि पिंजड़ेके भीतरसे तोता उड़ नहीं सकता। याद है ?

यह सुनकर राजी हो गई। हँसकर बोली—याद है। मगर तब मैं इतनी बड़ी नहीं थी, इससे छोटी थी। यों कहकर काम करने चली गई।

हरिमतीने कहा—चलो न भैया बागमें चलकर देखें, आम पकने लगे हैं या नहीं।

नीलाम्बरने कहा—अच्छा चल बहन।

इसी बीचमें नौकरने आकर कहा—नयनन बाबा बैठे हैं।

नीलाम्बरने कुछ अप्रतिभ होकर धीमे स्वरमें कहा—इस बीच ही आकर बैठ गये!

बिराजने चौकेके भीतरसे सुन लिया। उसने तेजीसे निकलकर, चिल्लाकर कहा—बाबासे जानेके लिए कह दे। फिर स्वामीकी ओर लक्ष्य करके कहा—अगर तुम अभीसे ही यह सब पीना शुरू कर दोगे तो मैं सिर पटककर जान दे दूँगी। आजकल यह सब क्या हो रहा है!

नीलाम्बर कुछ नहीं बोला, चुपचाप बहनका हाथ पकड़कर खिड़कीके द्वारसे बगियामें चला गया।

इस बागमें एक तरफसे सरस्वती नदीकी एक पतली धारा मुमूर्षु गंगा-यात्रीकी क्षीण साँसकी तरह बाहर आ रही थी। उसमें सेवार भरा हुआ था। बीच बीचमें गाँवके लोगोंने पानीके लिए कुएँ खोद रखे थे। उसीके आसपास सेवारसे मुक्त उसके जलमें डूबी हुई सीपें स्वच्छ पानीके भीतरसे असंख्य माणिक्योंकी तरह धूपमें चमक रही थीं। किनारेपर एक काला पत्थर सतीकी समाधिस्तूपकी दीवारसे किसी अतीत दिनकी बाढ़के तेज बहावके कारण खिसककर यहाँ आ पड़ा था। इस घरकी बहुएँ रोज शामको उसी पत्थरके एक सिरेपर उस मृत आत्माके लिए दीपक जलाकर रख जाती थीं। उसी पत्थरके एक किनारे बहनका हाथ पकड़े हुए नीलाम्बर आकर बैठ गया। नदीके दोनों किनारोंपर बड़े-बड़े आमके बाग और बाँसके झाड़ थे। दो-एक बहुत पुराने पीपल और बरगदके पेड़ नदीके पानीकी सतहतक झुककर अपनी शाखाएँ फैलाये हुए थे। इन शाखोंके ऊपर न जाने कितने समयसे कितने ही पक्षियोंने अपने घोंसले बनाये हैं, कितने बच्चोंको पाल-पोस कर बड़ा किया है, कितने ही फल खाये और कितने ही गीत गाये हैं। उन्हींकी छायामें दोनों भाई-बहन कुछ देर चुपके बैठ रहे।

एकाएक हरिमती अपने भाईकी गोदके पास और भी खिसक आकर

बोली—अच्छा भैया भाभी तुमको 'बोष्टम ठाकुर'[1] कहकर क्यों पुकारती हैं ?

अपने मत्थेकी तुलसीकी माला दिखाकर, हँसकर, नीलाम्बरने कहा—मैं बोष्टम जो हूँ, इसीसे कहती है।

हरिमतीको विश्वास नहीं हुआ। उसने कहा—वाह, तुम क्यों बोष्टम होगे ? वे तो भीख माँगते हैं। अच्छा दादा वे भीख क्यों माँगते हैं ?

नीलाम्बरने कहा—उनके पास नहीं है, इससे माँगते हैं।

हरिमतीने भाईके मुँहकी ओर देखते हुए पूछा—उनके कुछ नहीं है ? धान नहीं पोखर नहीं, धानकी कोठार नहीं—कुछ भी नहीं ?

नीलाम्बरने प्यारसे बहनके बाल जरा हिलाकर कहा—कुछ भी नहीं है। बोष्टम होनेपर अपने पास कुछ भी न रखना चाहिए।

हरिमतीने कहा—तो फिर सभी लोग उनको थोड़ा-थोड़ा क्यों नहीं देते ?

नीलाम्बरने कहा—तेरे दादाने ही उन्हें क्या दिया है ? !

हरिमतीने कहा—तो क्यों नहीं देते दादा ? हमारे तो इतना सब है।

नीलाम्बरने हँसकर कहा—सब भी तेरा दादा नहीं दे सकता। लेकिन तू जब राजाकी बहू होगी तब सब देना।

बालिका होने पर भी यह सुनकर हरिमती लजा गई। अपने भाईकी छातीमें मुँह छिपाकर बोली—जाओ !

नीलाम्बरने दोनों हाथोंसे दबाकर उसका माथा चूम लिया। माँ-बापकी इस छोटी बहनको वह बेहद प्यार करता था। सात साल पहले, जब हरिमती तीन सालकी थी तभी उसकी विधवा माता उसे बड़ी बहू और बेटेको सौंपकर परलोक सिधार गई थी। तबसे नीलाम्बरने ही उसे पाल-पोसकर इतना बड़ा किया है। नीलाम्बरने काम पड़नेपर गाँवभरके रोगियोंकी सेवा की है मुर्दे जलाये हैं, कीर्तन किया है, गाँजा पिया है, लेकिन क्षणभरके लिए भी अपनी माताकी इस अन्तिम समयकी आज्ञाकी अवहेलना नहीं की। इसी तरह उसने हरिमती को छातीसे लगाकर पाला-पोसा है। इसीसे हरिमती माताकी तरह बिना संकोच के

---

[1] बंगालके वैष्णवसम्प्रदायके लोग एकतारा बजाकर भजन गा-गाकर घर-घर द्वार-द्वार भिक्षा माँगते फिरते हैं। ये बोष्टम कहलाते हैं और स्त्रियाँ बोष्टमी। वैष्णवका ही बंगाली उच्चारण बोष्टम है।

दादाकी छातीमें मुँह छिपाकर चुप हो रही ।

इतनेमें पुरानी दासीकी आवाज़ सुन पड़ी—पूँटी मामी दूध पीने के लिए बुला रही हैं, आओ ।

पूँटी अर्थात् हरिमतीने सिर उठाकर विनतीके स्वरमें कहा—दादा तुम कह न दो कि अभी दूध नहीं पिऊँगी ।

क्यों नहीं पियेगी बहन ?

हरिमतीने कहा—अभी मुझे बिलकुल भूख नहीं है ।

नीलांबरने हँसकर कहा—मैं तो यह मान लूँगा, लेकिन जो गाल मींड़ देती है वह तो न मानेगी ।

नौकरानीने वहींसे फिर पुकारा—पूँटी !

नीलांबरने पटपट बहनको खड़ा करके कहा—जा, झपट पटककर दूध पी आ बहन मैं यहीं बैठा हूँ ।

हरिमती मुँह लटकाकर धीरे-धीरे चली गई ।

उसी दिन दोपहरको विराजने थाली परोसकर पतिके सामने रख दी और थोड़ी दूर बैठकर कहा—अच्छा तुम्हीं बताओ मैं भातके साथ क्या चीज रोज-रोज तुम्हारी थालीमें परोसूँ ! यह न खाऊँगा वह न खाऊँगा वह भी न खाऊँगा अन्तमें मछली भी छोड़ दी !

नीलांबरने कहा—यह इतनी तरकारी तो है !

विराजने कहा—इतनी, कितनी है ! हेरफेरकर कभी यह, कभी वह ! खाली इस साग पातके साथ क्या मर्द खा सकते हैं ! यह कोई शहर तो है नहीं कि सब चीजें मिल जायें । यह तो देहात है । यहाँ तो बस यही पोखरकी मछली मिलती है । उसे भी खाना तुम छोड़ बैठे हो ।—अरे पूँटी कहाँ गई ? आकर पंखेसे हवा कर ।—ना सो नहीं होगा ।—देखो आज अगर थालीमें कुछ भी पड़ा रहेगा तो मैं तुम्हारे पैरोंपर सिर पटककर जान दे दूँगी ।

नीलाम्बर कुछ बोला नहीं, हँसता हुआ खाता रहा ।

विराजने झल्लाकर कहा—हँसते क्या हो ? मेरी देहमें आग क्या लगती है । दिन-दिन तुम्हारी खुराक घटती जाती है, यह भी खबर है ? हँसलीकी हड्डी दिखाई देने लगी है, इधर जरा देखो ।

नीलाम्बरने कहा—मैंने सब देखा है। यह तुम्हारे मनका भ्रम है।

विराजने कहा—मनका भ्रम है? कभी नहीं। जानते हो, अगर तुम एक दाना भी कम खाते हो तो मैं बता दे सकती हूँ। रत्तीभर भी रोग हो तो शरीर पर हाथ रखकर ही समझ जाती हूँ, सो जानते हो?—जा तो पूँटी, पंखा रखकर चौकेके भीतरसे अपने दादाके पीनेका दूध ले आ।

हरिमती एक ओर खड़ी भाईको हवा कर रही थी। वह पंखा रखकर दूध लेने चली गई।

विराज फिर बोली—देखो नेम-धरम करनेके लिए बहुत दिन पड़े हैं। आज उस घरकी मौसी आई थीं। उन्होंने सुनकर कहा कि इतनी थोड़ी उमरमें मछली छोड़ देनेसे आँखोंकी जोत मारी जाती है, शरीरकी शक्ति घट जाती है।—ना ना यह न होगा। अन्तमें न जाने क्याका क्या हो जाय। मैं तुमको मछली नहीं छोड़ने दूँगी।

नीलाम्बर हँस पड़ा बोला—अच्छा अब मेरे बदले तू ही खूब मछली खाया, तो सब ठीक हो जायगा।

विराजने चिढ़कर कहा—मौसी-ममेरीकी तरह फिर वही तू तकार!

नीलाम्बरने अप्रतिभ और लज्जित होकर कहा—याद नहीं रहता विराज! बचपनका अभ्यास ठहरा छूटता नहीं। याद है, कितनी दफे तुम्हारे कान उमेठे हैं मैंने?

विराज होठोंमें दबी हुई हँसीके साथ बोली—याद नहीं है? मुझे छोटी पाकर तुमने क्या कुछ कम अत्याचार किया है। बापूजीसे छिपकर, मौकी आँख बचाकर तुम मुझसे कितनी चिलमें भरवाते थे। तुम क्या कुछ कम दुष्ट हो?

नीलाम्बर ठहाका मारकर हँस पड़ा। उसने कहा—आज भी वे सब बातें याद हैं? मगर मैं तभीसे तुमको प्यार करने लगा था।

विराज हँसी दबाकर बोली—जानती हूँ। अब चुप करो—पूँटी आ रही है।

हरिमतीने आकर दूधका कटोरा भाईके पास रख दिया और फिर पंखा लेकर हवा करने लगी। विराजने उठकर हाथ धोये और फिर पतिके पास आकर बैठ गई बोली—ला पूँटी पंखा मुझे दे दे तू जाकर खा ले।

पूँटी चली गई। विराज पंखा झलते-झलते बोली—सच कहती हूँ, इतनी

छोटी अवस्थामें ब्याह होना ठीक नहीं।

नीलाम्बरने पूछा—क्यों ठीक क्यों नहीं? मैं तो कहता हूँ कि लड़कियोंका बहुत छोटी उमरमें ही ब्याह हो जाना अच्छा है।

विराज सिर हिलाकर बोली—नहीं। मेरी बात और है, क्योंकि मैं तुम्हारे हाथ पड़ी थी। इसके सिवा मेरे कोई शरारती दुष्ट ननद या जेठानी भी नहीं थी। मैं दस सालकी उमरमें ही गृहिणी बन गई थी। लेकिन मैं और लोगोंके घर भी तो देखती हूँ। छोटी उमरमें ही जो बक-झक और मारपीट शुरू हो जाती है, वह बड़ी होने पर भी बंद नहीं होती। इसीसे तो मैं अपनी पूँटीके ब्याहका अभी नाम ही नहीं लेती। नहीं तो अभी परसों ही पूँटीके ब्याहके लिए राजेश्वरीतल्लाके घोषाल बाबूके घरसे 'घटकी'[1] आई थी। लड़केकी ओरसे दान सामग्री और नकद एक हजार रुपये! तो भी मैं कहती हूँ कि नहीं, अभी दो साल और रहने दो।

नीलाम्बरने आश्चर्यसे सिर उठाकर कहा—तुम क्या रुपये लेकर लड़की बेचोगी!

विराजने कहा—रुपये क्यों न लूँगी? अगर मेरे एक लड़का होता तो हमें रुपये देकर घरमें बहू लानी पड़ती या नहीं? तुम आप क्या मुझे तीन सौ रुपये देकर मोल नहीं लाये थे? देवरके ब्याहमें क्या पाँच सौ रुपये नहीं देने पड़े? ना ना तुम इन सब बातोंमें दखल न दो। हम लोगोंकी जो रीति है मैं वही करूँगी।

नीलाम्बरने और भी विस्मित होकर कहा—यह तुम्हें किसने बताया कि हम लोगोंकी रीति लड़की बेचना है? यह ठीक है कि हम लोग लड़कीवालेको रुपये देते हैं, लेकिन, अपनी लड़कीके ब्याहमें एक पैसा भी नहीं लेते। मैं पूँटीको दान करूँगा।

स्वामीके चेहरे और आँखोंका भाव देखकर विराज हँस पड़ी। बोली—

१ बंगालमें घटक या घटकी वे कहलाते हैं जो लड़की-लड़कोंके संबंध ठीक कराते हैं। ये सैकड़ों खानदानोंका वंश-परिचय और जन्म-पत्रियोंकी नकलें अपने संग्रहमें रखते हैं। इनका पेशा ही यह है। —अनुवादक

क्या करूँ विराज, ज़बान दे चुका हूँ—एक बार मुझे जाना ही पड़ेगा।

ज़बान क्यों दी ?

नीलाम्बर चुप बैठा रहा।

विराजने रूखेपनसे कहा—तुम क्या समझते हो कि तुम्हारा जीवन केवल तुम्हारा ही है, उसमें और किसीको कुछ बोलनेका हक नहीं है? तुम्हारा जो जी चाहे वही कर सकते हो ?

नीलाम्बरने बातोंको हल्की बनानेकी गरज़से हँसनेकी चेष्टा की, लेकिन पत्नीका रूख और मुख देखकर वह हँस न सका। किसी तरह कह डाला—मगर उसका रोना देखकर

विराज बीचमें ही बोल उठी—ठीक तो है। उसका रोना तुमने देखा लेकिन मेरा रोना देखनेवाला भी कोई इस दुनियामें है ? यों कहकर उसने उस चार सतरोंकी चिट्ठीको टुकड़-टुकड़े करके फेंकते हुए कहा—ओह, वे मर्द भी कैसे होते हैं! चार दिन और चार रातें खाना-पीना-सोना छोड़कर सिवा की—उसका ही पर बदला हाथोंहाथ दे रहे हैं! घर घर बुखार और शीतला है फिर भी इस रोगी निर्बल देहको लेकर रोगीको देखने-चले जाते हैं।—अच्छा जाओ मेरे भी भगवान हैं। यों कहकर फिर एक बार छातीके नीचे तकिया दबाकर वह पड़ रही।

नीलाम्बरके होंठोंपर बहुत हल्की हँसी-सी मुस्कराहट आ गई। उसने धीरेसे कहा—तुम औरतोंको क्या ऐसा भरोसा है जो बात-बातमें भगवानकी दोहाई देती हो ?

विराज तकीसे उठ बैठी और क्रोधके स्वरमें बोली—नहीं, भगवानपर केवल तुम्हें ही भरोसा है हम लोगोंको नहीं। हम कीर्तन नहीं करतीं, तुलसीकी माला नहीं पहनतीं मुर्दे फूँकनेको नहीं जातीं इसीसे हम लोगोंको नहीं, लेकिन तुम लोगोंको है।

विराजका क्रोध देखकर नीलाम्बरको हँसी आ गई। उसने कहा—क्रोध न करो विराज, सचमुच ही ऐसा है। केवल एक तुम ही नहीं सभी ऐसी हैं। भगवानपर भरोसा रखनेके लिए जितना जोर चाहिए, उतना जोर औरतोंकी देहमें नहीं होता—इसमें तुम्हारा क्या दोष है ?

छोटी अवस्थामें ब्याह होना ठीक नहीं।

नीलाम्बरने पूछा—क्यों ठीक क्यों नहीं ? मैं तो कहता हूँ कि लड़कियोंका बहुत छोटी उमरमें ही ब्याह हो जाना अच्छा है।

विराज सिर हिलाकर बोली—नहीं। मेरी बात और है, क्योंकि मैं तुम्हारे हाथ पड़ी थी। इसके सिवा मेरे कोई शरारती दुष्ट ननद या जेठानी भी नहीं थी। मैं इस छोटी उमरमें ही गृहिणी बन गई थी। लेकिन मैं और लोगोंके घर भी तो देखती हूँ। छोटी उमरमें ही जो झक-झक और मारपीट शुरू हो जाती है, वह बड़ी होने पर भी बंद नहीं होती। इसीसे तो मैं अपनी पूँटीके ब्याहका अभी नाम ही नहीं लेती। नहीं तो अभी परसों ही पूँटीके ब्याहके लिए राजेश्वरीतल्लाके गोपाल बाबूके घरसे 'घटकी'[1] आई थी। लड़की जेवरसे लाद दी जायगी और नगद एक हजार रुपये। तो भी मैं कहती हूँ कि नहीं, अभी दो साल और रहने दो।

नीलाम्बरने आश्चर्यसे सिर उठाकर कहा—तुम क्या रुपये लेकर लड़की बेचोगी ?

विराजने कहा—रुपये क्यों न लूँगी ? अगर मेरे एक लड़का होता तो हमें रुपये देकर घरमें बहू लानी पड़ती या नहीं ? तुम लोग क्या मुझे तीन सौ रुपये देकर मोल नहीं लाये थे ? देवरके ब्याहमें क्या पाँच सौ रुपये नहीं देने पड़े ? ना ना तुम इन सब बातोंमें दखल न दो। हम लोगोंकी जो रीति है मैं वही करूँगी।

नीलाम्बरने और भी विस्मित होकर कहा—यह तुम्हें किसने बताया कि हम लोगोंकी रीति लड़की बेचना है ? यह ठीक है कि हम लोग लड़कीवालेको रुपये देते हैं लेकिन अपनी लड़कीके ब्याहमें एक पैसा भी नहीं लेते। मैं पूँटीको दान करूँगा।

स्वामीके चहरे और आँखोंका भाव देखकर विराज हँस पड़ी। बोली—

---

१ बंगालमें घटक या घटकी वे कहलाते हैं जो लड़की-लड़कोंके संबंध ठीक कराते हैं। ये सैकड़ों खानदानोंका वंश-परिचय और जन्म-पत्रियोंकी नकलें अपने संग्रह में रखते हैं। इनका पेशा ही यह है। —अनुवादक

अच्छा-अच्छा बहुत नहीं करना । अब खा लो, कोई बहाना करके उठ न जाना ।

नीलाम्बर भी हँस दिया । बोला—क्या मैं बहाना करके उठ जाता हूँ !

विराजने कहा—नहीं एक दिन भी नहीं । यह दोष तो तुम्हारे शत्रु भी नहीं दे सकेंगे । इसके लिए मुझे कितने दिन उपवास करके काटने पड़े हैं, सो छोटी बहू जानती है—अरे यह क्या ! बस खा चुके !

विराजने पंखा फेंक दिया और दूधका कटोरा जोरसे पकड़कर बोली—तुम्हें मेरे सिरकी कसम, उठो नहीं ।—पूँटी, जल्दी जा छोटी बहूसे दो संदेश तो ले आ ।—नहीं नहीं मक्खन खिलानेसे कुछ न होगा । तुम्हारा पेट अभी नहीं भरा । मैया री कहती हूँ कि उठ जाओगे तो मैं भोजन न करूँगी । कल रातको मैंने एक बजेतक जागकर संदेश बनाये हैं ।

हरिमती दौड़ती हुई गई और तश्तरीमें बहुत-से संदेश लाकर नीलाम्बरके सामने रख दिये ।

नीलाम्बर हँस पड़ा । बोला—अच्छा तुम्ही बताओ, इतने संदेश क्या मैं खा सकता हूँ ?

विराजने मिठाईकी मात्रा देखकर, सिर झुकाकर कहा—बातचीत करते-करते अनमनस्क होकर खाओगे, खा सकोगे ।

नीलाम्बरने कहा—फिर भी खाना ही पड़ेगा ?

विराजने कहा—हाँ । या तो मछली खाना न छोड़ने पाओगे, नहीं तो यह रोज कुछ अधिक मात्रामें खानी पड़ेगी ।

लम्बी साँस खींचकर नीलाम्बरने कहा—तुम्हारे इस खिलानेके दुःखके मारे तो जी चाहता है कि किसी वनमें जाकर भाग जाऊँ !

पूँटी बोल उठी—मुझको भी भैया

विराजने धमकाकर कहा—चुप रह कलमुँही ! खायेंगे नहीं तो जियेंगे कैसे ! ससुरालमें जाकर पता पड़ेगा इस शिकायतका ।

२

लगभग डेढ़ महीने बादकी बात है । पाँच दिन भोग चुकनेके बाद आज ...से नीलाम्बरको बुखार न था । विराजने बासी कपड़ा बदलवाकर, अपने हाथसे

सूखे कपड़े पहिनाकर, पलंगपर बिछौना डालकर उसे लिटा दिया था। वह खिड़कीके बाहर एक नारियलके पेड़को चुपचाप पड़ा देख रहा था। हरिमती उसके पास बैठी धीरे धीरे पंखा झल रही थी। थोड़ी देरमें ही विराज नहा-धोकर भीगे बाल पीठपर बिखराये, रेशमी धोती पहने उस कोठरीमें दाखिल हुई। सारी कोठरी जैसे प्रकाशित हो उठी। नीलाम्बरने उसकी ओर देखकर कहा—यह क्या?

विराजने कहा—पंचानन्द बाबाकी पूजा मानी थी जाऊँ, पूजाका सामान भेज दूँ। यों कहकर विराजने पलंगके पास बैठकर हाथसे स्वामीके माथे की गर्मी अनुभव करके कहा—ना, बुखार नहीं है। नहीं जानती, इस साल शीतला मैयाके मनमें क्या है! घर घर क्या हाल हो रहा है! आज सवेरे ही सुना कि घोषोंके मोती मोड़लके लड़केकी सारी देहमें माताकी कृपा हुई है। देहभरमें तिल रखनेको जगह नहीं है।

नीलाम्बरने व्यस्त होकर पूछा—मोतीके किस लड़केको शीतला निकली है?

विराज ने कहा—बड़े लड़केको।—माँ शीतला गाँवको शीतल करो माता! जाने दो, उसका यही लड़का तो कमाता-धमाता है। पिछले शनीचरकी रातको पिछले पहर अचानक नींद टूटकर जानते तुम्हारे शरीरपर हाथ पड़ जानेसे देखा शरीर जैसे जला जा रहा है। भयसे छातीका खून सूखकर काठ हो गया। उठ कर वहीं बैठकर रोती रही। उसके बाद मानता मानी कि मैं शीतला जब इन्हें स्वस्थ कर दोगी तभी तुम्हारी पूजा चढ़ाकर फिर कुछ खाऊँ-पियूँगी नहीं तो प्राण दे दूँगी। कहते-कहते विराजकी दोनों आँखें आँसुओंसे भीग गई और दो बूँद आँसू गिर पड़े।

नीलाम्बरने विस्मित होकर कहा—तुम क्या उपवास किये हुए हो?

पूँटीने कहा—हाँ दादा, भाभी कुछ नहीं खाती। सिर्फ शामको एक मुट्ठी कच्चे चावल और लोटाभर पानी पिया था। किसीकी बात नहीं सुनती।

नीलाम्बरने बहुत ही असन्तुष्ट होकर कहा—क्या यह तुम्हारा पागलपन नहीं है?

विराजने धोतीके छोरसे अपने आँसू पोंछते हुए कहा—पागलपन नहीं है! मतलब पागलपन है! मगर तुम नारी होकर जनमते तो जानते कि पति

क्या चीज है! तब समझ पाते कि ऐसे दिनों में उस बुखार आनेपर छातीके भीतर क्या होने लगता है!—यह कहकर वह चुप हो गयी कि फिर खड़ी होकर बोली—पूँटी नदी पूजा चढ़ाने जा रही है। साथ जाना चाहे तो जल्दी जाकर नहा ले, जा।

पूँटी खुशीसे उठ बैठी, बोली—जाऊँगी भाभी।

तो फिर देर न कर। जा अपने दादाके लिए देवतासे अच्छी तरह वरदान माँगना।

पूँटी तेजीसे चल दी। नीलाम्बरने हँसकर कहा—वह भी माँग सकती, लेकिन तुमसे भी ज्यादा अच्छी तरह।

विराजने हँसकर गर्दन हिलाकर कहा—यह न समझो। चाहे बाप हो, चाहे माँ-बाप, औरतोंके लिए पतिसे बढ़कर और कोई नहीं। बाप या माँ-बापके न रहनेपर जरूर ही बहुत दुःख और कष्ट होता है, लेकिन पतिके न रहनेसे तो स्त्रीका सर्वस्व लुट जाता है। यह जो, आज पाँच दिनसे बिना खाये-पिये हूँ, लेकिन चिन्ता और दुर्भावनाके मारे एक बार भी खयाल नहीं हुआ कि उपवासी हूँ—लेकिन तुमको तो अपनी किसी बहनको, देखूँ कैसे—

नीलाम्बर जल्दीसे बाधा देकर बोला—फिर!

विराज बोली—तो फिर कहते क्यों हो? पापपुण्य किया है या क्या किया है, तो मैं जानती हूँ या देवता जानते हैं, जिन्होंने मेरी बात रखी है। अगर तुम्हें कुछ हो जाता तो मैं एक दिन भी न जीती। माँगका सिंदूर पुँछनेके पहले ही पर माथा फोड़ डालती। दुःख-व्याधिके समय लोग ढूँढ़ न सकेंगे, सुख-कालमें बुलाकर पूछेंगे नहीं इन दोनों प्यारे हाथोंको लोगोंके सामने निकाल नहीं सकूँगी, माथेके सिरसे माँगका दाग न सकूँगी कि कि यह जीना भी कोई जीना है! उस जमानेमें जो जलाकर मार डालते थे, सो ही ठीक था। तब मर्द लोग स्त्रियोंके दुःख-दर्दको जानते-समझते थे, आजकल नहीं समझते।

नीलाम्बरने कहा—नहीं, नहीं समझते, तुम जाकर समझा दो।

विराजने कहा—हाँ मैं समझा सकती हूँ। केवल मैं ही क्यों, तुमको पाकर जो कोई हो वैसी, वही समझा दे सकेगी मैं अकेली नहीं। जाने दो—मैं भी अब तब क्या बकने लग रही हूँ—कहकर विराज हँस उठी। इसके बाद उठकर

फिर एक बार पतिकी छातीका और माथेका उत्ताप हाथसे अनुभव करके बोली—देहमें कहीं दर्द तो नहीं है ?

नीलाम्बरने गर्दन हिलाकर कहा—नहीं।

विराजने कहा—फिर कोई डरकी बात नहीं। आज मुझे भूख लग रही है जाऊँ, अब कुछ राँधनेकी तैयारी करूँ। तुमसे सच कहती हूँ आज अगर कोई मेरा एक हाथ भी काट डाले तो शायद मुझे क्रोध नहीं आवेगा।

इसी समय बधु नौकरने बाहर से पुकारकर कहा—माँजी क्या वैद्यजीको बुलाकर लाना होगा ?

नीलाम्बरने कहा—ना, ना अब कोई जरूरत नहीं है।

तो भी नौकर वैद्यजीकी अनुमतिके लिए चला गया। विराजने यह देखकर कहा—नहीं जा चुका ता। एक बार और अच्छी तरह देख जायँ।

तीन-चार दिनके बाद आरोग्य लाभ करके नीलाम्बर बाहरके चण्डीमण्डपमें बैठा हुआ था। इतनेमें मोती मोड़ल आकर रोने लगा—दादा ठाकुर, तुम एक बार चलकर न देखोगे तो मेरा छिमन्त बच नहीं सकेगा। एक बार पैरोंकी रज दो देकर तो शायद अभागा बच उठ सकता है।—और कुछ वह कह नहीं सका, व्याकुल होकर रोने लगा।

नीलाम्बरने पूछा—देहमें क्या बहुत दाने निकले हैं ?

मोती आँसू पोंछता हुआ कहने लगा—सो क्या बताऊँ ! भैया जैसे एकदम भरी पड़ी हैं। नीची जातिमें जन्म लिया है बाबा क्या करना पड़ता है, कुछ भी तो नहीं जानता। जरा पाँव चलिये, कहकर उसने दोनों पैर पकड़ लिये।

नीलाम्बरने आहिस्तेसे पैर छुड़ाकर कोमल स्वरमें कहा—कुछ डर नहीं है मोती तू चल मैं पीछे आऊँगा।

उसके रोने धोनेके आगे नीलाम्बर अपनी अस्वस्थता की बात न कह सका। सभी तरहके रोगियोंकी सेवा करके इस विषयमें वह इतना अधिक दक्ष हो गया था कि आसपासके गाँवोंमें किसीको भी कोई कठिन रोग होनेपर उसे एक बार दिखाये बिना उसके मुँहसे सान्त्वना और आश्वासनकी वाणी सुने बिना रोगीके आत्मीय स्वजनोंको किसी तरह धीरज न आता था। नीलाम्बर खुद भी यह जानता था। वह यह समझता था कि यहाँके अपढ़ अशिक्षित लोग

वैद्यकी दवाकी अपेक्षा उसके पैरोंकी धूल उसके हाथके पके पानीपर अधिक श्रद्धा रखते हैं इसीलिए वह कभी किसीको विमुख न लौटा सकता था। माली मोहन और एक बार रोकर, और एक बार पैरोंकी धूल देनेकी प्रार्थना करके, आँखें पोंछता हुआ चला गया। नीलाम्बर उद्विग्न होकर सोचने लगा। यद्यपि वह अब भी कुछ कमजोर था, लेकिन सो कुछ नहीं। सोचने लगा कि घरसे बाहर कैसे निकले! विराजसे वह बहुत डरता था। उसके सामने यह बात कैसे जबानपर लाये!

ठीक इसी समय भीतरके आँगनसे हरिमतीने जोरसे पुकारकर कहा—दादा, भाभी भीतर आकर सोनेके लिए कहती हैं।

नीलाम्बरने जवाब नहीं दिया।

क्षणभर बाद ही हरिमती खुद आकर हाजिर हो गई। बोली—सुनाई नहीं पड़ा दादा!

नीलाम्बरने गर्दन हिलाकर कहा—नहीं।

हरिमतीने कहा—यहीं थोड़ा-सा ज्वर लगता था, तबसे यहीं बैठे हो! भाभी कहती हैं—बैठनेकी जरूरत नहीं है, चलकर जरा सो रहो।

नीलाम्बरने धीरेसे पूछा—तेरी भाभी क्या कर रही है पूँटी?

हरिमतीने कहा—अभी-अभी खाने बैठी है।

नीलाम्बर ने पुचकारते हुए कहा—मेरी अच्छी बहन एक काम करेगी?

हरिमतीने सिर हिलाकर कहा—करूँगी।

नीलाम्बरने और भी कोमल आवाजसे कहा—जा चुपकेसे मेरी चादर और छाता तो ले आ।

चादर और छाता!

नीलाम्बरने कहा—हाँ।

हरिमती ऊपर आँखें चढ़ाकर बोली—ना बाबा! भाभी ठीक इसी तरह मुँह किये खाने बैठी हैं।

नीलाम्बरने आखिरी कोशिश करते हुए कहा—तो नहीं ला सकेगी?

हरिमतीने होंठ फैलाकर दो-तीन बार सिर हिलाकर कहा—ना बाबा! मार देगी। तुम चलकर लेटो।

उस समय दिनके दो बजे थे। बाहर तेज धूपकी ओर देखकर छातेके बिना बाहर निकलनेकी बात वह सोच भी नहीं सका। इसलिए हताश होकर, बहनका हाथ पकड़े कोठरीमें आकर बैठ रहा। हरिमती कुछ देरतक अनगल बकती बकती आखिर सो गई। नीलाम्बर चुपचाप पड़कर अपने मनमें तरह-तरहसे आवृत्ति करके देखने लगा कि बातको ठीक किस तरह कह सकनेसे विराजका मन पसीज सकता है।

उस दिन प्रायः ढल चुका था। विराज अपने घरके ठंढ और चिकने सीमेंटके फर्शपर पड़ी हुई, छातीके नीचे एक तकिया दबाये, तन्मय होकर अपने मामा-मामीको चार पन्नोंका एक लम्बा पत्र लिख रही थी कि उसकी कैसे शीतलामाईकी कृपासे गांवमें केवल उसीका घर सुरक्षित बचा है और किस तरह उसकी मांगका सेंदुर और हाथकी चूड़ियाँ बच गई हैं। लिखते लिखते, बराबर लिखते हुए भी यह कहानी समाप्त न होती थी। इसी समय नीलाम्बरने पलंगपरसे ही एकाएक उसे पुकारकर कहा—मेरी एक बात मानोगी विराज?

विराजने दावातमें कलम रखकर सिर उठाकर, पूछा—कहो, क्या बात है?

मानो तो कहूँ।

विराजने कहा—माननेकी होगी तो जरूर मानूँगी। क्या बात है?

नीलाम्बरने थमथम सोचकर कहा—कहनेसे कोई फायदा नहीं विराज, तुम मेरी बात न मान सकोगी।

विराजने फिर प्रश्न नहीं किया। कलम उठाकर पत्रको समाप्त करनेके लिए एक बार फिर झुक गई। पर लिखनेमें मन नहीं लगा सकी। जाननेका कौतूहल भीतर ही भीतर प्रबल हो उठा। वह उठकर बैठ गई।—अच्छा कहो, मैं बात मानूँगी।

नीलाम्बर मुस्करा दिया। फिर कुछ हिचकते हुए बोला—आज बोसदरको मोची आया था और रोते-रोते मेरे पैर पकड़कर बैठ गया। उसे विश्वास है कि उसके घरमें मेरे पैरोंकी धूल पड़े बिना उसका छोकरा नहीं बचेगा। मुझे एक बार जाना होगा।

विराज मुँह ताकती हुई सुन-सी बैठी रही। थोड़ी देरमें बोली—इस रोगी शरीरको लेकर जाओगे?

क्या करूँ विराज, जबान दे चुका हूँ—एक बार मुझे जाना ही पड़ेगा।

जबान क्यों दी?

नीलांबर चुप बैठा रहा।

विराजने स्नेहसे कहा—तुम क्या समझते हो कि तुम्हारा जीवन केवल तुम्हारा ही है, उसमें और किसीको कुछ बोलनेका हक नहीं है? तुम्हारा जो जी चाहे नहीं कर सकते हो?

नीलांबरने बातोंको हलकी बनानेकी गरजसे हँसनेकी चेष्टा की, लेकिन पत्नीका रुख और मुख देखकर वह हँस न सका। किसी तरह कह डाला—मगर उसका रोना देखकर...

विराज बीचमें ही रोक उठी—ठीक तो है! उसका रोना तुमने देखा लेकिन मेरा रोना देखनेवाला भी कोई इस दुनियामें है? यों कहकर उसने उस बार लड़केकी चिट्ठीको टुकड़े-टुकड़े करके फेंकते हुए कहा—भोर से मर्द भी कैसे होते हैं। चार दिन और चार रातें खाना-पीना-सोना छोड़कर बिता दीं—उसका ही यह बदला हाथोंहाथ दे रहे हैं! घर-घर बुखार और हैजा है फिर भी इस रोगी निर्बल देहको लेकर रोगीको देखने-छूने जाते हैं।—अच्छा जाओ मेरे भी भगवान् हैं। यों कहकर फिर एक बार छातीके नीचे तकिया दबाकर वह पड़ रही।

नीलांबरके होठोंपर पहुत हलकी हँसी-सी मुस्कराहट आ गई। उसने धीरेसे कहा—तुम औरतोंको क्या ऐसा भरोसा है कि बात-बातमें भगवानकी दोहाई देती हो?

विराज तेजीसे उठ बैठी और क्रोधके स्वरमें बोली—नहीं, भगवानपर केवल तुम्हें ही भरोसा है हम लोगोंको नहीं। हम कीर्तन नहीं करतीं तुलसीकी माला नहीं पहनतीं मुँह पूछनेको नहीं जातीं इसीसे हम लोगोंको नहीं, बल्कि तुम लोगोंको है।

विराजका क्रोध देखकर नीलांबरको हँसी आ गई। उसने कहा—क्रोध न रो विराज सचमुच ही ऐसा है। केवल एक तुम ही नहीं, सभी ऐसी हैं। भगवानपर भरोसा रखनेके लिए जितना जोर चाहिए, उतना जोर औरतोंकी देहमें ... तुम्हारा क्या दोष है?

विराज और भी झुककर बोली—नहीं। यह दोष क्या आदमीका गुण है। लेकिन अगर शरीरके बलकी ही इतनी जरूरत है तो घोड़े, हाथीके शरीरमें तो और भी अधिक है। खैर, वह बल हो या न हो, तुम चाहे जितनी गरज करो मैं तुमको यह रोगी शरीर लेकर निकलने नहीं दूँगी।

नीलाम्बर चुप होकर लेट गया, फिर कुछ नहीं बोला। विराज भी कुछ देर तक चुप पड़ी रही फिर 'शाम हो गई क्या' कहकर उठ गई। लगभग घंटेभर बाद संध्या-बाती करने कोठरीमें आई तो देखा पति पलँगपर नहीं है। जल्दीसे निकलकर पूँटीको पुकारा। पूछा—पूँटी तेरे दादा कहाँ गये ? बाहर तो बस था।

पूँटी खोजती हुई गई। चार-पाँच मिनटमें हाँफती हुई लौटी। बोली—कहीं नहीं हैं। नदियाके किनारे भी नहीं।

विराज गर्दन हिलाकर बोली—हूँ ! इसके बाद रसोईघरके दरवाजेपर आकर गुमसुम होकर बैठ रही।

३

तीन साल बादकी बात है। हरिमतीको ससुराल गये दो महीने हो गये। छोटा भाई पीताम्बर रहता एक ही घरमें है पर उसका चूल्हा-चौका अलग हो गया है। शामका झुटपुटा है। बाहर चण्डीमण्डपके बरामदेमें एक टूटी चटाईके ऊपर नीलाम्बर चुपका बैठा था। विराज चुपचाप आकर पास खड़ी हो गई। नीलाम्बरने ऊपर देखकर कहा—ऐं, तुम एकाएक यहाँ !

विराजने एक किनारे बैठकर कहा—एक बात पूछने आई हूँ। क्या पूछो !

विराजने कहा—क्या खानेसे मरण हो जाता है, बता सकते हो ?

नीलाम्बर कुछ न बोला।

विराजने कहा—या तो बता दो नहीं तो साफ कहो कि दिन-दिन तुम इस तरह सूखते क्यों जा रहे हो ?

किसने कहा कि सूखता जा रहा हूँ ?

विराजने क्षणभर पतिके मुखपर आँखें टिकाकर कहा—क्या अब कोई बतायेगा तब ही मैं जानूँगी। अच्छा, यह क्या सचमुच अपने मनकी बात कह रहे हो?

नीलांबर जरा हँसा। बात सँभालता हुआ बोला—ना रे, यह बात नहीं है। लेकिन तुमसे बड़ी भूल होती है न, इसी से पूछता हूँ कि यह किसी औरतने तुमसे कह दिया है या तुम आप ही ऐसा समझ बैठी हो?

विराजने इस सवालका जवाब देनेकी कोई जरूरत नहीं समझी। कहा—तुमसे कितना कहा कि मेरी पूँटी का ब्याह ऐसी जगह न करो लेकिन तुमने एक न सुनी। जो कुछ नगदी पास थी वह चली गई, मेरे तन के सब गहने भी चले गये। अब ब्याहके लिए जमीन गिरों रख दी, या बाग बेच डाले। उसपर यह दो सालसे अकाल पड़ रहा है। अब तुम्हीं बताओ, दामादकी पढ़ाई का खर्च महीने महीने कैसे दे सकोगे? अगर ढील हो गई, तो पूँटीको खरी-खोटी बातें सुननी पड़ेंगी। वह अभिमानिनी लड़की है तुम्हारी निन्दा किसी तरह न सुन सकेगी। भगवान् जानें अन्तमें क्याका क्या हो जाय। तुमने ऐसा काम क्यों किया?

नीलांबर मौन बना रहा।

विराज कहती गई—इसके सिवा अब दिन-रात पूँटीका भला करनेके विचारसे उसकी चिन्ता में घुलघुलकर, तुम मेरा भी सर्वनाश कर रहे हो यह मैं न होने दूँगी। इससे तो तुम एक काम करो, दो-चार बीघे जमीन बेचकर चार-पाँच सौ रुपये इकट्ठा करो और गले में कपड़ा डालकर दामादके बापसे कहो कि ये रुपये लेकर मुझे छुटकारा दे दीजिये। हम लोग गरीब हैं इससे अधिक नहीं दे सकते। इससे पूँटीके भाग्यमें अच्छा या बुरा जो कुछ बदा हो सो हो।

फिर भी नीलांबर मौन ही रहा। उसके मुँहकी ओर देखते रहकर विराजने कहा—नहीं कर सकोगे?

नीलांबरने एक लम्बी साँस छोड़कर कहा—कर सकता हूँ। लेकिन अगर सभी कुछ बेच डालेंगे विराज, तो फिर हमारा क्या होगा?

विराज ने कहा—होगा और क्या? जमींदार गिरों रखने और मनमाना

सूद और फिर लांछना सहन करनेसे तो यह कहीं अच्छा है। मेरे कोई बाल-बच्चा तो है ही नहीं, जिसके लिए चिन्ता करूँ। ले देकर हम ही दो प्राणी हैं। किसी तरह गुजर हो जायगा। और अगर बिलकुल ही नहीं हुआ तो तुम [illegible] ठाकुर तो हो ही।

इसके पाँच-छः दिन बाद, रातके दस बजेके समय नीलाम्बर बिछौनेपर लेटा आँखें मूँदे गुड़गुड़ीकी नली मुँहसे लगाये तमाखू पी रहा था। घरका काम-काज निपटाकर विराज शयन करनेके पहले, पलंगपर बैठी अपने लिए खूब बड़ा-सा एक पान लगा रही थी कि एकाएक कह उठी—अच्छा जी शास्त्रकी क्या सभी बातें सच हैं?

हुक्केकी नली एक ओर रखकर नीलाम्बरने पत्नीकी ओर घूमकर कहा—अरे शास्त्रकी बातें सच नहीं तो क्या झूठ हैं?

विराजने कहा—नहीं मैं उन्हें झूठ नहीं कहती। किन्तु क्या पहलेकी तरह आजकल भी वे फलती हैं?

नीलाम्बरने जरा सोचकर कहा—मैं पंडित तो हूँ नहीं विराज। सब बातें भी जानता नहीं। लेकिन मेरी समझमें यही आता है कि सत्य सदा सत्य होता है। सत्य पहले भी सत्य था, और अब भी सत्य है' सदा सत्य रहेगा।

विराजने कहा—अच्छा, सावित्री और सत्यवानकी ही कथाको ले लो। सावित्री मरे हुए स्वामीके प्राण यमराजके हाथसे लौटा लाई। यह क्या सत्य हो सकता है?

नीलाम्बरने कहा—क्यों नहीं हो सकता? जो सावित्रीके समान सती हैं, वह जरूर मरे हुए पतिको लौटा ला सकती हैं।

विराजने बिना किसी हिचकके कह दिया—तब तो मैं भी लौटा ला सकती हूँ।

नीलाम्बर उसकी बात सुनकर हँस पड़ा। बोला—तुम भी क्या उनके समान सती हो? वे तो ठहरे देवता!

पानका डब्बा सरकाकर एक ओर रखते हुए विराजने कहा—हाँ देवता! सतीत्वमें मैं ही भला उनसे काहेमें कम हूँ? मेरी जैसी सती संसारमें आज भी हो सकती है—किन्तु मनसे, और प्राणसे, हम दोनोंसे बढ़कर

कोई है, पर बात मैं नहीं मानती। चाहे सावित्री हो, चाहे कोई और, मैं किसीसे तिलभर भी कम नहीं।

नीलाम्बरने उत्तर नहीं दिया, केवल पत्नीके मुँहकी ओर चुपचाप देखता रहा। विराज सामने दिया रखकर पान लगाने बैठी थी, दीपकका पूरा प्रकाश उसके मुँहपर पड़ रहा था। उसी प्रकाशमें नीलाम्बरको स्पष्ट देख पड़ा कि विराजकी आँखोंमें एक अद्भुत पवित्र ज्योति फूटी पड़ रही है।

नीलाम्बरने डरते-डरते कह डाला—तो जान पड़ता है, तुम भी कर सकोगी।

विराज उठी और पतिके पैरोंपर माथा रखकर बोली—तुम यही आशीर्वाद दो कि अगर होश सँभालनेके बाद इन दोनों चरणोंके सिवा मैंने और कुछ न जाना हो और मैं अगर यथार्थमें सती हूँ तो बुरा समय आनेपर मैं भी उन्हीं (सावित्री) की तरह तुमको लौटा ला सकूँ और उसके बाद इन्हीं चरणोंपर सिर रखकर मर सकूँ—यह माथेका सिन्दूर और हाथोंकी चूड़ियाँ पहने हुए ही चितापर सो जाऊँ।

नीलाम्बर व्यस्त होकर उठ बैठा और बोला—आज तुमको यह क्या हो गया है विराज?

विराजकी दोनों आँखें छलछला रही थीं। फिर भी उसके होठोंपर बहुत ही मीठी और कोमल हँसी आ गई। उसने कहा—यह फिर कभी सुनना, आज नहीं। आज तो केवल आशीष दो कि मरते समय मुझे इन दोनों चरणोंकी धूल मिले और मैं तुम्हारी गोदमें सिर रखकर, तुम्हारा मुँह देखती हुई मर सकूँ। आगे वह कुछ बोल न सकी उसका गला रुँध गया।

नीलाम्बरने डरकर, उसे खींचकर अपनी छातीसे लगा लिया और कहा—आज क्या हुआ है तुम्हें! क्या किसीने कुछ कहा है!

अपने पतिकी छातीपर मुँह रखकर विराज चुपचाप रोने लगी, कुछ उत्तर नहीं दिया।

नीलाम्बरने फिर कहा—और कभी तो तुमने ऐसा नहीं किया, विराज क्या हुआ है कुछ कहो न!

विराजने चुपचाप अपने आँसू पोंछ लिये सिर नहीं उठाया। मृदु स्वरमें इतना ही कहा—फिर किसी दिन सुनना।

नीलांबरने फिर जोर नहीं दिया। उसी तरह बैठे-बैठे उसके बालोंमें धीरे धीरे उँगली चलाते हुए चुपचाप उसे सान्त्वना देने लगा। छोटीके विवाहमें विराज बाहर सब कर डालनेके कारण वह कुछ उलझनमें पड़ गया था और अब पहलेकी तरह गृहस्थीका काम नहीं चल पाता था। उसपर दो सालसे लगातार अकाल पड़ रहा था। कोठीमें धान नहीं पोखरमें पानी नहीं, मछली नहीं। केलेका बाग सूखता जा रहा था। बागमें कच्चे नीबू सूखकर झरे जा रहे थे। ऊपरसे देनदारोंने तगादेके लिए आना-जाना शुरू कर दिया था। उधर पूँटीके ससुर भी लड़कीकी पढ़ाईके खर्चके लिए कुछ मीठी, कुछ कड़वी चिट्ठियाँ भेज रहे थे। विराज यह सब जानती न थी। कितने ही न कहनेवाले अप्रिय समाचार बड़ी कोशिशसे नीलांबरने छिपा रखे थे। इस समय वह उद्विग्न होकर सोचने लगा—जान पड़ता है, किसीने वे सब बातें विराजसे कह दी हैं।

विराज एकाएक मुँह ऊपर उठाकर मुसकराई और बोली—अच्छा, एक बात पूछूँ, सच-सच बताओगे?

नीलांबरने मन ही मन बार अधिक शंकित होकर कहा—कौन-सी बात?

विराजकी सबसे बड़ी सुन्दरता उसके मुखकी मनोहर हँसी थी। एक बार फिर वही हँसी हँसकर नीलांबरके मुखकी ओर देखती हुई वह बोली—अच्छा, मैं काली-कुरूप तो नहीं हूँ।

नीलांबरने सिर हिलाकर कहा—नहीं।

विराजने पूछा—अगर मैं काली-कुत्सित होती, तो क्या तुम मुझे इतना चाहते—इतना प्यार करते?

यह अद्भुत प्रश्न सुनकर यद्यपि वह कुछ विस्मित हुआ तथापि उसकी छातीपरसे जैसे एक भारी बोझ सहसा उतर गया।

उसने प्रसन्न होकर हँसते हुए कहा—मैं तो बचपनसे एक परम सुन्दरीको ही प्यार करता आया हूँ। अब इस समय कैसे बताऊँ कि वह अगर काली कुत्सित होती तो क्या करता?

विराजने दोनों हाथ पतिके गलेमें डाल दिये और और भी पास मुँह ले आकर कहा—मैं कहती हूँ कि तुम क्या करते? तब भी तुम मुझे ऐसे ही प्यार करते।

फिर भी नीलांबर उसके मुखको चुपचाप देखता रहा।

नीलाम्बरने कहा—तुम क्या सोच रहे हो कि यह मैंने कैसे जान लिया [illegible]?

[illegible] धीरे-धीरे बोला—नहीं सोच रहा हूँ कि तुमने कैसे जान लिया।

विराज दीपक रख छोड़कर, उसकी छातीपर एक तरफ सिर रखकर लेट गई और उसकी ओर ताकती हुई आँखोंसे देखो—मेरा मन मुझे बता देता है। मैं तुमको जितना पहचानती हूँ उतना तुम खुद भी अपनेको नहीं पहचानते। इससे जानती हूँ कि तुम तब भी मुझे ऐसे ही प्यार करते। जो अन्याय है, जिससे पाप होता है, वह तुम कभी नहीं कर सकते। अपनी स्त्रीको प्यार न करना अन्याय है—पाप है। इसीसे मैं जानती हूँ कि अगर मैं कानी-कुबड़ी भी होती, तो भी तुमसे इतना ही प्यार-दुलार पाती।

नीलाम्बरने कोई जवाब नहीं दिया।

इस बार सिर उठाकर विराजने एकाएक हाथ बढ़ाकर अनुमानसे स्वामीकी आँखोंके कोनोंको देखा और फिर कहा—यह आँखोंमें आँसू क्यों?

नीलाम्बरने प्रेमसे उसका हाथ हटाकर भारी गलेसे कहा—कैसे जाना?

विराजने कहा—तुम क्यों भूल जाते हो कि नौ वर्षकी अवस्थामें मेरा ब्याह हुआ था? यह क्यों भूल जाते हो कि तुमको पानेके बाद मैंने तुमको पाया है? अपने देवताके हाथ देकर भी क्या नहीं जान पाती कि मैं भी उसमें मिल गई हूँ?

[illegible] यहीं की। उसकी बन्द आँखोंके कोनोंसे बूँद-बूँद करके [illegible] बहे।

[illegible] बड़े प्रेमके साथ अपने आँचलसे सावधानीके साथ पतिके [illegible] स्वरमें कहा—तुम चिन्ता न करो। बाबूजी मरते समय [illegible] गई हैं। पूँटीके ब्याहकी बाधा करके तुमने जो ठीक [illegible] नहीं किया है। माँ स्वर्गसे हमको आशीर्वाद देंगी। तुम अच्छे [illegible] कर्जके बोझसे छुटकारा पा जाओगे इसमें हमारा सबका [illegible]।

[illegible] आँखोंको पोंछता हुआ बैठ गया और बोला—तुम नहीं जानतीं विराज

कि मैंने क्या किया है—मैंने तुम्हारा"

विराजने आगे कहने नहीं दिया। पतिका मुँह हाथसे बन्द करके बोल उठी—मैं सब जानती हूँ। और कुछ जानूँ या न जानूँ, यह निश्चय जानती हूँ कि तुमको बीमार न पड़ने दूँगी। ना यह न होगा। जिसका जो पावना हो वह दे दो देकर निश्चिन्त हो जाओ। फिर इसके बाद सिरके ऊपर भगवान् हैं और पाँवोंके नीचे मैं हूँ।

नीलाम्बर लम्बी साँस लेकर चुप हो गया।

४

छ महीने और भी गुजर गये। पूँटीका ब्याह होनेके पहले ही छोटा भाई जमीन-जायदादका बटवारा कराकर अलग हो गया था। नीलाम्बरके हिस्सेमें जो आया था उसका कुछ हिस्सा उसी समय गिरवीं रखकर कर्ज लेना पड़ा था। कहनेकी जरूरत नहीं कि पीताम्बरने एक पैसेकी भी सहायता नहीं की। बाकी जो कुछ जमीन और पूँजी बची, उसे नीलाम्बर एकके बाद एक गिरवीं रखकर बहनोईकी पढ़ाईका खर्च जुटाने लगा और गृहस्थी चलाने लगा। इस प्रकार वह दिन-दिन अपनेको अथाह नाग-पाशमें जकड़ता गया। लेकिन ममताके मारे वह अपनी बाप-दादोंकी जायदादको किसी तरह एकदम नहीं बेच सका।

आज तीसरेपहर उस मोहल्लेके भोलानाथ मुकर्जी बाकी ब्याजके लिए कुछ कड़ी बातें कह गये। आड़में खड़ी विराजने वह सब सुना। नीलाम्बर जैसे ही भीतर आया वह चौकेसे निकलकर चुपचाप उसके सामने आकर खड़ी हो गई। उसके चेहरेको देखते ही नीलाम्बर सहम उठा। अपमान और क्षोभसे विराजके हृदयमें आग-सी जल रही थी। लेकिन इस भावको दबाकर पलंगकी ओर उँगलीसे इशारा करके, अत्यन्त गम्भीर स्वरमें उसने कहा—वहाँ बैठो।

नीलाम्बर पलंगपर बैठ गया। विराज भी उसके पैरोंके पास नीचे बैठ गई। बोली—देखो, आज या तो कर्ज चुकाकर मुझे उरिन करो नहीं तो मैं आज तुम्हारे पैर छूकर कसम खा लूँगी।

नीलाम्बर समझ गया कि विराजने सब बातें सुन ली हैं। इसीसे मधुर स्वरसे

हुए, फौरन् झुककर उसका मुँह अपना हाथ रखकर बंद कर दिया और खींचकर उसे अपने पास बिठाते हुए स्निग्ध कण्ठसे कहा—छि: विराज, साधारण बातोंमें ही इस तरह आपेसे बाहर न हो जाया करो।

अपने मुँहपरसे पतिका हाथ हटाकर विराजने कहा—अगर इससे भी आदमी आपेसे बाहर नहीं होता है तो फिर काहेसे होता है बताओ!

नीलाम्बरको एकाएक इसका कुछ जवाब नहीं सूझा। वह चुप बैठा रहा।

विराजने कहा—चुप क्यों रह गये! जवाब दो।

नीलाम्बरने धीरेसे कहा—जवाब देनेको कुछ भी नहीं है विराज। लेकिन

विराज बीचमें ही रोककर कह उठी—ना लेकिन-वेकिनसे काम नहीं चलेगा। यह भरोसा कभी न रखना कि मेरे ही घरमें खड़े होकर लोग तुम्हारा अपमान कर जायँगे और मैं अपने कानोंसे सुनकर सह लूँगी। या तो आज इसका कोई उपाय करो नहीं तो मैं अपनी जान दे दूँगी।

नीलाम्बरने डरते-डरते कहा—एक ही दिनमें इसका क्या उपाय करूँगा विराज!

विराजने कहा—अच्छा दो दिनके बाद ही क्या उपाय करोगे, जरा मुझे समझाओ!

नीलाम्बर चुप हो रहा।

विराजने कहा—कभी पूरी न हो सकनेवाली आशा करके अपनेको बहलाने-की कोशिश न करो इस तरह मेरा सत्यानाश न करो। जितने दिन बीतेंगे, उतना ही तुम इस कर्जके फन्देमें अपनेको जकड़ते जाओगे। मैं तुम्हारी दुहाई देती हूँ तुमसे भीख माँगती हूँ तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ अभी, इसी घड़ी इसका कोई उपाय करो छुटकारेकी कोई राह निकालो।

यह कहते-कहते आँसुओंसे उसका गला भर आया। भोला मुखर्जीकी बातें उसकी छातीमें शूल-सी चुभने लगीं।

अपने हाथसे उसके आँसू पोंछते हुए नीलाम्बरने धीरेसे कहा—इस तरह अधीर होनेसे क्या होगा विराज! अगर एक साल पूरा फसल हो गई तो मैं अपनी थोड़ी-बहुत जायदाद छुड़ा ले सकूँगा। लेकिन मेरा ख्याल है ऐसा न हो सकेगा—यह तो सोचो।

विराजने गीत गहन कहा—सोच लिया है। एक तो अगले साल फसल ठीक-ठीक होनेका ही क्या भरोसा है? उसपर ब्याजका भार है और लेनदारोंका बड़ा तगादा है। मैं सब सह सकती हूँ, लेकिन तुम्हारा अपमान नहीं सह सकती!

नीलाम्बर आप भी इसे अच्छी तरह जानता था, इसीसे कुछ जवाब नहीं दे सका।

विराजने फिर कहा—मुझको क्या एक यही दुःख है? दिन-रात सोच करते करते तुम मेरी आँखोंके सामने ही सूखते जा रहे हो। यह सोचनेकी देर काफी पड़ती जा रही है!—अच्छा मेरी देहपर हाथ रखकर तुम्हीं कहो, क्या इतना सहनेकी शक्ति मुझमें है! छोटीनकी पढ़ाईका खर्च और कबतक देना पड़ेगा!

नीलाम्बरने कहा—बस एक साल और। इसके बाद वह डाक्टर हो जायगा।

क्षणभर चुप रहकर विराजने कहा—हमने पूँटीको पाल-पोसकर आदमी बनाया है वह राजरानी बने। लेकिन अगर पहले मालूम होता कि उसके कारण इतना दुःख सहना पड़ेगा तो उसे बचपनमें ही नदीमें बहा देती, माँ अपने सिरपर गाज न गिराती। हे भगवान्! वे लोग बड़े आदमी हैं, उन्हें कोई कष्ट नहीं है, कोई कमी नहीं है। तब भी जोंककी तरह हमारे कलेजेका खून चूसते उन्हें तनिक भी दया नहीं आती—तरस नहीं आता!

इतना कहकर, एक गहरी लम्बी साँस छोड़कर वह चुप-सी हो रही। बोली—चारों ओर अभाव है चारों ओर अकालकी काली छाया है! आँखोंसे कितने ही दुःखी दीन गरीबोंके घर्ष होने लगे हैं कितने ही लोग एक दम खाने जा रहे हैं। ऐसे बुरे समयमें हम लोग पराये लड़केको क्यों पढ़ा-लिखाकर आदमी बनायेंगे? पूँटीके ससुरके कोई कमी नहीं है, वह बड़े आदमी हैं। वह अगर अपने लड़केको नहीं पढ़ा सकते तो हम क्यों पढ़ायें? जो हुआ सो हुआ, अब तुम इसके लिए कर्ज न ले सकोगे।

बड़े कष्टसे होठोंपर सूखी हँसी लाकर नीलाम्बरने कहा—सब समझता हूँ विराज! मगर मैंने शालिग्रामजीके सामने कसम खाकर जो प्रतिज्ञा की है, उसका क्या होगा!

विराज तुरन्त कह उठी—कुछ भी न होगा। शालिग्राम अगर सचमुच देवता हैं

तो वह हमारा कष्ट जरूर समझेंगे। फिर मैं भी तो तुम्हारा आधा अंग हूँ। ऐसा करनेसे अगर कुछ पाप-दोष होगा तो उसे अपने सिर-आँखोंपर लेकर जन्म-जन्मान्तरतक नरक भोग लूँगी, मुझे कोई डर नहीं है। अब तुम कर्ज न लो।

धर्मात्मा स्वामीके हृदयमें जो घोर दुःख था वह विराजसे तनिक भी छिपा नहीं था। लेकिन अब वह अधिक न सह सकती थी। वास्तवमें पति ही उसका सर्वस्व था। उसी पतिके दिन-रातकी चिन्तासे सूखे हुए उदास मुखकी ओर देखकर उसका हृदय विदीर्ण होता था। वह अभीतक किसी तरह सफाई देकर बात कर रही थी, लेकिन अब न कर सकी। तेजीसे पतिकी छातीमें मुँह छिपाकर फूट-फूटकर रोने लगी।

दाहिना हाथ विराजके सिरपर रखकर नीलाम्बर चुपचाप पत्थरकी मूर्ति-सा निश्चल होकर बैठा रहा। देरतक रोनेके बाद विराजके दुःसह दुःखकी तीव्रता घटने लगी। तब वह वैसे ही पतिकी छातीमें मुँह छिपाये रोते रोते बोली—बचपनसे लेकर अबतककी मुझे याद है, कभी तुम्हारा मुँह उतरा या सूखा नहीं दिखाई पड़ा, कभी तुमको मुँह फुलाये नहीं देखा। पर अब तुम्हारे मुँहकी तरफ देखते ही मेरे कलेजेमें पावककी चिता जलने लगती है। तुम अपना खयाल न करो तो जरा मेरी ही तरफ एक बार निहार देखो। अन्तमें क्या तुम सचमुच मुझको राहकी भिखारिन बना जाओगे! और यह क्या तुम सहन कर सकोगे!

फिर भी नीलाम्बर कुछ जवाब न दे सका। अनमनेकी तरह धीरे-धीरे पत्नीके सिरपर हाथ फेरने लगा—उसके केशोंमें उँगलियाँ चलाने लगा। इसी समय द्वारके बाहरसे ही उसकी पुरानी दासी सुन्दरीने पुकारकर कहा—बहूरानी, चूल्हा जला दूँ क्या!

विराज हड़बड़ाकर उठ बैठी। आँचलसे मुँह और आँखें पोंछकर कोठरीके बाहर निकल आई।

सुन्दरीने फिर पूछा—चूल्हा जला दूँ!

विराजने अलस स्वरमें कहा—जला दे, तुम लोगोंके लिए खाना बनाना पड़ेगा, मैं तो अब कुछ न खाऊँगी।

दासीने और लोगकी आवाजमें, नीलाम्बरको सुनाकर कहा—हाय बहू तो

क्या तुमने रातका भोजन बिलकुल बन्द कर दिया ? न खाकर आधी तो रख गई हो।

विराज हाथ पकड़कर उसे खींचती हुई चौकेकी तरफ ले गई।

चूल्हेकी रोशनी विराजके मुखपर पड़ रही थी। थोड़ी दूरपर बैठी दासी आँखें फाड़ उसकी ओर निहार रही थी। एकाएक कह उठी—सच कहती हूँ बहूरानी, तुम्हारा जैसा रूप मैंने किसी मनुष्यमें कहीं नहीं देखा। ऐसा रूप तो बड़े-बड़े राजे महाराजोंके यहाँ भी नहीं है।

उसकी ओर मुँह करके कुछ बिगड़कर विराजने कहा—तू क्या राजे महाराजोंकी भी खबर रखती है ?

सुन्दरीकी अवस्था लगभग १५-१६ बरसकी थी। किसी जमानेमें वह भी सुन्दरी कही जाती थी और उसकी वह सौन्दर्य आज भी एकदम मिट नहीं गया है।

वह कहती—उसे कुछ भी याद नहीं कि कब उसका ब्याह हुआ और कब विधवा हो गई। लेकिन सोहागिनके सौभाग्यसे वह बिलकुल ही वंचित नहीं हुई, उसके गाँव कृष्णपुरमें उसकी यह सुकीर्ति फैली हुई है। उसने हँसकर कहा—राजे रजवाड़ोंकी कुछ न कुछ खबर तो रखती ही हूँ बहूरानी। नहीं तो उस दिन झाड़ूसे पूजा न कर देती।

अबकी विराज सचमुच ही क्रोधित हो उठी। बोली—तू जब तब यही बातें क्यों किया करती है सुन्दरी ! उसने जो भी ज्यादा कहा। इसके लिए तू क्यों झाड़ू मारती ! और मुझको ही तू क्यों बेकार सुनाती है ! वह क्रोधी आदमी हैं, सुन पावेंगे तो क्या कहेंगे, बोल !

सुन्दरी कुछ हँसकर बोली—बाबूजी सुन ही क्यों पावेंगे बहूरानी ! यह भी कोई बातमें बात है !

विराजने कहा—बातमें बात नहीं है यह क्या मुझे तू समझावेगी ! इसके लिए जो हो-हवाकर समाप्त हो गया उसकी बात उठानेकी जरूरत ही क्या है !

सुन्दरी झट्से कह उठी—कहाँ हो-हवा गया बहूरानी। अब भी तो मुझे दुख है आखिर

विराजने क्रोधित होकर कहा—तू गई ही क्यों ! नौकरी मेरे यहाँ करेगी और

जो कोई कुम्भमेला उसके पास दौड़ी आयगी ! तूने ही तो कहा था कि उस दिन ये लोग कलकत्ते चले गये !

सुन्दरीने कहा—सच ही तो कहा था बहूरानी । दो महीने हुए वे चले गये थे, लेकिन अब देखती हूँ फिर आ गये हैं । और मेरे जानेकी बात जो कहती हो बहूरानी, दो सिपाही बुलाने आता है तब 'नहीं' कैसे कर दूँ ! इस गाँवके यह जमींदार हैं और हम लोग हैं दुखी परजा । किस बलपर उनका हुकुम न मानूँ !

विराज क्षणभर सुन्दरीकी ओर ताकती रही, फिर बोली—ये क्या इस गाँवके जमींदार हैं ?

सुन्दरीने हँसकर कहा—हाँ बहूरानी । यह इलाका उन्होंने ही खरीदा है और यहीं तम्बू लगाकर ठहरे हैं । सच कहती हूँ बहूरानी, सचमुच राजकुमार हैं । आह कैसा सुन्दर नाक-नक्शा है ! आँखें चेहरा

विराज एकाएक रोककर बोली—ठहर-ठहर, चुप रह । यह सब तो मैंने तुझसे नहीं पूछा । यह बता कि तुझसे क्या कहा ?

अबकी सुन्दरी मनमें जल उठी लेकिन उस भावको छिपाकर धीमे स्वरमें बोली—बात और क्या होगी बहू वही तुम्हारी ही बात !

'हूँ' कहकर विराज चुप हो रही ।

यहाँपर बात जरा स्पष्ट देनी होगी । दो साल पहले यह इलाका कलकत्तेके एक जमींदारके हाथ आया । जमींदारका छोटा बेटा राजेन्द्रकुमार बड़ा बदचलन और उद्दण्ड है । उसके बाप उसे जमींदारीके काम-काजमें शिक्षित और संयत करनेके लिए, खासकर कलकत्तेके बाहर रखनेकी मंशासे, यहाँके ही किसी इलाकेमें भेजना चाहते थे । फलतः वह यहाँ आया लेकिन कचहरीका मकान न होनेसे सप्तग्रामके उस पार, मांटक घेरके किनारे एक आमके बागमें तम्बू गाड़कर रहता था । लेकिन जिस दिन वह यहाँ आया उस दिनसे किसी काम-काजके पास भी नहीं फटका । उसे पक्षियोंका शिकार करना रुचता था । ह्विस्कीकी बोतल पीठपर बाँधे बन्दूक कन्धेपर रख चार पाँच शिकारी कुत्ते साथ लिये वह सारे दिन नदीके किनारे किनारे जंगलमें चिड़ियोंका शिकार करता फिरता था । छः महीने हुए, एक दिन सन्ध्याके समय, गोधूलि-वेलाकी सुनहली आभासे अनुरंजित, भीगी धोती पहने विराजके ऊपर उसकी नजर पड़ गई । विराजने घरके

पालकी पर चार कहारों ओरसे बड़े-बड़े और घने दरख्तोंसे ढका होनेके कारण किसी तरफसे दिखाई नहीं देता था। बैसाखके नहा-धाकर, पानीसे भरा घड़ा उठाकर विराजने जैसे ही आखें ऊपरको उठाई कि इस अनजानी आदमीसे उसकी चार आँखें हो गईं। राजेन्द्र पक्षियोंकी खोज करते-करते इस तरफ आया था। पासके ही समाधि-स्तूपपर खड़े होकर उसने विराजको देखा। उसे जैसे एकाएक यह विश्वास नहीं हुआ कि मनुष्यके भी इतना रूप होता है। वह इस ओरसे आँखें न फेर सका। चित्र-लिखित-सा टकटकी लगाकर, इस अतुल, असीम रूपराशिको मग्न होकर निहारने लगा। विराज किसी तरह भीगी धोतीसे बदन निबारण करके तेजीसे चल पड़ी। राजेन्द्र लकड़ीमें आकर कुछ देर और भी खड़ा रहा फिर धीरेसे बैठ गया। वह यही सोचते-सोचते गया कि यह कैसे सम्भव हुआ? इस जंगलके बीच, इस छोटेसे गाँवमें, जहाँ कोई भला आदमी नहीं रहता इतना अद्भुत रूप कैसे और कहाँसे आ गया! इस अपरूप सौन्दर्यमयीका परिचय भी उसी रातको उसने पता लगाकर प्राप्त कर लिया और उसी घड़ीसे उसके हृदयमें एक बड़ी चिन्ता घर कर गई, दूसरा कोई ख्याल ही नहीं रहा। इसके बाद और भी दो दफे विराजसे उसका सामना हुआ।

उस दिन विराजने घर पहुँचकर सुन्दरीको बुलाकर कहा—घाटपर तो जा सुन्दरी, वहाँ पीर साहबके मजारपर कोई आदमी खड़ा है, उसे मना कर दे कि फिर कभी हमारी बगियामें पैर न रखे।

सुन्दरी मना करने गई, लेकिन पास पहुँचते ही हतबुद्धि हो गई। बोली—बाबूजी आप!

राजेन्द्रने सुन्दरीके मुँहकी ओर देखकर पूछा—तुम मुझे पहचानती नहीं?

सुन्दरीने कहा—बाबूजी आपको भला कौन नहीं पहचानता!

जानती हो, मैं कहाँ रहता हूँ?

सुन्दरीने कहा—जानती हूँ।

राजेन्द्र बोला—क्या आज एक बार वहाँ आ सकती हो?

सुन्दरीने लज्जा देखसे सिर झुकाकर धीरेसे पूछा—किसलिए बाबूजी?

कुछ काम है, जरा आना। यों कहकर बन्दूक कन्धेपर रखकर, वह चला गया।

इसके बाद कितनी ही दफे सुन्दरी छिपकर, समारेमें उस पारकी जमींदार कचहरीमें गई है कितनी ही बातें की हैं, मगर वहाँसे लौट आकर एक आध इशारेके सिवा वह कोई भी बात विराजके सामने उठानेकी हिम्मत नहीं कर सकी। सुन्दरी कुछ बेवकूफ न थी। वह विराजको पहचानती थी और अच्छी तरह जानती थी कि यह बहू बाहरसे चाहे कितनी मधुर और कोमल दिखाई देती हो, लेकिन इसकी भीतरकी प्रकृति बड़ी उग्र और पत्थरके समान है। विराजकी देहमें एक चीज और थी—वह था उसका कठिन अपरिमेय साहस। चाहे आदमी हो, चाहे साँप-बिच्छू और चाहे भूत-प्रेत, भय किसे कहते हैं वह जानती ही न थी। एक कारण यह भी था, जिससे सुन्दरी उसके सामने मुँह न खोल सकी थी।

चूल्हेके भीतर लकड़ी सरकाकर, सुन्दरीकी ओर मुँह करके विराजने कहा—अच्छा सुन्दरी तू तो कितनी ही बार वहाँ गई-आई है, कितनी ही बातें भी की हैं लेकिन मुझे तो तूने एक भी बात नहीं बताई।

सुन्दरी पहले तो हतबुद्धि हो गई लेकिन फौरन ही सँभलकर बोली—तुमसे किसने कहा बहूरानी कि मैं बहुत-सी बातें कर आई हूँ?

विराजने कहा—किसीने नहीं—मैं आप ही जानती हूँ। मेरे सिरमें पीछेकी ओर और भी दो आँखें, दो कान हैं न! बता कुछ इनाममें तू कितने रुपये लाई है? दस रुपये?

सुन्दरीके मुँहसे बोल नहीं निकला। उसके चेहरेपर एक फीकी छाया-सी छा गई। चूल्हेकी धुँधली रोशनीमें भी विराजने उसे देख लिया और यह भी समझ गई कि सुन्दरीको कोई जवाब नहीं सूझ रहा है।

विराजने कुछ मुसकराकर कहा—सुन्दरी तेरा इतना बड़ा कलेजा नहीं हो सकता कि तू मेरे सामने मुँह खोलकर कुछ कह सके। तू क्यों बेकार आ-जाकर, रुपये लेकर, अन्तमें बड़े आदमीके क्रोधका शिकार बनना चाहती है? अब कलसे इस घरमें पैर न रखना। तेरे हाथका पानी पैरोंपर डालनेमें भी मुझे घिन मालूम होती है। इतने दिन तेरी सब बातें नहीं जानती थी, पर दो दिन पहले वह भी सुन ली है। जा तेरे आँचलमें जो दस रुपयेका नोट बँधा है यह जाकर फेर आ। गरीब है कहीं काम धंधा करके पेट पाल ले। अपनी जवानीमें जो कर चुकी

है यह तो फिर नहीं सकता लेकिन अब चार आदमियोंका सर्वनाश न कर।

सुन्दरी कुछ कहना चाहती थी, परन्तु उसकी जीभ मुँहमें ही लड़खड़ाकर रह गई।

यह भी विराजने देख लिया। देखकर कहा—झूठ बोलनेसे अब क्या होगा? ये सब बातें मैं किसीसे नहीं कहूँगी। पहले मैं नहीं समझती थी कि तेरे आँचलमें बँधा यह नोट कहाँसे आया; पर अब सब समझ गई हूँ। जा, आजसे तुझे जवाब दे दिया, कलसे मेरे घरमें न घुसना।

यह क्या! सुन्दरी घोर विस्मयसे अवाक् होकर बैठी रही। इस भयसे उसका दाना-पानी उठ गया यह उसकी समझमें एक असम्भव बात थी और उसके मनमें किसी तरह नहीं बैठती थी। यह बहुत दिनोंकी दासी है। उसने विराजका ब्याह देखा है, पूँटीको पाल-पोसकर बड़ा किया है, घर मालकिनके साथ तीर्थयात्रा कर आई है। वह भी इस परिवारकी एक व्यक्ति है। आज उसीको विराजने घरमें न घुसनेको कह दिया। क्षोभ और अभिमानसे उसका गला भर आया। क्षण-भरमें कितनी ही तरहके जवाब, कितनी ही बात उसकी जबानपर दौड़ आईं, लेकिन मुँहसे एक शब्द भी न निकाल सकी, विह्वल-सी होकर ताकती रह गई।

विराजने मन-ही-मन सब समझ लिया। लेकिन वह चुप ही रही। मुँह फिराकर देखा, पतीलीका पानी जलकर कम हो गया है। पास ही एक पीतलकी कलसीमें पानी था। लोटा लेकर उसके पास गई। लेकिन न जाने क्या सोचकर क्षणभरमें स्थिर होकर लोटा रख दिया और कहा—ना तेरे हाथका पानी छूनेसे भी उनका *अनिष्ट-अमंगल होगा। तूने इसी हाथसे रुपये लिये हैं।*

सुन्दरी इस तिरस्कारका भी जवाब न दे सकी।

विराजने एक दूसरी लालटेन जलाई फिर कलसी उठाकर रातके घनघोर अन्धकारमें, यह आमके बागानके भीतर होकर अकेले ही नदीसे पानी लानेके लिए चल दी।

विराजके चले जानेपर एक बार सुन्दरीके मनमें आया कि वह भी उसके पीछे-पीछे जाय लेकिन वह अन्धकारपूर्ण ऊँची बाँसकी राह, चारों ओरकी प्राचीर, श्मशानके जाने-अजाने समाधि-स्तूप, वह पुराना बरगदका वृक्ष, ये सब दृश्य उसकी आँखोंके आगे फिर गये। मारे डरके उसके रोंगटे खड़े हो गये, सिरके

एकाएक काँप उठे—अस्फुट भाषामें 'अरी मैयारी' कहकर वह स्तम्भ होक
बैठी रही।

५

दो दिन बाद नीलाम्बरने पूछा—सुन्दरी नहीं दिखाई पड़ती विराज ?

विराजने कहा—मैंने उसे जवाब दे दिया है।

नीलाम्बरने परिहास समझकर कहा—अच्छा किया। लेकिन बताओ त
उसे हुआ क्या है ?

विराजने कहा—होगा क्या, मैंने सचमुच ही उसे छुड़ा दिया है।

फिर भी नीलाम्बर इस बातपर विश्वास नहीं कर सका। बहुत ही अचंभे
आकर, उसके मुँहकी ओर ताकते हुए बोला—उसको कैसे छुड़ा दोगी! च
कितना ही कसूर करे, यह भी तो खयाल करो कितने दिनोंकी पुरानी दासी है
उसने क्या किया था ?

विराजने कहा—मैंने अच्छा समझकर ही छुड़ा दिया है।

नीलाम्बरने कुछ चिढ़कर कहा—यही तो पूछता हूँ कि कैसे अच्छा समझा

विराज स्वामीके मनोभावको समझ गई। चुपचाप क्षणभर उनका मुँह ताकत
रही, फिर बोली—मैंने अच्छा समझा, छुड़ा दिया। अब तुम अच्छा समझो त
बुला लाओ। कहकर, उत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना ही वह चौकेमें चली गई।

नीलाम्बरने समझा कि विराज चिढ़ गई है, इसलिए फिर कुछ नहीं कहा।
कोई घण्टे भर बाद लौटकर, दरवाजेके बाहर खड़े होकर धीरेसे कहा—तुमने
छुड़ा तो दिया लेकिन काम कौन करेगा ?

अबकी विराज मुँह फेरकर हँस दी। उसके बाद बोली—तुम !

नीलाम्बरने भी हँसकर कहा—तो लाओ जूठे बरतन मल-धो डालूँ।

हाथकी करछी सामने फेंक, हाथ धोकर, पास आकर पतिके चरणोंकी रज
मस्तकमें लगाकर विराजने कहा—तुम यहाँसे जाओ। जरा-सी हँसी करना भी
है। सुनते ही ऐसी बात कह उठते हो, जिसे कानसे सुनना भी पाप
है।

नीलाम्बरने कुछ झेंपकर कहा—यार, यह भी कानसे सुननेसे पाप होता है! समझमें नहीं आता विराज, कि तुम्हें काहेसे पाप नहीं होता है।

विराजने कहा—तुम सब समझते हो। न समझते तो इतने काम रहते झूठे बर्तनोंकी ही बात न उठाते।—जाओ, देर न करो, स्नान कर आओ, रसोई तैयार हो गई है।

नीलाम्बर दरवाजेकी चौखटपर बैठ गया और बोला—सचमुच कहा विराज, घरका काम-धंधा कौन करेगा?

विराज आँख उठाकर बोली—काम है कहाँ? पूँजी नहीं है, छोट कसम भी नहीं है। काम न रहनेसे मैं भी सारे दिन बैठी रहती हूँ। अच्छी बात है, काम न चलेगा तब तुमसे कह दूँगी।

नीलाम्बरने कहा—ना विराज, यह न होगा। नौकर-दासीका काम है? तुमको नहीं करने दे सकता। सुन्दरीने कोई कसूर नहीं किया, केवल [illegible] बचानेके लिए तुमने उसे अलग कर दिया है। बोलो सच है कि नहीं?

विराजने कहा—ना, सच नहीं है। उसने सचमुच अपराध किया है।

नीलाम्बरने पूछा—क्या अपराध?

विराजने कहा—यह मैं नहीं बताऊँगी।—जाओ, बैठे न रहो, स्नान कर आओ।

इतना कहकर विराज भी दरवाजेसे बाहर हो गई। थोड़ी देर बाद लौट आकर, नीलाम्बरको उसी तरह बैठे देखकर बोली—क्यों, गये नहीं? अभीतक बैठे हो?

नीलाम्बरने कोमल स्वरमें कहा—जाता हूँ, लेकिन विराज, यह तो मुझसे बरदाश्त न हो सकेगा। मैं तुमको उंछवृत्ति कैसे करने दूँगा?

यह सुनकर विराज कुछ प्रसन्न नहीं हुई। क्षणभर पतिकी ओर देखकर बोली—क्या करोगे, जरा सुनूँ?

नीलाम्बरने कहा—देखो, सुन्दरीको नहीं रखना चाहती तो और किसीको रख लो। तुम घरमें अकेली कैसे रहोगी?

विराजने कहा—चाहे जैसे रहूँ, मगर अब किसीको नहीं रखूँगी।

नीलाम्बरने फिर भी कहा—नहीं, यह न होगा। बराबर [illegible]

मान-अपमान भी है। मोहल्लेके लोग सुनकर क्या कहेंगे !

विराज कुछ व्यग्रतासे बैठ गई। बोली—मोहल्लेके लोग सुनकर क्या कहेंगे, असलमें तुम्हें यही डर है। मैं कैसे रहूँगी, मुझे क्या होगा, यह सब सिर्फ एक छल है।

क्षोभ और अपमानसे आँखें उठाकर नीलाम्बरने कहा—छल है !

विराजने कहा—हाँ छल है। आजकल मैं सब जान गई हूँ। अगर मेरे मुँहकी ओर देखते, मेरे दुःखपर ध्यान देते, मेरी एक भी बात सुनते, तो आज मेरी यह दशा नहीं होती।

नीलाम्बर ने कहा—मैंने तुम्हारी एक भी बात नहीं सुनी ?

विराजने जोर देकर कहा—ना, एक भी नहीं। जब ही कुछ कहती हूँ, तभी कोई न कोई छल करके टाल देते हो। तुम केवल यही सोचते हो कि तुम्हें पाप होगा, तुम्हारी बात न रहेगी, दुनियामें तुम्हारी बदनामी होगी। मगर कभी एक बार भी सोचा है कि मेरा क्या होगा ?

नीलाम्बरने कहा—मेरे पापकी भागिनी तुम न होगी ? मेरी बदनामीसे तुम्हारी बदनामी न होगी ?

अबकी विराज एकदम क्रोधित हो उठी। तीखी होकर बोली—देखो, ये सब बच्चोंको फुसलानेकी बातें हैं। अब मेरी उम्र ऐसी बातोंसे बहलनेकी नहीं है।

क्षणभर चुप रहकर फिर कह उठी—तुम केवल अपनी ही बात सोचते हो, और कुछ नहीं सोचते—मेरे दुःखसे आज यह बात मुझे मुँहसे निकालनी पड़ रही है। आज तो तुमको अपने घरमें मुझको नौकरानीका काम करने देनेमें लाज आती है लेकिन अगर कल तुमको कुछ हो जाय तो परसों ही मुझको दूसरोंके घर जाकर दो मुट्ठी अन्नके लिए यही दासीका काम करना पड़ेगा। हाँ यह जरूर है कि तब तुमको अपनी आँखोंसे देखना न पड़ेगा कानोंसे सुनना भी नहीं पड़ेगा इसलिए तुमको लज्जा भी न होगी। भावना चिन्ता करनेकी भी जरूरत नहीं। यही न !

नीलाम्बर सहसा इस अभियोगका कोई जवाब न दे सका। कुछ देरतक चुपचाप पत्नीकी ओर देखता रहा। फिर आँखें उठाकर धीरेसे कहा—यह तुम्हारे मनकी बात कभी नहीं है। तुमको दुःख पहुँचा है, कष्ट हुआ है, इसीसे

क्रोधमें कह रही हो। तुम अच्छी तरह जानती हो कि मैं स्वप्नमें पड़कर भी तुम्हारा कष्ट सहन नहीं कर सकूँगा।

विराजने कहा—पहले मैं भी ऐसा ही समझती थी। लेकिन जैसे कष्टमें पड़े बिना कष्ट क्या है, यह ठीक-ठीक समझमें नहीं आता, वैसे ही मर्दोंकी माया ममता भी। समय आये बिना उसका भी ठीक-ठीक ज्ञान नहीं होता। लेकिन इस मौकेपर मैं तुमसे झगड़ा नहीं करना चाहती। मैं जो कहती हूँ, करो। जाओ, स्नान कर आओ।

'जाता हूँ' कहकर नीलाम्बर वहीं चुपका बैठा रहा।

विराजने फिर कहा—पूँटीके ब्याहको दो साल होनेको आते हैं। उसके पहलेसे आजतककी सब बातोंपर मैंने उस दिन मनमें विचार कर देखा है—तुमने मेरी एक भी बात नहीं सुनी। जब जो कुछ मैंने कहा उसे तुमने काट दिया और अपने मनका काम करते गये। आदमी अपने घरके नौकर-चाकरकी भी एक बात रख लेता है, मगर तुमने वह भी नहीं रखी।

नीलाम्बर कुछ कहने ही वाला था कि विराजने बीचमें ही रोककर कहा—ना—ना मैं तुमसे बहस नहीं करूँगी। जितने बड़े गुरु और गुसाईं इष्टदेवका नाम लेकर मैंने कसम खाई है कि तुमसे कोई बात नहीं कहूँगी। आज अगर एका एक बात न उठ पड़ती तो तुम यह सब मेरे मुँहसे न सुन पाते। अब शायद तुमको याद न आवे बचपनमें मैं सिर-दर्दसे एक दिन सो गई थी, द्वार खोलनेमें देर हो गई थी, इससे तुम मुझे मारने लगे थे। तुमको यह विश्वास नहीं हुआ था कि मेरी तबीयत खराब है। उसी दिनसे मैंने कसम खाई थी कि अपनी बीमारीकी बात कभी तुमसे नहीं कहूँगी। आजतक मेरी वह कसम कभी नहीं टूटी।

नीलाम्बरके सिर उठाते ही दोनोंकी आँखें मिल गईं। नीलाम्बर सहसा उठ आकर, विराजके दोनों हाथ पकड़कर, घबराये हुए स्वरमें कह उठा—यह न होगा विराज। तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। बताओ, क्या बीमारी है? तुम्हें बताना ही होगा।

धीरेसे अपने हाथ छुड़ानेकी चेष्टा करते हुए विराजने कहा—छोड़ो, लगता है।

नीलाम्बरने कहा—जाने दो, बताओ क्या हुआ है ?

विराजने रूखी सी हँसकर कहा—क्यों, कुछ भी तो नहीं हुआ। भली-चंगी हूँ।

नीलाम्बरको विश्वास नहीं हुआ। बोला—नहीं, चंगी नहीं हो। होती तो कई साल पुरानी बातकी चर्चा करके मेरा जी न दुखातीं—जिसके लिए मैं अनेक बार क्षमा माँग चुका हूँ।

"अच्छा अब कभी न कहूँगी" कहकर विराज अपनेको छुड़ाकर, कुछ हटकर बैठ गई।

नीलाम्बर उसका मतलब समझ गया, किन्तु फिर कुछ बोला नहीं। दो-तीन मिनट चुपचाप बैठा रहा फिर उठकर चल दिया।

रातको दिया जलाकर विराज चिट्ठी लिख रही थी। नीलाम्बर पलंगपर लेटा चुपचाप देख रहा था। एकाएक बोल उठा—इस जन्ममें तो तुमको तुम्हारा शत्रु भी कोई दोष या अपराध नहीं लगा सकता लेकिन तुम्हारे पूर्व-जन्मका पाप था नहीं तो ऐसा कभी न होता।

विराजने सिर उठाकर पूछा—क्या न होता ?

नीलाम्बरने कहा—तुम्हारा सम्पूर्ण तन और मन भगवानने राजरानीके योग्य ही बनाया था परन्तु

विराजने पूछा—परन्तु क्या ?

मगर नीलाम्बर चुप रहा।

क्षणभर उत्तरकी प्रतीक्षा करनेके बाद विराजने रूखे स्वरमें कहा—यह खबर भगवान् तुमको कब दे गये ?

नीलाम्बरने कहा—आँख-कान हों तो सभीको भगवान् खबर दे जाते हैं।

"हूँ" कहकर विराज फिर चिट्ठी लिखने लगी।

क्षणभर चुप रहकर नीलाम्बरने कहा—उस दिन कहा था कि मैंने तुम्हारी कोई बात नहीं सुनी यही शायद सच है। लेकिन क्या यह अकेला मेरा ही दोष है ?

विराजने फिर सिर उठाकर देखा और कहा—अच्छा तो मेरा दोष ही बता दो।

नीलाम्बरने कहा—तुम्हारा दोष ही नहीं दिखा सकूँगा। लेकिन आज एक सच बात कहूँगा। तुम अपने साथ अन्य स्त्रियोंकी तुलना करके ही देखती हो लेकिन यह एक बार भी नहीं सोचती हो कि तुम जैसी कितनी स्त्रियाँ ऐसे गुणहीन मूर्खके पाले पड़ी हैं। यही तुम्हारे पूर्व जन्मका पाप है। नहीं तो तुम्हें दुःख-कष्ट सहन करनेकी बात ही नहीं थी।

विराज चुपचाप मिट्टी खिसकाती रही। जान पड़ता है, उसने मनमें विचारा कि इसका जवाब न देगी। लेकिन उससे रहा न गया। मुँह घुमाकर पूछा—तुम क्या यह जानते हो कि ये सब बातें सुनकर मैं खुश होती हूँ?

नीलाम्बरने पूछा—कौन बातें?

विराजने कहा—यही, जैसे मैं राजरानी हो सकती थी, सिर्फ तुम्हारे हाथमें पड़कर ऐसी हो गई हूँ। तुम शायद समझते हो कि यह सब सुनकर मुझे प्रसन्नता होती है, या जो ये बातें कहता है, उसका मुँह देखनेको जी चाहता है?

नीलाम्बरने देखा, विराजका क्रोध बहुत बढ़ गया है। वह नहीं समझता था कि बात इतनी बढ़ जायगी। इससे वह भीतर ही भीतर कुण्ठित और संकुचित हो उठा। लेकिन एकाएक वह यह भी न सोच सका कि क्या कहकर उसे प्रसन्न करे।

विराजने कहा—रूप, रूप, रूप! सुनते-सुनते कान पक गये। लेकिन और जो लोग कहते हैं, उनकी नजरमें विशेषरूपसे शायद यही पड़ता है। पर तुम तो मेरे पति हो, बहुत ही छोटी अवस्थासे तुम्हारे आश्रयमें इतनी बड़ी हुई हूँ। तुमको भी क्या इससे अधिक मुझमें और कुछ नहीं दीख पड़ता? मुझमें क्या यह रूप ही सबसे बड़ी चीज है? तुम क्या समझकर यह बात जबानपर लाते हो? मैं क्या रूपका रोजगार करती हूँ, या इसी रूपसे तुमको बाँध रखना चाहती हूँ?

नीलाम्बर बहुत डर गया। घबराकर कह उठा—ना ना, वह नहीं

विराज बीचमें ही बोल उठी—ठीक यही। इसीसे मैंने एक दिन तुमसे पूछा था कि अगर मैं काली-कुत्सित होती तो तुम मुझे प्यार करते या नहीं, याद है?

नीलाम्बरने सिर हिलाकर कहा—याद है। लेकिन उस समय तुमने तो कहा था

विराजने कहा—हाँ, कहा था कि तुम काली-कुरूप होनेपर भी मुझसे प्यार करते, क्योंकि मुझसे विवाह किया है। मैं गिरिशकी बेटी और गिरिशकी बहू हूँ। मुझे ये बातें सुनाते तुमको लाज नहीं लगती! पहले भी तुमने यह बात कही थी—बोलते-बोलते क्रोध और अभिमानसे उसकी आँखोंमें आँसू भर आये और वे दीपके प्रकाशमें चमकने लगे।

यह देखते ही नीलाम्बरने खट पलंगसे उठकर उसका हाथ पकड़ लिया। विराजने स्वयं ही एक दिन कह दिया था कि हाथ पकड़ लेनेसे फिर क्रोध नहीं रहता।

नीलाम्बरको एकाएक वही बात याद आ गई। उसने एकाएक उठकर विराजका दाहिना हाथ अपने दोनों हाथोंमें ले लिया और चुपचाप उसके पास बैठ गया।

विराजने बाएँ हाथसे अपनी आँखें पोंछ डालीं।

उस रातको बड़ी देरतक दोनों प्राणी चुपचाप जागते रहे। नीलाम्बरने एकाएक पत्नीकी ओर मुँह घुमाकर मीठी वाणीसे पूछा—आज तुम्हें इतना क्रोध क्यों आ गया विराज?

विराजने कहा—तुमने ऐसी बात क्यों कही?

नीलाम्बरने कहा—मैंने तो कोई बुरी बात नहीं कही।

विराज फिर बिगड़ उठी। अधीर भावसे बोली—फिर भी कहते हो कि बुरी बात नहीं कही! बहुत बुरी बात है। अत्यन्त खराब! इसीके लिए तो सुन्दरीको—

कहते-कहते विराज रुक गई। चुप हो रही।

क्षणभर चुप रहकर नीलाम्बरने कहा—केवल इसी अपराधपर तुमने सुन्दरीको जवाब दे दिया?

केवल हूँ कहकर विराज चुप रही।

नीलाम्बरने भी फिर कुछ नहीं पूछा।

विराज तब आप ही आप कहने लगी—देखो, फिर न कहना। मैं कोई दुधमुँही बच्ची नहीं हूँ भला-बुरा सब समझती हूँ। उसने बुरा करने लायक काम किया था इसीसे उसे छुड़ा दिया। क्यों छुड़ा दिया क्या बात हुई यह सब बातें

अगर तुम मर्दोंने न सुन पाई तो न सही !

नीलाम्बरने कहा—ना अब मैं सुनना भी नहीं चाहता। यों कहकर एक ठंडी साँस लेकर, धीरेसे करवट बदलकर, नीलाम्बर सो रहा।

* * *

बँटवारेके दो-चार दिन बाद ही छोटे भाई पीताम्बरने बीचसे बरामदा और आँगनमें टट्टी खड़ी करके अपना हिस्सा अलग कर लिया था। दक्खिनकी ओर दूसरा दरवाजा फोड़ लिया था और उसके सामने एक छोटी-सी बैठक बना ली थी। अपने घरको अच्छी तरह सजाकर—सुंदर और साफ-सुथरा बनाकर वह बड़े आरामसे रह रहा था। यों तो पहले भी वह बड़े भाईसे अधिक बोलना चाहता नहीं था पर अब सारे ही सम्बन्ध बिल्कुल टूट गये थे। इस तरफ विराजको प्रायः दिनभर अकेले ही रहना पड़ता था। सुंदरीके जानेके बादसे सब काम धन्धा तो उसे करना ही पड़ता था उसके अलावा पहले जो काम दासी करती थी उन कामोंको लोकलज्जाके मारे पास-पड़ोसके लोगोंकी नजर बचाकर वह एकान्तमें कर लेती थी और इसीलिए उसे अधिक रात गयेतक जागना पड़ता था।

एक दिन इसी तरह वह काम कर रही थी, इतनेमें एकाएक उस तरफसे, टट्टीकी ओटसे, किसीने धीमी और मीठी आवाजसे पुकारा—जीजी, रात तो बहुत हो गई है।

विराजने चौंककर सिर उठाया। पुकारनेवालेने वैसी ही आवाजमें फिर कहा—जीजी मैं हूँ मोहिनी।

विराजने विस्मित होकर कहा—कौन छोटी बहू? इतनी रात गए?

मोहिनीने कहा—हाँ जीजी मैं हूँ। जरा पास आओ।

विराज उठकर टट्टीके पास गई। छोटी बहूने धीरेसे पूछा—जेठजी क्या सो गये?

विराजने कहा—हाँ।

मोहिनीने कहा—जीजी, एक बात है, लेकिन कह नहीं सकती। इतना कहकर वह चुप हो गई।

उसके कण्ठका स्वर सुनकर विराजको मालूम हुआ कि छोटी बहू रो रही है।

चिन्तित होकर पूछा—क्या हुआ छोटी बहू !

मोहिनी तुरन्त जवाब न दे सकी। ध्यान पड़ा वह आँचलसे आँसू पोंछती हुई अपनेको सँभाल रही है।

अब घबराकर विराजने पूछा—क्या हुआ छोटी बहू, बोलती क्यों नहीं !

अबकी भर्राये हुए गलेसे मोहिनीने कहा—जेठजीके ऊपर नालिश हुई है। कल उसे क्या कहते हैं सम्मन निकलेगा। क्या होगा जीजी !

विराज डर गई लेकिन उसने अपने मनका भाव छिपाते हुए कहा—सम्मन निकलेगा तो इसमें डरनेकी क्या बात है छोटी बहू।

मोहिनीने पूछा—तो कुछ डर नहीं है जीजी !

विराजने कहा—डर क्या है। लेकिन नालिश किसने की है !

छोटी बहूने कहा—भोला मुखर्जीने।

विराज क्षणभर चबूतरेमें आकर खड़ी रही। फिर बोली—हाँ मैं सब समझ गए अब और कहनेकी जरूरत नहीं। मुखर्जीका पावना उनपर है न इसीसे जान पड़ता है उसने नालिश कर दी है। मगर इसमें डरनेकी बात नहीं है छोटी बहू। इसके बाद दोनों ही चुप हो रहीं। कुछ देर बाद छोटी बहूने कहा—जीजी मैंने तुमसे कभी अधिक बातचीत नहीं की। मैं बात करने योग्य भी नहीं हूँ। क्या आज अपनी इस छोटी बहनकी एक बात मानोगी।

उसकी आवाजसे ही विराजका हृदय आर्द्र हो गया था। अब और अधिक आर्द्र होकर बोली—क्यों न मानूँगी बहन !

मोहिनीने कहा—तो फिर जरा इधर हाथ बढ़ाओ।

विराजके हाथ बढ़ाते ही एक छोटे कोमल हाथने उसी खड़ीकी सींकके बाहर निकलकर उसके हाथपर एक सोनेका हार रख दिया।

विराजने विस्मित होकर कहा—यह क्या है रहने दो छोटी बहू !

छोटी बहूने आवाजको और भी धीमी करके कहा—इसे बेचकर या गिरो रखकर, जिस तरह हो उसका कर्ज चुका दो जीजी।

जिसे पहले सोचा भी न था ऐसी इस अकस्मात्, बिना माँगे मिलनेवाली सहानुभूतिने कुछ देरके लिए विराजको अभिभूत कर दिया। उसके मुखसे कोई बात न निकल सकी। लेकिन "आती हूँ जीजी" कहकर जब छोटी बहू बातसे

इसने कभी सब बह कर्ण्ठसे पुकार उठी—भाभो नहीं छोटी बहू, सुना।

छोटी बहूने लौट आकर पूछा—क्यों बीबी?

विराजने दोनों उसी उंगलिसे तुरत वह हार उस तरफ फेंककर कहा—छी ऐसा न करना चाहिए।

छोटी बहूने हार उठाकर क्षोभके स्वरमें पूछा—क्यों बीबी? क्यों न करना चाहिए।

विराजने कहा—छोटे बाबू सुनेंगे तो क्या कहेंगे?

बहूने कहा—लेकिन वह तो सुन न पायेंगे?

आज न सही, दो दिन बाद तो उनको मालूम ही हो जायगा। तब क्या होगा?

छोटी बहूने कहा—उनको कभी न मालूम होगा बीबी। परलोक मेरी माँ मरते समय छिपाकर मुझको यह हार दे गई थी। तबसे मैंने इसे न कभी पहना और न कभी बाहर निकाला। तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ बीबी इसे ले लो।

उसकी इस कातर प्रार्थनाको सुनकर विराजकी आँखोंसे आसू गिर पड़े। उसने स्तब्ध होकर आश्चर्यके साथ अपने मनमें इस नारीके व्यवहारके साथ, जिससे रक्त-मांसका कोई सम्बन्ध नहीं, घरके दो सहोदर भाइयोंके बरतावकी तुलना करके देखा। फिर हथेलीसे आँखें पोंछकर, रुँधे हुए गलेसे कहा—भाभकी यह बात मरते दमतक याद रहेगी बहन। लेकिन यह हार तो मैं ले नहीं सकूँगी। इसके सिवा छोटी बहू, किसीको अपने पतिसे छिपाकर कोई भी काम नहीं करना चाहिए। इससे तुम्हें और मुझे, दोनोंको पापका भागी होना पड़ेगा।

छोटी बहूने कहा—तुम सब बातें नहीं जानती हो, इसीसे कहती हो। धर्म-अधर्मका खयाल मुझको भी तो है बीबी। मैं ही मरते समय क्या जवाब दूँगी?

फिर एक बार आँखें पोंछकर, अपनेको सँभालकर विराजने कहा—मैंने और सबको पहचाना छोटी बहू, बेशक तुमको ही इतने दिनतक नहीं पहचान सकी। लेकिन तुम्हें मरते समय कोई जवाब न देना पड़ेगा। वह जवाब इसी बीच तुम्हारे अन्तर्यामीने आप ही लिख लिया है। अब जाओ, बहन, बहुत रात हो गई, जाकर सो रहो। यों कहकर, कुछ कहनेका मौका न देकर, विराज जल्दीसे घरमें हट गई।

लेकिन वह भीतर भी नहीं जा सकी। अँधेरे बरामदेमें एक किनारे धोतीका आँचल बिछाकर लेट रही। इस समय मारपीट और मुकदमेकी बात उसे याद नहीं रही। उस थोड़ा बोलनेवाली कमसिन छोटी बहूकी करुणा और सहानुभूतिसे भरी बातें ही उसे याद आने लगीं। उसकी आँखोंसे झरनेकी तरह निरन्तर जल पड़ने लगा। आज उसके हृदयमें सबसे अधिक दुःख इस बातका कचोटने लगा कि इतने दिनतक, इतने पास रहकर भी वह छोटी बहूको न पहचान सकी पहचाननेकी चेष्टातक नहीं की। यह सच है कि उसने पीठ पीछे कभी छोटी बहूकी निंदा नहीं की लेकिन कभी अपनापेके साथ उससे कोई अच्छी बात भी नहीं की। बहुत तेज बिजलीकी चमक जैसे दमभरमें तीव्र अन्धकारको चीर देती है वैसे ही छोटी बहू आज उसके हृदयको अँधेरी तहतक चीरकर प्रकाशित कर गई। सोचते-सोचते, रोते-रोते न जाने कब वह सो गई। अचानक किसीका हाथ लगनेसे वह हड़बड़ाकर उठ बैठी। उसने देखा नीलाम्बर उसके सिरहाने बैठा हुआ है।

नीलाम्बरने स्नेहसे कहा—भीतर चलो, रात लगभग समाप्त होनेको है।

विराजने कुछ नहीं कहा। वह स्वामीकी देहका सहारा लेकर चुपचाप भीतर जाकर निर्जीवकी तरह पड़ रही।

६

एक साल बीत गया। अबकी साल फसलमें दो आने भी फसल हाथ नहीं लगी। जिस धरतीसे लगभग सालभरतक भरण पोषण होता था उसमेंसे बहुत-सी तो उसी मोहल्लेके भोलानाथ मुखर्जीने खरीद ली है। बगीचेका फलतक बिक गया है। यह भी सबको मालूम हो गया कि छोटे भाई पीताम्बरने ही गुप्त रूपसे उसे खरीद लिया है। हलका एक बैल मर गया है। पोखर पूरसे खिसक गया है। विराजको अब किसी तरफ देखकर कूल-किनारा नजर नहीं आता। शरीरके किसी स्थानको बहुत देरतक बाँध रखनेसे जिस तरह एक अव्यक्त भय व अव्यक्त मन्द यातनासे सारा शरीर धीरे धीरे अवसन्न होने लगता है सारे संसारसे इनका सम्पर्क भी वैसा ही हो चला। पहले विराज बात-बात हँसती थी, कोई बात

निकालकर किसी किससे हँसी-दिल्लगी कर बैठती थी, लेकिन अब उस घरमें ऐसा कोई भी आदमी न था, जिससे वह बात करे। यहाँतक कि अगर कोई मिलने-भेंटने आता या उसका हाल-चाल जानना चाहता, तो भी वह मनमें चिढ़ जाती है। वह स्वभावसे अभिमानिनी है, अब पास-पड़ोसके लोगोंकी छाया तक बातसे भी बिगड़ उठती है। गिरिस्तीके किसी काममें अब उसे तनिक भी उत्साह नहीं है, यह उसके कामको देखनेसे ही मालूम हो जाता है। उसके कमरेका पलंग और बिछौना मैला पड़ा है। कपड़े अँगनकी अलगनीपर अस्तव्यस्त पड़े पड़े रहते हैं। चीज-वस्तु बेठौर बिखरी पड़ी रहती है। झाड़ू देकर कूड़ा कमरेके ही एक कोनेमें जमा देती है। उसे उठाकर बाहर फेंकनेकी भी शक्ति जैसे अब उसे अपने शरीरमें ढूँढे नहीं मिलती।

इसी तरह दिन कट रहे थे। इस बीचमें नीलाम्बरने अपनी छोटी बहन हरिमतीको ले आनेकी दो बार कोशिश की, लेकिन उन लोगोंने नहीं भेजा। पंद्रह दिनके लगभग हुए उसने एक पत्र लिखा था। हरिमतीके ससुरने उसका जवाबतक नहीं दिया। किन्तु विराजके आगे उसका नामतक नहीं लिया जा सकता। वह एकदम आग-बबूला हो जाती है। उसने पूँटीको पाल-पोसकर इतना बड़ा किया, माताके समान प्यार किया मगर आजकल उसका जिक्रतक उसके लिए जहर हो गया है।

आज सबेरे नीलाम्बर गाँवके डाकखानेसे सूखा हुआ उतरा मुँह लिये लौटा और घरमें आकर बोला—पूँटीके ससुरने जवाबतक नहीं दिया। जान पड़ता है, इस बारकी दुर्गापूजामें भी बहनको न देख पाऊँगा।

विराजने काम करते-करते एक बार सिर उठाया, शायद कुछ कहना चाहा। लेकिन बिना कुछ बोले ही उठ गई।

उसी दिन दोपहरको जब नीलाम्बर भोजन करने बैठा तब उसने धीरेसे कहा—उसका नाम लेते ही तुम जल उठती हो। लेकिन उसने क्या कोई अपराध किया है?

विराज पास ही बैठी थी। आँख उठाकर बोली—मैं जल उठती हूँ, यह किसने कहा?

नीलाम्बर बोला—कहेगा कौन? मैं आप ही तो देखता हूँ।

विराज क्षणभर पतिका मुँह ताकती रही। फिर बोली—देखता हूँ तो अच्छा है और उठकर जाने लगी। नीलाम्बरने टोककर कहा—भला बताओ आज कल तुम ऐसी क्यों होती जा रही हो। जैसे बिलकुल ही बदल गई हो।

विराजने घूमकर नीलाम्बरकी बात ध्यान देकर सुनी। बोली—दूसरोंके बरतनेसे ही बदल जाना पड़ता है और फिर बाहर हो गई।

इसके दो-तीन दिन बाद, तीसरे पहर, बाहरके चण्डीमण्डपमें अकेला बैठा नीलाम्बर गुनगुनाकर कुछ गा रहा था। विराज उसके पीछे आकर कुछ देर चुपचाप रही। फिर सामने आकर खड़ी हो गई।

नीलाम्बरने सिर उठाकर कहा—क्या है!

विराज तीखी नजरसे ताकती रही कुछ जवाब न दिया।

नीलाम्बरके सिर नीचा करते ही विराजने रूखी आवाजमें कहा—जरा फिर सिर उठाओ, देखूँ।

नीलाम्बरने न सिर उठाया न कुछ उत्तर ही दिया चुप रहा।

विराज पहलेकी ही तरह कठोर भावसे बोली—आँखें तो लाल हैं। क्या दम लगाना फिर शुरू कर दिया।

नीलाम्बर कुछ नहीं बोला—उससे आँखें नीची किये काठका पुतला-सा बैठा रहा। एक तो वह स्वभावसे विराजसे डरता है दूसरे इधर कुछ दिनोंसे वह बारूदका ढेर बन गई है। यह अन्दाजनेका भी कोई उपाय न था कि वह कब किस घड़ी कैसे भभक उठेगी।

कुछ देरतक विराज भी स्थिर भावसे खड़ी रही। फिर बोली—यही ठीक है। गाँजेका दम लगाकर 'बम भोला बाबा' बन बैठनेका यही तो समय है। यह कहकर वह भीतर चली गई।

वह दिन बीत गया। दूसरे दिन नीलाम्बरसे नहीं रहा गया। लाज-संकोच सब त्यागकर सबेरे ही पीताम्बरको बाहरके कमरेमें बुला लाया और बोला—पूँटीके ससुरने मुझे तो बुलावातक नहीं दिया। तुम भी एक बार कोशिश करके देखो शायद बहनको दो दिनके लिए घर ला सको।

पीताम्बर भाईके मुँहकी ओर देखकर बोला—तुम्हारे रहते भला मैं क्या कोशिश करूँगा।

नीलांबर उसकी धृष्टता समझकर भीतरसे क्रुद्ध हुआ। लेकिन मस्तक मनका भाव छिपाकर बोला—पूँटी जैसे मेरी बहिन है, वैसे ही तुम्हारी भी तो है। न हो, समझ लो मैं मर गया—अब तुम ही बड़े हो।

पीतांबरने कहा—जो सच नहीं है उसे मैं तुम्हारी तरह नहीं समझ सकता। इसके अलावा जब तुम्हारी चिट्ठीका उत्तर नहीं दिया, तब वे मेरी ही चिट्ठीका क्यों देने लगे।

नीलांबरने छोटे भाईकी इस बातको भी सह लिया। कहा—जो सच नहीं है, वही मैं समझ बैठा हूँ। खैर, ऐसा ही सही। इस बातपर मैं तुमसे झगड़ा करना नहीं चाहता। लेकिन मेरी चिट्ठीका जवाब तो वह इसलिए नहीं देते कि ब्याहकी सब बातोंको मैं पूरा नहीं कर सका।—लेकिन इन सब बातोंके लिए तो मैंने तुमको बुलाया नहीं है। यह बताओ कि जो कहता हूँ, वह कर सकोगे या नहीं?

पीतांबरने सिर हिलाकर कहा—नहीं। ब्याहके पहले मुझसे पूछा था?

नीलांबरने कहा—पूछनेसे क्या होता?

पीतांबरने कहा—अपनी सलाह ही देता।

नीलांबरके मर्ममें आग-सी लग उठी। उसके होंठ काँपने लगे। फिर भी उसने अपनेको सँभालकर कहा—तो तुम यह नहीं कर सकोगे?

पीतांबरने कहा—जी नहीं। जैसे पूँटीके ससुर, वैसे ही मेरे ससुर। वह गुरुजन हैं—बड़े हैं। यह सब मेलजोल नहीं चाहते, तब उनके खिलाफ मैं कोई बात नहीं कह सकता। यह मेरा स्वभाव नहीं है।

उसकी बात सुनकर एक बार नीलांबरका जी चाहा कि लाठीसे उसका यह मुँह तोड़ दे। लेकिन नहीं उसने अपनेको रोका सँभाला। खड़े होकर कहा—अच्छा जाओ, निकलो – मेरे आगेसे हट जाओ।

पीतांबर भी क्रोधित हो उठा बोला, नाहकमें क्यों गुस्सा होते हो? न जाऊँ तो क्या जबरदस्ती भगा दे सकते हो?

नीलांबरने हाथसे दरवाजा दिखाते हुए कहा—कुत्तेकी मार खाकर यदि मान नहीं देना चाहते, तो हट जाओ मेरे आगेसे।

फिर भी पीतांबर कुछ कहनेवाला था कि नीलांबरने रोककर कहा–

मन एक छदाम भी नहीं—जाओ।

गँवार नीलाम्बरका शारीरिक बल सुप्रसिद्ध था।

पीताम्बरको फिर कुछ कहनेका साहस नहीं हुआ। वह धीरेसे बाहर हो गया।

यह कहा-सुनी सुनकर विराज बाहर निकल आई और पतिका हाथ पकड़कर भीतर खींच ले गई। बोली—छिः! सब कुछ जान-सुनकर भी क्या भाईसे झगड़ा किया जाता है, जिसमें सब लोग हँसें!

नीलाम्बरने उद्धत भावसे कहा—जानता हूँ तो क्या डरसे दब जाऊँ! मैं सब सह सकता हूँ विराज, लेकिन धूर्तता नहीं।

विराजने कहा—लेकिन तुम तो अकेले नहीं हो। यह अगर हाथ पकड़कर बाहर निकाल दें, तो जाकर कहाँ खड़े होंगे—यह भी कभी सोचा है?

नीलाम्बरने कहा—नहीं। जो सोचनेवाले हैं, वे सोचेंगे। मैं सोचकर बेकार दुःखी नहीं होता।

विराजने कहा—ठीक है! ढोल बजाना और महाभारत पढ़ना जिसका काम है, उसके लिए सोचना-विचारना मिथ्या है!

यह बात विराजने हँसीमें नहीं कही और नीलाम्बरके कानोंमें भी उससे अमृतवर्षा नहीं हुई, तो भी नीलाम्बरने सहजभावसे ही कहा—उसे मैं सबसे बड़ा काम ही मानता हूँ। इसके सिवा, मिथ्या करते-धरनेसे माथेका क्या मिल जायगा! फिर आवेगमें एक बार हाथ उठाकर बोला—देखो विराज, यहाँ विद्या होनेके कारण ही कितने ही राजे-महाराजोंको पेड़ोंके नीचे रहना पड़ा है—मैं तो एक बहुत ही तुच्छ मनुष्य हूँ।

विराज भीतर-ही-भीतर जली जा रही थी। बोली—यह सब मुँहसे कह देना जितना सहज है, काममें परिणत करना उतना सहज नहीं है। इसके सिवा पेड़के नीचे तुम भले ही रह सको मैं तो नहीं रह सकती! स्त्रियोंको हया-शरम होती है। चाहे खुशामद करके, चाहे दासीवृत्ति करके, मुझे तो एक आश्रममें रहना ही होगा। अगर तुम छोटे भाईका मन रखकर न चल सको तो कमसे कम उससे हाथापाई करके सब कुछ मिट्टी तो न कर दो! अपनी आँखोंके आँसुओंको रोककर तेज़ीके साथ वह बाहर निकल गई।

इसके पहले पति और पत्नीमें बार-बार कहा-सुनी और झगड़ा हो चुका है नीलाम्बर उससे परिचित है। लेकिन आज जो कुछ हो गया वह झगड़ा नहीं था। वह मूर्ति उसके निकट सर्वथा अपरिचित थी। वह स्तंभित होकर खड़ा रह गया।

कुछ देर बाद ही विराज उस कमरेमें आकर बोली—इस तरह हक्के-बक्केसे क्यों खड़े हो? दिन चढ़ आया है, जाओ नहा-धोकर पूजा-पाठ करके दो कौर खा लो। जितने दिन मिलता है उतने दिन। यों कहकर, फिर एक बार पतिके कलेजेमें शूल भोंककर, वह चली गई।

इस कमरेकी दीवारमें राधा-कृष्णका एक पट लटका था। उसकी ओर देख-देखकर नीलाम्बर सहसा रो पड़ा। लेकिन कोई देख न ले, इस डरसे फौरन ही आँखें पोंछकर बाहर चला गया।

और विराज? उस दिन दिनभर उसका यह हाल रहा कि बारबार उसकी आँखोंमें आँसू भर-भर आते थे। जिसका थोड़ा भी कष्ट उससे सहा न जाता था उसीको ऐसी कठोर बात जबसे उसने कह डाली, तभीसे उसके दुःखकी और आत्म-ग्लानिकी सीमा नहीं थी। दिनभर उसने एक बूंद पानी भी मुंहमें नहीं डाला। रोती हुई बेकार ही इधरसे उधर—इस कोठरीसे उस कोठरीमें आती रही। इसके बाद सन्ध्याके समय तुलसीके पेड़के आगे दीपक जलाकर, गलेमें आँचल डालकर, उसने प्रणाम किया तो फफककर जोरसे रो उठी।

सारे घरमें कोई न था, सन्नाटा छाया था। नीलाम्बर घरमें नहीं था। दोपहर को भोजनपर एक बार बैठकर ही उठ गया था, तबसे अबतक लौटा न था।

विराज क्या करे, कहाँ जाय किससे कहे, क्या करे? आज सब तरफ देखन-पर भी कोई उपाय न दिखाई दिया। वह वहीं जगह अँधेरे आँगनमें औंधी पड़कर फूट-फूटकर रोने लगी। केवल यही उसके मुँहसे निकलने लगा—मेरे अन्तर्यामी भैया, एक बार मेरी ओर आँख उठाकर देखो। जो आदमी कोई दोष कोई पाप करना नहीं जानता, उसको अब कष्ट न देना देवता। मैं अब और नहीं सह सकूँगी।

उस समय रातके नौ बज गये थे। नीलाम्बर [illegible] बैठ रहा।

विराज कोठरीमें आकर, उसके पैरोंके पास बैठ गई। मगर नीलाम्बरने उसकी ओर न तो देखा और न कोई बात ही की।

कुछ देरके बाद विराजने पतिके पैरपर अपना एक हाथ रखा, लेकिन नीलाम्बरने तुरन्त ही पैर हटा लिया। पाँच-चार मिनट और भी चुपचाप ही बीत गये। विराजका सोया हुआ अभिमान सिर धीरे धीरे उठाने लगा। तो भी वह मीठे स्वरमें बोली—चलो भोजन कर लो।

नीलाम्बर कुछ नहीं बोला। विराजने कहा—आज दिनभर कुछ नहीं खाया। किसपर खफा हो, जरा सुनूँ!

नीलाम्बरने इसका भी कुछ जवाब नहीं दिया।

विराजने कहा—बताओ न!

नीलाम्बरने उदास भावसे कहा—सुनकर क्या होगा!

विराजने कहा—तो भी सुनूँ तो सही।

अबकी नीलाम्बर सहसा उठ बैठा और विराजके चेहरेपर एक-सी तीखी नजर गड़ाकर बोला—मैं तुमसे क्या गुस्सा न हूँ विराज, कोई खिलौना नहीं हूँ।

उसकी उस दृष्टि और गलेकी आवाजसे विराज भय-चकित और स्तब्ध हो गई—ऐसा आर्द्र और गम्भीर कण्ठ-स्वर तो उसने और कभी किसी दिन नहीं सुना था।

७

सागरके गाँवमें पीतलके बर्तन ढालनेके कई कारखाने थे। इस मुहल्लेकी चांडाल जातिकी लड़कियाँ मिट्टीके साँचे बनाकर वहाँ बेच आती थीं। आजकल दुःखकी ज्वालासे जलती हुई विराजने उनमेंसे एक लड़कीको बुलाकर उससे साँचे बनाना सीख लिया था। वह बहुत ही बुद्धिमती और काम करनेमें असाधारण चतुर थी। दो ही दिनोंमें वह काम सीखकर वह सबसे अच्छे साँचे बनाने लगी। अब व्यापारी खुद आकर नगद पैसे देकर उससे साँचे खरीद ले जाने लगे। इस तरह वह रोज आठ-दस आने पैसे कमा लेने लगी। मगर लज्जाके मारे अपने पतिके आगे इस बातको प्रकट नहीं कर सकी।

नीलाम्बर जब सो जाता तब बहुत रात गये वह चुपचाप पलंगसे उठ जाती

काम वह काम करती थी। आज उसको भी वह साँचे बनाने आई और थकावट के कारण किसी समय उसी जगह सो गई। नीलाम्बरकी आँख एकाएक खुल गई। पलंगपर किसीको न देखकर वह बाहर निकल आया। विराजके हाथ उस समय भी कीचड़-मिट्टीसे भरे हुए थे और आसपास बने हुए साँचे इधर उधर पड़े थे। वहीं एक तरफ उस गीली जमीनपर, वह सो रही थी।

आज तीन दिनसे पति और पत्नीमें बोलचाल नहीं थी। तप्त आँसुओंसे नीलाम्बरकी दोनों आँखें भर आईं। वह फौरन वहीं बैठ गया और उसने विराजके जमीनपर झुके हुए सिरको सावधानीसे अपनी गोदमें रख लिया। पर विराजको कुछ खबर नहीं हुई, केवल एक बार जरा हिला-डुलाकर, दोनों पैरोंको और समेटकर वह अच्छी तरह सो रही। नीलाम्बरने बाएँ हाथसे अपनी आँखें पोंछ डालीं और दूसरे हाथसे पास ही रखे हुए टिमटिमाते दीपकको जरा उज्ज्वल करके एकटक पत्नीके मुखकी ओर निहारने लगा। यह क्या हो गया! कहीं, इतने दिन तो उसने देखा नहीं। विराजकी आँखोंके कोनोंमें इतनी स्याही दौड़ गई है! भौंहोंके ऊपर सुन्दर सुडौल माथेपर दुश्चिन्ताकी इतनी सुस्पष्ट रेखा दीख पड़ रही है! एक क्षणमें न जानेकैसी अज्ञात असीम वेदनासे उसका सम्पूर्ण हृदय भीतर-ही-भीतर जैसे मसोस उठा। असावधानीसे एक बड़ी सी आँसूकी बूँद विराजकी बंद आँखोंकी पलकपर टपक पड़ी। उसके गिरते ही विराजने आँख खोलकर देखा। क्षणभर चुपचाप ताकती रही। फिर दोनों हाथ फैलाकर पतिकी छातीसे लिपट गई और गोदमें मुँह छिपाकर करवट लेकर चुपचाप पड़ी रही। नीलाम्बर उसी तरह बैठा-बैठा रोने लगा। बड़ी देरतक कोई कुछ नहीं बोला। फिर जब रात बीतनेको हुई, पूर्व आकाशमें पौ फटने लगी, तब नीलाम्बरने थपककर, प्रफुल्लित होकर, पत्नीके मस्तकपर हाथ रखकर स्नेहपूर्वक कहा—अब और ठण्डमें मत पड़ी रहो घरमें चलो विराज!

"चलो" कहकर विराज उठी और पतिका हाथ पकड़कर कोठरीके भीतर जाकर सो रही।

तड़के ही नीलाम्बरने कहा—जाओ विराज, कुछ दिन अपने मामाके घर घूम-फिर आओ। मैं भी जरा कलकत्ते हो आऊँ।

विराजने पूछा—कलकत्ते जाकर क्या होगा?

नीलाम्बरने कहा—वहाँ पैसा कमानेके कितने ही रास्ते हैं। वहाँ कोई-न-कोई सूरत निकल ही आयगी। कहा मानो विराज दो-चार महीने वहाँ जाकर रहो।

विराजने पूछा—कितने दिनमें मुझे बुला लोगे?

नीलाम्बरने कहा—छः महीनेके भीतर ही बुला लूँगा, वचन देता हूँ।

'अच्छा" कहकर विराज सहमत हो गई।

चार-पाँच दिनके बाद बैलगाड़ी आई। विराजके मामाके घरको आठ-दस कोसतक बैलगाड़ीपर ही जाना होता है। लेकिन विराजके व्यवहारोंमें जानेका कोई लक्षण न देख पड़ा।

नीलाम्बर व्यस्त होकर ताकीद करने लगा।

विराज काम करते-करते कह बैठी—आज तो मैं न जाऊँगी। मेरी तबीयत ठीक नहीं है।

नीलाम्बर विस्मयसे अवाक् होकर बोला—तबीयत खराब है?

विराजने कहा—हाँ तबीयत खराब है बहुत खराब है। यों कहकर मुँह लटकाये, पीतलकी कलसी कमरपर उठाकर नदीसे पानी लानेके लिए चल दी। उस दिन गाड़ी लौट गई। रातको बहुत कुछ समझाने-बुझाने-मनानेपर उसने दो दिन बाद जाना मंजूर किया। दो दिनके बाद फिर गाड़ी आयी।

नीलाम्बरने आकर खबर दी तो विराज एकदम अकड़ गई। बोली—नहीं मैं कभी न जाऊँगी।

नीलाम्बरने और विस्मित होकर कहा—जाओगी क्यों नहीं?

विराज रोने लगी—नहीं, मैं न जाऊँगी। मेरे पास गहने कहाँ हैं? अच्छे कपड़े कहाँ हैं? मैं दीन दुखियोंके समान किसी तरह नहीं जाऊँगी।

नीलाम्बरने गुस्सेसे कहा—आज सचमुच तुम्हारे पास गहने नहीं हैं, मगर जब थे तब भी तो तुमने एक दिन उनकी ओर आँख उठाकर नहीं देखा।

विराज चुपचाप धोतीके छोरसे आँसू पोंछने लगी।

नीलाम्बरने फिर कहा—यह सब मैं समझता हूँ। मेरे मनमें सन्देह तो पहले-हीसे था। लेकिन सोचा था दुःख-कष्टसे तुम्हें होश आ गया होगा। मगर अब देखता हूँ कुछ नहीं आया। अच्छी बात है, तुम भी सूख-सूखकर मरो और मैं भी मरूँ। कहकर नीलाम्बरने गाड़ी लौटा दी।

दोपहरको नीलाम्बर घरके भीतर सो रहा था। पीताम्बर भी अपने घरमें गया था। छोटी बहूने रुहाँसी अधिक कोमल स्वरमें धीरेसे कहा—दीदी, बुरा न मानना—कसूर माफ करना, मैं तुमको क्या समझाऊँ, दो दिनको कहीं क्यों न गई!

विराज कुछ न बोली।

छोटी बहूने कहा—जेठजीको रोक न रखो दीदी! विपत्तिके समय एक बार दिल कड़ा कर लो—दो दिन बाद भगवान् जरूर कृपा करेंगे।

विराजने धीरेसे कहा—मैं तो दिल कड़ा ही किये हूँ छोटी बहू।

छोटी बहूने कुछ जोर देते हुए कहा—तो जाओ दीदी, जेठजीको सबोंकी तरह पैसा कमाने दो। मैं कहती हूँ दो दिनमें तुम्हारे ऊपर भगवान जरूर प्रसन्न होंगे।

विराजने एक बार सिर उठाकर कुछ कहना चाहा, लेकिन फिर सिर झुकाकर चुप रह गई।

छोटी बहूने कहा—जा न सकोगी दीदी!

अब भी विराजने सिर हिलाकर कहा—नहीं। सबेरे नींदसे उठकर उनका मुँह देखे बिना मैं एक दिन भी नहीं बिता सकूँगी। जो मुझसे नहीं हो सकता वह काम करनेके लिए मुझसे मत कहो छोटी बहू। इतना कहकर वह जाने लगी। इतनेमें छोटी बहूने सहसा [illegible] आवाजसे पुकारकर कहा—जाओ नहीं दीदी कुछ दिनके लिए तुमको यहाँसे जाना ही पड़ेगा। गये बिना मैं कभी न मानूँगी।

विराज घूमकर खड़ी हो गई। क्षणभर स्थिर भावसे खड़ी होकर बोली—ओह, समझ गई। शायद सुन्दरी आयी थी!

छोटी बहूने सिर हिलाकर कहा—आयी थी।

विराजने कहा—इसीसे चले जानेको कहती हो!

बहूने कहा—हाँ, इसीलिए कहती हूँ दीदी तुम यहाँसे चली जाओ।

विराज फिर कुछ देरतक चुप रही। इसके बाद बोली—एक कुत्तेके डरसे घर छोड़कर भाग जाऊँ!

बहू बोली—कुत्ता जब पागल हो जाता है तो उससे डरना ही होता

जीजी। इसके सिवा अकेले तुम्हारे ही लिए नहीं। सोचकर देखो, इसे लेकर और भी क्या-क्या अनिष्ट हो सकते हैं।

विराज कुछ देरतक फिर चुप रही। उसके बाद उदासभावसे सिर उठाकर बोली—नहीं किसी तरह न जाऊँगी। और यह कहकर छोटी बहूको प्रत्युत्तरका अवकाश न देकर तेजीसे हट गई।

मगर अब उसे जैसे डर लगने लगा। उसके घाटके ठीक सामने उस पार दो दिनसे बड़ी धूमधामसे एक नहानेका घाट बनाया जा रहा था और नदीमें पानी न रहनेपर भी मछली पकड़नेका मचान बँध रहा था। विराज मन-ही-मन समझ गई कि यह सब क्यों हो रहा है। नीलांबर एक दिन स्नान करके आया तो पूछा—उस पार वह घाट कौन लोग बाँध रहे हैं? विराज एकाएक विगड़ उठी, बोली—मैं क्या जानूँ? और तेजीसे हट गई।

उसका भाव देखकर नीलांबर अवाक् हो गया। किन्तु उसी दिनसे विराजने चक्र-पैवाल पानी भरनेके लिए नदीपर जाना एकदम बन्द कर दिया। वह या तो बहुत तड़के और या कुछ रात बीते नदीपर जाती। इसके सिवा हजार काम पड़नेपर भी कभी उधर मुँह न करती। लेकिन भीतर-ही-भीतर लज्जा, क्षोभ और क्रोधके मारे मानो उसका दम घुटने लगा। अब न इस अत्याचार और अकथ्य धृष्टताके खिलाफ वह अपने पतिके आगे भी मुँह न खोल सकी।

चार दिन बाद एक दिन नीलांबर ही घाटसे लौटकर हँसते हुए बोला—नये जमींदारका ठाठ-बाठ देखती हो विराज!

विराज समझकर अनमने भावसे बोली—देखती क्यों नहीं!

नीलांबर हँसते-हँसते बोला—मैं सोचता हूँ कि वह आदमी पागल तो नहीं है। नदीमें दो चार छोटी मछलियाँ रहने लायक तो जल नहीं है, लेकिन वह आदमी नदीमें एक बड़ी गिरीदार बंसी डाले दिनभर बैठा रहता है।

विराज चुप रही। वह किसी तरह अपने पतिकी हँसीका साथ नहीं दे सकी।

नीलांबर कहने लगा—मगर यह तो ठीक नहीं है। भले आदमियोंके खिड़की-घाटके सामने सारा दिन उसके बैठे रहनेसे स्त्रियाँ-लड़कियाँ कैसे आयेंगी? आपका तुम लोगोंको तो निश्चय ही बड़ी असुविधा होती होगी।

विराजने कहा—होती है तो क्या किया जाय?

नीलाम्बरने कुछ उत्तेजित होकर कहा—लेकिन ऐसा क्यों हो ! वंशी लेकर पागलपन करनेको क्या और कोई जगह नहीं है ? ना, ना कल सवेरे ही कचहरी जाकर कह आऊँगा कि शौक है तो और कहीं वंशी डालकर बैठा करो। लेकिन हमारे घरके सामने यह सब नहीं हो सकेगा।

पतिकी बात सुनकर विराज डर गई। उसने व्यग्र होकर कहा—ना ना, तुमको यह सब कहने जानेकी जरूरत नहीं। नदी सिर्फ हमारी ही नहीं है, जो तुम मना कर आओगे।

नीलाम्बर विस्मित हो उठा। बोला—तुम कहती क्या हो विराज ? न सही हमारे अकेलेकी किन्तु क्या उसे भले-बुरेका विचार न करना चाहिए ? मैं कल ही जाकर कह आऊँगा। न मानेगा तो मैं खुद यह सब ठाट-बाट तोड़-फोड़कर फेंक दूँगा। इसके बाद जो कर सके, कर ले।

सुनकर विराज सन्नाटेमें आ गई। फिर धीरेसे बोली—तुम जमींदारसे झगड़ा करने जाओगे ?

नीलाम्बरने कहा—क्यों न जाऊँगा ? बड़ा आदमी है तो क्या जी-चाहा अत्याचार करेगा और उसे सहते रहना होगा ?

विराजने कहा—साबित कर सकोगे कि वह अत्याचार करता है ?

नीलाम्बरने झल्लाकर कहा—मैं इतनी बहसके बखेड़ेमें नहीं पड़ता। साफ देख रहा हूँ कि अन्याय कर रहा है और तुम कहती हो साबित कर सकोगे ? कर सकूँगा या नहीं, यह मैं देख लूँगा।

विराज क्षणभर पतिके मुँहकी ओर स्थिर दृष्टिसे ताकती रही। फिर बोली—देखो माथा तनिक ठण्डा रखो। जिनको दोनों जून खानेको नहीं जुटता, उनके मुँहसे यह बात सुनकर लोग थू-थू करेंगे।

नीलाम्बरने कहा—कैसे ?

विराजने कहा—और कैसे ? तुम जमींदारके लड़केसे लड़ना चाहते हो !

ऐसे रूढ़ भावसे यह बात विराजके मुँहसे बाहर निकली कि नीलाम्बरसे सही नहीं गई। वह एकदम आत्मविस्मृत हो उठा। जोरसे चीखकर बोला—तू मुझे कुत्ता-बिल्ली समझती है क्या जो हर घड़ी खानेका ताना दिया करती है ? तुझे क्या दोनों जून खानेको नहीं जुटा ?

दुःख-कष्ट उठाते-उठाते विराजमें पहलेका-सा धीरज और सहनशीलता नहीं रह गई थी। वह भी तनक उठी और बोली—बेकार चिल्लाओ नहीं। जिस तरह दोनों वक्त खाना जुटता है सो तुम अवश्य नहीं जानते—लेकिन मैं जानती हूँ और मेरे अन्तर्यामी जानते हैं। इस बारेमें अगर तुम कुछ कहने आओगे तो मैं जहर खा लूँगी।—कहते-कहते विराजने सिर उठाकर देखा, नीलाम्बरका चेहरा एकदम विवर्ण हो गया है। उसकी दोनों आँखोंमें विह्वल हतबुद्धि छाई है। उस नजरके सामने विराज एकदम सकुचाकर, सिमटकर, जड़ सी हो गई। वह एक भी बात न कहकर धीरेसे खिसक गई। उसके चले जानेपर भी नीलाम्बर उसी तरह खड़ा रहा। उसके बाद एक लम्बी साँस छोड़कर, बाहर आकर, चण्डीमण्डपमें एक किनारे स्तब्ध होकर बैठ गया।

उसके प्रकृत आदमीने सोचे-समझे बिना एक ऐसी जगह जो ऊँची न थी जोरसे सिर उठाया हो या कि वैसे ही जोरकी टक्कर खाकर वह बिल्कुल निस्पन्द सा हो गया। नीलाम्बरके कानोंमें विराजकी यही आखिरी बात गूँजने लगी कि 'गृहस्थी कैसे चलती है!' उसे उस अँधेरी गहरी रातमें घरके बाहर घाटीपर बैठी हुई विराजका थका हुआ सा सूखा मुँह रह-रहकर याद आने लगा। सच ही तो है! यह तो अब उसे जाननेको बाकी नहीं रह गया कि दिन कैसे कटते हैं और वह असहाय नारी कैसे अकेले गृहस्थी चला रही है। कुछ ही पहले विराजकी कठोर बात तीरकी तरह ही उसके हृदयमें लगी थी; किन्तु अब यह बैठे-बैठे जितना ही सोचने लगा उतना ही उसके हृदयका वह भाव वह क्षोभ, केवल मरने और मिटने ही नहीं लगा बल्कि धीरे धीरे वह श्रद्धा और विस्मयके रूपमें बदलता भी दिखाई देने लगा। उसकी विराज तो केवल आजकी विराज नहीं है, वह कितने ही जन्म की—कितने ही युग-युगान्तरकी है। उसका विचार तो केवल दो दिनके व्यवहार, दो-एक असहिष्णु बातोंसे ही नहीं किया जा सकता। उसका हृदय किस चीजसे भरा है, यह बात तो उससे बढ़कर और कोई नहीं जानता।

अबकी बार नीलाम्बरकी आँखोंसे झर झर करके आँसू गिरने लगे। वह अकस्मात् दोनों हाथ जोड़कर, मुँह ऊपर उठाकर, धीमे गलेसे कह उठा—भगवान् मेरा जो कुछ है, सब ले लो—लेकिन मेरी विराजको न लेना!

यह कहते ही दुःखका एक प्रचण्ड झोंका जैसे उस प्रियतमाको हृदयसे जोरसे चिपटा लेनेके लिए उसकी ओर लपकने लगा।

वह दौड़कर विराजके बंद दरवाजेके सामने आकर खड़ा हो गया। दरवाजा भीतरसे बंद था। उसने धक्का देकर आवेगपूर्ण काँपते हुए स्वरमें पुकारा—विराज!

विराज धरतीपर औंधी पड़ी रो रही थी। चौंककर उठ बैठी।

नीलाम्बरने कहा—क्या करती हो विराज—दरवाजा खोलो।

विराज डरती हुई चुपचाप दरवाजेके पास आकर खड़ी हो गई।

नीलाम्बरने व्यस्त होकर कहा—खोल न दो विराज!

अबकी विराजने हकलाती-सी होकर धीरेसे कहा—तुम मारोगे तो नहीं बोलो! नीलाम्बरने कहा—मारूँगा!

यह बात तेज धारकी छुरीकी तरह नीलाम्बरके कलेजेमें जाकर लगी। लज्जा, व्यथा और अभिमानसे उसका कण्ठ रुँध गया। वह संज्ञाहीनकी तरह चौखटका एक बाजू पकड़कर खड़ा रहा। विराजने तो यह कुछ देखा नहीं इसलिए मन-मनमें ही छुरीपर छुरी मारती हुई रोकर बोली—अब फिर कभी मैं ऐसी बात नहीं कहूँगी—बोलो, मारोगे तो नहीं!

नीलाम्बर अस्पष्ट स्वरमें किसी तरह केवल 'ना' भर कह सका। डरते-डरते धीरे-धीरे जैसे विराजने कुंडी खोली वैसे ही नीलाम्बर लड़खड़ाता हुआ भीतर घुसकर आँखें मूँदकर पलंगपर जाकर पड़ रहा।

उसकी मुँदी हुई दोनों आँखोंके कोनासे लगातार आँसुओंकी धारा बह चली। पतिका ऐसा चेहरा उसने और कभी नहीं देखा था। अब सब उसकी समझमें आ गया। सिरहानेके पास बैठकर बड़े प्रेम और स्नेहसे स्वामीका सिर अपनी गोदमें रखकर वह आँचलसे उसके आँसू पोंछने लगी।

धीरे धीरे सायंकालका अन्धकार घरमें फैलने और घना होने लगा। तो भी किसीने मुँह नहीं खोला, कोई बात नहीं की। अँधेरेमें दोनों चुपचाप स्थिर पड़े रहे। किन्तु पति और पत्नीमें मन-ही-मन जो बातें हो गईं, उन्हें जान पड़ता है, केवल उनके अन्तर्यामीने ही सुना।

८

फिर भी नीलाम्बर सोच रहा था—विराज यह बात अपनी जबानपर कैसे लाई! विराजके मनमें इतनी बड़ी हीन धारणा कैसे उत्पन्न हुई कि वह उसे मार सकता है! एक तो गृहस्थीके दुःख-कष्टोंकी कोई हद नहीं उसपर रोजरोज यह क्या होने लगा! दो दिन नहीं बीतते कि झगड़ा हो जाता है। बात-बातमें मनोमालिन्य सामना होते ही कलह पग-पगपर मतभेद! सबसे बड़ी यह बात है कि उसकी ऐसी विराज दिनपर दिन कैसी होती जा रही है और सब ओर देखने पर भी इस दुःखके सागरका किनारा कहीं दिखाई नहीं देता। भगवान्के श्रीचरणोंमें नीलाम्बरकी अटल भक्ति थी नामके लेकर बेहद विश्वास था। वह यही विचारने लगा। उसने मनमें किसीको दोष नहीं दिया, किसीका बुरा नहीं कहा—किसीकी निन्दा नहीं की। चण्डीमण्डपमें दीवारपर टँगे हुए राधाकृष्ण की युगलजोड़ीके चित्रके सामने खड़ होकर वह रोकर कहने लगा—मेरे भगवान्, अगर इतने दुःखमें डालना ही चाहते थे तो मुझको इतना निरुपाय क्यों बनाया तुमने!

वह कितना निरुपाय है इस बातको उससे बढ़कर कोई नहीं जानता। लिखना-पढ़ना सीखा नहीं, कोई काम-काज करना जानता नहीं। जानता था केवल दीन-दुखियोंकी सेवा करना सीखा था केवल भगवान्का नाम लेना और भजन करना। इससे दूसरोंका दुख-कष्ट अवश्य दूर होता था; लेकिन आज दुःसमयमें उसका अपना दुःख कैसे दूर हो! अब तो उसके पास कुछ भी नहीं है, सब चला गया। इसीसे दुःखकी ज्वालामें जलते-जलते उसने कितनी बार अपने मनमें सोचा है कि अब यहाँ नहीं रहूँगा जिधर राह पायेगा उधर विराजको लेकर चला जाऊँगा। पर क्या इस सात पीढ़ियोंके घरको छोड़कर, किसी देव-मन्दिरके द्वारपर बैठकर, अथवा किसी वृक्षके नीचे पड़कर वह सुखी हो सकेगा? यह छोटी-सी नदी, यह पेड़-पौधोंसे घिरा हुआ घर, जन्मके परिचित घर और बाहरके लोगोंके मुख, सबको छोड़कर किसी देशमें अथवा स्वर्गमें भी जाकर क्या वह एक दिन भी जीवित रह सकेगा? इसी घरमें उसकी माँ मरी है, इसी चण्डीमण्डपकी दालानमें उसने अन्त समय अपने पिताकी सेवा की है और उन्हें गंगा पहुँचाया

है, यहीं उसने पूँटीका लेना-पाला है—उसका ब्याह किया है। इस घरकी इस स्थानकी ममता वह किस तरह छोड़ सकेगा!

वह वहीं बैठकर, दोनों हाथोंसे अपना मुँह ढककर रुँधे हुए गलेसे रोने लगा। उसको क्या यही इतना ही दुःख है? अपनी प्यारी बहनको वह कहाँ दे आया कि उसकी कोई खबरतक नहीं मिल पाती! कितने ही दिनोंसे वह बहनको नहीं देख पाया—उसका उच्च कण्ठसे 'दादा' कहकर पुकारना भी नहीं सुन पाया! पराये घरमें वह क्या दुःख उठा रही है कितना रो-कलप रही है, यह कुछ भी नहीं वह जान सका। अब न बिराजके आगे उसका नाम लेना भी कठिन है। वह उसे पाल-पोसकर भी इस तरह मुग्ध सकी है, लेकिन वह कैसे भूले? वह पेटकी सगी सहोदरा बहन है उसे गोदमें लेकर, कन्धेपर चढ़ाकर इतना बड़ा किया है' कहाँ कहीं गया, उसे भी साथ ले गया और इसके लिए कितने ही व्रत-उपवास रहे हैं। लेकिन पूँटीको रोते छोड़कर वह किसी तरह घरके बाहर एक पग भी नहीं जा सका है। ये सब बातें वह जानता है और छोटी बहन जानती है। बिराज जानती हुई भी नहीं जानती कभी एक बात भी नहीं कहती। पूँटीके विषयमें वह जैसे पत्थरकी मूर्तिकी तरह सदाके लिए एक दम गूँगी बन गई है। यह ख्याल भी नीलांबरके कलेजेमें एक-सा चुभता है कि उसने मन-ही-मन उसकी निरपराध बहनको अपराधी बना रखा है। किन्तु इस विषयकी जरा-सी चर्चा करनेतकका रास्ता बन्द है। कोई बात चलाते ही बिराज उसे रोककर कह उठती है—ये सब बातें रहने दो। वह राजरानी हो—लेकिन उसकी बातोंकी जरूरत नहीं। वह राजरानी शब्दका उच्चारण कुछ इस तरहसे करके उठ जाती है कि नीलांबरके हृदयके भीतर आग-सी सुलग उठती है। वह इसी आशंकासे मन-ही-मन व्याकुल हो उठता है कि कहीं उसपर गुरुजनोंका शाप न पड़े—और कहीं उसका अकल्याण न हो जाय। वह भगवान्से प्रार्थना करता या छिपाकर प्रसाद चढ़ाकर नदीमें बहा आता था। इसी तरह उसके दिन कट रहे थे।

दुर्गापूजा आ पहुँची। अब उससे रहा नहीं गया। बिराजसे छिपाकर कहींसे कुछ थोड़े रुपये संग्रह करके एक धोती और कुछ मिठाई मोल लेकर उसने सुन्दरीको जाकर पकड़ा।

सुन्दरीने बैठनेके लिए आसन बिछा दिया, तमाखू भर लाई। नीलाम्बरने आसनपर बैठकर अपने फटे-पुराने मैले-कुचैलेके भीतरसे वह पोथी निकालकर कहा—देख सुंदरी, तूने तो उसे पाला-पोसा है। आ, एक बार देख जा। पर आगे न बोल सका। मुँह फेरकर उसने चादरसे आँखें पोंछ लीं।

सुन्दरी इन लोगोंके घरकी बात जानती थी। गाँवके सभी जानते थे।

उसने पूछा—बहू कैसी है बड़े बाबू?

नीलाम्बरने गर्दन हिलाकर कहा—मालूम नहीं।

सुन्दरीमें बुद्धि विवेचना थी। उसने और कोई प्रश्न नहीं किया। दूसरे दिन सवेरे ही आनेकी बात कहनेसे नीलाम्बर उसे कुछ राह-खर्च देनेको तैयार हुआ, पर सुन्दरीने नहीं लिया, कहा—नहीं बड़े बाबू, तुमने पोथी मोल ले ली, नहीं तो वह भी मैं न ले आती—तुम्हारी ही तरह मैंने भी तो उसे आदमी बनाया है।

नीलाम्बरकी आँखोंसे फिर आँसू गिर पड़े। वह मुँह फेरकर बार-बार उन्हें पोंछने लगा। ऐसी सम्वेदना उसने किसीसे नहीं पाई थी। सभी कहते हैं कि उसने भूल की है, अन्याय किया है, पूँटीके ही कारण उसका घर सर्वनाश हुआ है।

नीलाम्बरने उठते-उठते सुन्दरीको विशेष सावधान कर दिया कि उसके कुशल-क्षेमकी खबर पूँटीके कानमें न पड़ने पावे। नीलाम्बरके चले जानेपर अभागी सुन्दरीने भी आँचलसे अपने आँसू पोंछ लिये। इस आदमीको सभी मन-ही-मन प्यार करते थे—सभी भक्ति करते थे।

उस दिन विजयादशमी थी। तीसरे पहर विराजने सोनेकी कोठरीमें आकर भीतरसे दरवाजा बन्द कर लिया। सन्ध्या होते-न-होते कोई आया कहकर घरमें घुस आया और किसीने नीलू दादा, नीलू भैया, कहकर बाहरसे ही आवाज लगाई।

उतरा मुँह लिये नीलाम्बर चण्डीमण्डपसे निकलकर सामने आ खड़ा हुआ। यथानियम किसीने प्रणाम किया, कोई गले मिला। फिर सब मामीको प्रणाम करनेके लिए भीतरकी ओर चले।

उनके साथ साथ नीलाम्बरने भी आकर देखा कि विराज रसोईघरमें भी नहीं

है। सोनेकी कोठरीका द्वार भी बन्द है। उसने किवाड़में धक्का देकर पुकारा—बहूके तुमको प्रणाम करनेके लिए आये हैं विराग!

विरागने भीतरसे ही कहा—मुझे बुखार है उठ नहीं सकती।

सबके चले जानेपर थोड़ी ही देरमें फिर किसीने धक्का दिया लेकिन विराग बोली नहीं। दरवाजेके बाहरसे ही धीरेसे किसीने कहा—बीबी मैं हूँ मोहिनी, जरा दरवाजा खोलो।

फिर भी विरागने जवाब नहीं दिया।

मोहनी बोली—यह न होगा बीबी। सारी रात इस दरवाजेपर खड़ा रहना पड़े तो भी खड़ी रहूँगी—किन्तु आज तुम्हारा आशीर्वाद लिये बिना इस जगहसे नहीं हटूँगी।

अब दरवाजा खोलकर विराग सामने आ खड़ी हुई। उसने देखा, मोहिनीके बाएँ हाथमें खानेकी सामग्रीकी टोकरी और दाहिने हाथके पात्रमें छनी हुई भाँग है। दोनों चीजें पैरोंके पास रखकर मोहिनीने विरागके चरणोंपर सिर रखकर प्रणाम किया। फिर कहा—मुझे केवल यही असीस दो बीबी कि मैं तुम्हारी जैसी हो सकूँ। बस, इसके सिवा मैं तुम्हारे मुँहसे और कोई असीस नहीं चाहती।

विरागने सजल आँखोंको आँचलसे पोंछकर चुपचाप झोंकी बहूके झुके हुए सिरपर हाथ रख दिया।

मोहिनी खड़ी होकर बोली—आज त्योहारके दिन आँसू नहीं गिराना चाहिए। मगर मैं यह तुमसे तो कह नहीं सकती बीबी! अगर तुम्हारी देहकी हवा भी मेरी देहको छू गई हो तो उसीके जोरसे कहे जाती हूँ कि आजसे साल ऐसे ही दिन यह बात कहूँगी।

मोहिनीके जानेपर विरागने वह सामग्री उठाकर कोठरीमें रख दी और स्थिर निश्चल बैठ रही। आज यह बात भी अच्छी तरह समझ गई कि मोहिनी दिन रात उसपर आँख रखती है।

इसके बाद कितने ही लड़के आये-गये मगर विरागने फिर दरवाजा बन्द नहीं किया। सभी सब चीजें देकर आशका आभार पूरा किया गया।

दूसरे दिन सबेर वह स्नानसमापनके बरामदेमें बैठी चाय सँभाल रही थी कि

सुन्दरीने आकर प्रणाम किया।

विराजने असीस देकर बैठनेको कहा।

बैठते ही सुन्दरीने कहा—कल रात हो गई थी इसीसे आज सबेरे ही कहने आई हूँ। लेकिन चाहे जो कहो बहू ऐसा जानती तो मैं कभी न आती।

विराजकी कुछ समझमें न आया। वह उसका मुँह ताकने लगी।

सुन्दरी कहने लगी—घरमें कोई नहीं है। सब मेला घूमनेके लिए पछाँह गये हैं। है एक बूढ़ी बुआ। उसकी वह अण्डी-बण्डी बातें क्या कहूँ! धोती—जोड़ा ले आ। जमादारजीको एक धोती नहीं भेजी साड़ी एक रही धोती लेकर पूजाका व्यवहार चुकाने आई है!—इसके बाद नीच चमार, बेश्या आदि न जाने क्या-क्या बकती रही, जिनके कहनेसे कुछ फायदा नहीं।

विराजने विस्मित होकर पूछा—किसने किसे कहा रे?

सुन्दरीने कहा—और किसे हमारे बाबूको।

विराज अधीर हो उठी। वह कुछ भी नहीं जानती थी इसीसे कुछ भी न समझ पाई। उसने कहा—हमारे बाबूको किसने कहा सो तो बता।

अबकी सुन्दरीने कुछ विस्मित होकर कहा—यही तो मैं इतनी देरसे कह रही हूँ बहू! बूढ़ीकी बूढ़ी कुटिया सासको कितना घमण्ड, कितना दिमाग है, धोती नहीं ली लौटा दी। कहकर उसने वह धोती आँचलके भीतरसे निकालकर रख दी।

अब विराज सब समझ गई। वह एकटक उस धोतीकी ओर ताकने लगी। उसके भीतर और बाहर आग लग गई।

नीलाम्बर बाहर गया था कब लौटेगा, इसका कुछ ठीक न था। सुन्दरी उसकी राह न देख सकी चली गई।

दोपहरको नीलाम्बर भोजन करने बैठा था। भीतर आकर, वह धोती उसके सामने कुछ दूरपर रखकर विराजने कहा—सुन्दरी लौटाकर दे गई है।

सिर उठाकर देखते ही नीलाम्बर शरम एकदम मुरझा गया। उसने कल्पना भी न की थी कि यह भेद इस तरह विराजके आगे खुल जायगा। उसने कुछ भी नहीं पूछा चुपचाप सिर झुका लिया।

विराजने कहा—उन्होंने क्यों नहीं ली क्यों भरपेट गालियाँ देकर लौटा दी

गई तब सुन्दरीके पास जाकर सुन लेना।

फिर भी नीलाम्बरने न सिर उठाया और न कोई खास ही बात सुननेकी इच्छा प्रकट की। विराज भी चुप रही।

नीलाम्बरकी भूख-प्यास सब एकदम जाती रही। वह झुके हुए मैले मुखसे केवल यही अनुभव करने लगा कि विराज स्थिर दृष्टिसे उसे देख रही है और उस दृष्टिसे आग बरस रही है।

शामको नीलाम्बर सुन्दरीके घर गया, बार-बार पूछकर सब बातें सुनीं। फिर कहा—जब पाँच बरसमें गये हैं तो जरूर ही वह मजेमें है, क्यों न सुन्दरी?

सुन्दरीने सिर हिलाकर कहा—मजेमें तो है ही बाबूजी।

नीलाम्बरका मुँह खिल उठा। बोला—तुमने देखा कितनी बड़ी हो गई है?

सुन्दरीने हँसकर कहा—मैं तो गई नहीं बाबूजी!

इससे प्रश्नसे लज्जित होकर नीलाम्बरने कहा—ठीक है, लेकिन नौकर चाकरोंसे तो सुना होगा?

सुन्दरीने कहा—नहीं बाबू। मरी कुटिया सासने ऐसी कड़ी-कड़ी सुनाई, ऐसे हाथ-पैर फेंके मार मटकाये कि पूछती क्या मांगने राह ही नहीं मिली।

इसपर क्षुब्ध मुखसे स्थिर रहकर नीलाम्बरने कहा—अच्छा, मेरी पूँटी पहलेसे कुछ दुबली हो गई है या कुछ मोटी-ताजी? तुझे कैसा लगता है?

प्रश्नोंका उत्तर देते-देते सुन्दरी परेशान हो गई थी। झुँझलाहटमें कह दिया—मोटी ही हुई होगी।

आग्रहसे उत्सुक होकर नीलाम्बरने पूछा—जान पड़ता है, सुन आई है, क्यों?

सुन्दरीने गर्दन हिलाकर कहा—नहीं बाबू, सुन तो कुछ भी नहीं आई।

तो फिर जाना कैसे?

अबकी सुन्दरी खीझ उठी। बोली—जाना और क्या! तुमने पूछा कि उसे कैसा लगता है, इसीसे कह दिया कि शायद मोटी ही हुई होगी।

नीलाम्बर सिर झुकाकर धीरेसे बोला—ठीक है।

इसके बाद सुन्दरीके मुँहकी ओर चुपचाप देखते रहकर, एक ठंडी साँस लेकर वह उठ खड़ा हुआ। बोला—अच्छा तो आज जाता हूँ फिर किसी दिन आऊँगा।

सुन्दरीने शान्तिकी साँस ली। इसमें उसका कसूर न था। एक तो कहने को कुछ था नहीं, ऊपर से कमरेसे लगातार एक ही बातको दोहराते उसने घुमा-फिराकर भी वह नीलाम्बरके कौतूहलको मिटा नहीं सकी थी।

उसने जल्दीसे कहा—हाँ बापू, रात हुई आज जाओ। और किसी दिन जब सबेरे आना तब सब बातें होंगी।

इतनी देर बाद नीलाम्बरका ध्यान सुन्दरीकी उत्कण्ठापूर्ण व्यग्रताकी ओर गया और वह "जाता हूँ" कहकर चल दिया।

सुन्दरीकी घबराहटका एक विशेष कारण था।

उस मोहल्लेके निताई गांगुली इसी समय प्रायः नित्य ही एक बार उसकी सुधि लेकर अपने चरणोंकी धूल दे जाते थे। उनकी वह धूल कहीं नीलाम्बरके सामने ही कहीं न आ पड़े इसी आशंकासे उसके रोंगटे खड़े हो जाते थे। यद्यपि अनेक कारणोंसे उसके भाग्य फूट गये थे, और कर्मोंदारके अनुग्रहसे उसकी लज्जा गर्भमें ही मर गई थी तो भी इस निष्कलंक साधु-चरित्र ब्राह्मण के आगे अपनी हीनता प्रकट हो जानेकी सम्भावनासे वह लाजके मारे मरी जा रही थी।

नीलाम्बरके चले जानेपर वह कुण्ठित चित्तसे दरवाजा बन्द करने आई, किन्तु सामने नजर डालते ही देख पड़ा कि नीलाम्बर फिर आ रहा है। वह किवाड़ पकड़कर चौखटके साथ उसकी प्रतीक्षा करने लगी। उसके मुखपर खिड़कीसे चन्द्रमाका प्रकाश पड़ रहा था।

नीलाम्बर निकट आकर जरा ठिठका, फिर अपने चादरके खूँटसे एक अठन्नी खोलकर, अत्यन्त कोमल स्वरमें बोला—तुमसे कुछ छिपा नहीं है सुन्दरी, सभी कुछ तू जानती है। सिर्फ यह अठन्नी है, इसे ले ले। कहकर वह हाथ उठाकर देने लगा। सुन्दरी चौंक कर पीछे हट गई।

नीलाम्बरने कहा—तुमने कितना कष्ट किया जाने आनेका खर्च भी न दे सका। और कुछ न बोला गया आँसुओंसे उसका कण्ठावरोध हो गया।

सुन्दरीने क्षणभर कुछ सोचा फिर हाथ आगे करके कहा—दीजिए, कुछ भी हो, आप मेरे सबके मालिक हैं। मेरा 'ना' कहना शोभा नहीं देता।

यह कहकर उसने वह अपने हाथमें ले ली। फिर उसे माथेसे छुआकर

आँचलमें आँसती हुई बोली—तो फिर जरा भीतर आइए। इतना कहकर वह भीतर चली गई। नीलाम्बर उसके पीछे जाकर आँगनमें खड़ा हो गया।

सुन्दरीने क्षणभरमें ही लौटकर नीलाम्बरके पैरोंके पास मुट्ठीभर रुपये रखकर जमीनपर सिर रखकर प्रणाम किया और वह पैरोंकी धूल माथेसे लगाकर खड़ी हो गई।

नीलाम्बरको विस्मयसे हतबुद्धि हो खड़े देखकर उसने कुछ हँसकर कहा—इस तरह खड़े होकर ताकनेसे तो काम न चलेगा बाबू! मैं विराजकी दासी हूँ। दूर होनेपर भी यह जोर सिर्फ मेरा ही है।

यों कहकर झुककर रुपए उठाकर वह नीलाम्बरके चादरमें बाँधती हुई मृदु कंठसे बोली—बाबूजी, ये रुपए आपहीके दिये हुए हैं। तीर्थयात्राके लिए देवताके नामसे इन्हें जमा रख दिया था। सो जाना तो हो नहीं सका आज देवता स्वयं ही घर आकर ले गये।

अब भी नीलाम्बरसे कुछ बोला नहीं गया। अच्छी तरह बाँधकर सुन्दरीने कहा—बहूजी घरमें अकेली हैं। अब आप जाइए, लेकिन देखिए, उन्हें यह बात किसी तरह मालूम न होने पावे।

नीलाम्बर कुछ कहना ही चाहता था कि सुन्दरी बाधा देकर कह उठी—इनकार करिए, मैं नहीं सुनूँगी। आज मेरा मान न रखेंगे, तो सच जानिए, मैं सिर पटककर मर जाऊँगी।

अभीतक सुन्दरीके हाथमें चादरका छोर छिपा था। इस बीच "क्या हो रहा है जी?" कहते हुए निताई गाँगुली खुले दरवाजेसे भीतर सीधे आँगनमें आकर खड़े हो गये। सुन्दरीने चादर छोड़ दिया और नीलाम्बर बाहर चला गया।

क्षणभर निताई मुँह बाये अवाक् खड़े हो रहे।—यह छोकरा तो नीलू था न?

सुन्दरी मनमें तो संकुचित हुई, पर सहज भावसे बोली—हाँ, मेरे मालिक थे।
निताईने कहा—सुनता हूँ, घरमें खानेको भी नहीं है। इतनी रातको यहाँ?
काम था, इसीसे आये थे।

'और काम क्या?' कहकर निताई होंठ दबाकर मुसकराये।

कि उन जैसे बूढ़े आदमीकी आँखोंमें धूल झोंकना सहज नहीं है।

सुन्दरी उस मुस्कराहटका मतलब स्पष्ट समझ गई। निताईकी अवस्था पचास सालके ऊपर ही थी। सिरके बारह आने बाल पक गये थे। मूँछ-दाढ़ी सफाचट, सिरपर मोटी चोटी, मस्तकपर सवेरेका चन्दनका तिलक अभीतक यथास्थान था। सुन्दरी उनकी ओर एकटक देखती रही। उस दृष्टिका अर्थ समझ लेना निताईके लिए सम्भव न था। इसीसे कुछ उत्तेजित होकर कह उठे—इस तरह क्यों देख रही हो?

देख रही हूँ।

क्या देख रही हो?

देख रही हूँ कि तुम भी ब्राह्मण हो और जो चले गये वह भी ब्राह्मण हैं लेकिन दोनोंमें कितना आकाश-पातालका अन्तर है।

बात समझ न पानेके कारण निताईने पूछा—कैसा अन्तर?

सुन्दरी मुसकाकर बोली—बूढ़े आदमी ठहरे, आपेमें न रह सको। ऊपर सायबानमें आकर बैठो। मैं कसम खाकर कहती हूँ गांगुली महाशय तुम्हारी तरफ देखकर सोच रही थी कि मेरे मालिकके पैरोंकी तनिक-सी रज पाकर ही तुम-जैसे ही कितने ही गांगुली तर जाते।

सुन्दरीकी यह बात सुनकर निताई क्रोध और विस्मयसे ताकते रह गये, उनके मुँहसे बोल नहीं फूटा। सुन्दरीने चिलम उठा ली और तमाखू भरते-भरते बिलकुल ही सहजभावसे कहा—क्रोध न करो ब्राह्मण देवता मैंने सच बात ही कही है। आज ही नहीं, बराबर देखती आ रही हूँ। मालिकके ललाटकी ओर देखते ही आँखें चौंधिया जाती हैं, मालूम पड़ता है जैसे उनके माथेपर आसमानकी बिजली कौंध रही है। और अपना ललाट देखो देखते हँसी आती है। कहते-कहते वह खिलखिलाकर हँस पड़ी। निताई पहलेसे ही ईर्ष्याकी आगमें जल रहे थे, अब क्रोधसे पागल हो उठे। उनकी आँखें लाल अंगारा हो गईं। चिल्लाकर कहा—इतना घमंड न कर सुन्दरी, मुँह जल जायगा।

सुन्दरीने चिलम फूँकते हुए पास आकर हँसकर कहा—कुछ न होगा। लो तमाखू पियो। मुँह तो तुम्हीं लोगोंका मरनेपर नहीं जलेगा जो मेरे गुनी मालिकको देखकर हँसते हो।

नीलाम्बर मुँह फेरकर उठ खड़े हुए। सुन्दरीने उनके दुपट्टेका एक सिरा पकड़ लिया और हँसते हुए कहा—बैठो-बैठो, तुम्हें मेरे सिरकी कसम।

बूढ़ा निताई अपना दुपट्टा सीससे खींचते-पुकारते हुए—घूरेमें जा मरो, तेरा सत्यानास हो!—आदि शाप देते हुए तेजीसे चल दिये।

सुन्दरी वहीं बैठकर थोड़ी देरतक खूब हँसती रही। फिर धीरेसे उठकर सदर दरवाजा बन्द करके धीरे-धीरे कहती रही—कहाँ वह और कहाँ यह! आदम इसीको कहते हैं। इतने दुःख-कष्टमें रहनेपर भी मुँहपर हमेशा हर घड़ी हँसी झलकती रहती है, फिर भी उनकी ओर आँख उठानेकी हिम्मत नहीं पड़ती—मानो आग जल रही हो।

९

ठीक कह नहीं सकते, किसका उपाय पर हुआ लेकिन यह बात विकृत होकर विराजके कानोंतक पहुँचनेको बाकी नहीं रही। उस दिन आलोचना करने आई थी उस घरकी बुआ। विराजने सब कुछ मन लगाकर सुना। फिर गम्भीर होकर कहा—उसका एक कान काट लेना उचित है बुआ!

बुआ खिसककर चली गई। कहती गई—जानती तो हूँ, उस जैसी चाण्डाल और गाँवमें दूसरी नहीं है।

विराजने स्वामीको बुलाकर कहा—तुम सुन्दरीके यहाँ फिर चले गये थे?

नीलाम्बरने मनसे दुःखकर जवाब दिया—बहुत दिन पहले पूँटीके हालचाल जाननेके लिए गया था।

"अब न जाना। सुनती हूँ, उसका चालचलन बहुत खराब हो गया है।" इतना कहकर वह अपने काममें चली गई। इसके बाद कितने ही दिन बीत गये। सूर्यनारायण नित्य निकलते और अस्त होते हैं। उन्हें रोक रखनेका कोई उपाय न होनेके कारण ही आषाढ़ बीत गया और वर्षा भी 'झाऊँ झाऊँ' करने लगी। विराजके चेहरेपर एक गहरी छाया क्रमशः और गहरी होने लगी। अब वह दृष्टि स्पष्ट और प्रखर हो गई। जो कोई उसकी ओर देखने जाता, उसीकी आँखें जैसे आप ही झुक जातीं। सूखेमें देखा गया अक्सर नाग पत्थरपर ही लगातार टक्कर खाकर, गिरकर जैसे देखता है, विराजकी आँखोंकी

दृष्टि भी वैसी ही करुण और वैसी ही भयानक हो उठी है। स्वामीके साथ बातचीत लगभग होती ही नहीं। वह जब चोरकी तरह आता-जाता है, उधर वैसे वह देखती ही नहीं। सभी उससे डरते हैं केवल छोटी बहू नहीं डरती। वह मौका मिलते ही जब-तब आकर उपद्रव किया करती है। पहले-पहले विराजने उसके हाथसे छुटकारा पानेकी बहुत चेष्टा की, लेकिन सफल नहीं हो सकी। आँखें लाल करनेपर वह गलेसे लिपट जाती है कड़ी बात कहनेपर पैर पकड़ लेती है।

उस दिन दशहरा था। बहुत तड़के छोटी बहू छुपकर आई और बोली—अभीतक कोई उठा नहीं है, चलो न दीदी, जरा नदीमें एक गोता लगा आवें।

उस पार कलसे जमींदारका घाट तैयार हुआ उसका नदीपर आना बन्द कर दिया गया था।

देवरानी-जेठानी दोनों स्नान करने गई। स्नान करके जलसे बाहर निकलते ही देखा थोड़ी दूरपर एक पेड़के नीचे जमींदार राजेन्द्रकुमार खड़ा है। इस जगह उस समय भी पूरी तरहसे अन्धकार दूर नहीं हुआ था तो भी दोनोंने उसे पहचान लिया। छोटी बहू झपसे सिटपिटाकर, सिमटकर विराजके पीछे जा खड़ी हुई। विराजको बड़ा आश्चर्य हुआ। इतने सबेरे यह आदमी आया कैसे? किन्तु तुरत ही उसके मनमें एक सम्भावना उठी कि शायद यह रोज इसी तरह पहरा दिया करता है। यों ही एक सेकिंड विराज दुविधामें रही, उसके बाद देवरानीका हाथ पकड़कर खींचकर बोली—चली आ री छोटी बहू, चली आ।

उसे साथ लेकर तेज चालसे दरवाजेतक पहुँचाकर विराज एकाएक कुछ सोचकर रुक गई। उसके बाद धीमी चालसे लौटकर राजेन्द्रसे कुछ दूरीपर जाकर खड़ी हो गई। उसकी दोनों आँखें जल रही थीं। झुटपुटे अस्पष्ट प्रकाशमें भी राजेन्द्र उस दृष्टिको सह न सका। उसने सिर नीचा कर लिया।

विराजने कहा—आप भले आदमीके लड़के हैं बड़े आदमी हैं। आपकी यह कैसी प्रवृत्ति है?

राजेन्द्र हतबुद्धि हो गया—कुछ जवाब न दे सका।

विराज कहने लगी—आपकी जमींदारी चाहे जितनी बड़ी हो आप जिस जगहपर खड़े हैं वह मेरी है।—फिर उस पारका बाग हाथसे दिखाकर कहा—आप जितने अधम हैं उस पारको उस पारकी एक-एक लड़की जानती है मैं भी जानती हूँ। जान पड़ता है, आपके कोई माँ-बहन नहीं है। बहुत दिन पहले अपनी दासीके हाथ मैंने आपको यहाँ आनेके लिए मना कर दिया था, वह आपने नहीं सुना।

राजेन्द्र विस्मय या भयसे इतना अभिभूत हो गया था कि इतनेपर भी कुछ बोल न सका।

विराजने कहा—आप मेरे स्वामीको नहीं जानते। जानते होते तो कभी इधर न आते। इसीसे आज कहे देती हूँ कि और कभी आनेके पहले उनको जाननेकी चेष्टा कर देखियेगा। इतना कहकर विराज धीरे धीरे चली गई। वह घरके भीतर जा ही रही थी कि उसने देखा पीताम्बर एक गड़ुआ हाथमें लिये खड़ा है।

बहुत दिनोंसे उससे बोलचाल नहीं थी, तो भी उसने पुकारकर कहा—भाभी जिससे तुम अभी बात कर रही थीं, वह यहीं जमींदार बाबू है न?

पलक मारते ही विराजका चेहरा और आँखें लाल हो गईं। वह 'हाँ' कहकर भीतर चली गई।

घर आकर वह अपनी बात तो उसी दम भूल गई, लेकिन छोटी बहूके लिए मन-ही मन अत्यन्त उद्विग्न हो उठी। वह केवल यही सोचने लगी कि क्या जाने उसे छोटे लल्लाने देख पाया था नहीं। किन्तु अधिक देरतक सोचना नहीं पड़ा लगभग दस मिनटके बाद उस घरसे मार-पीटका शब्द और छोटी बहूका आर्तस्वर सुन पड़ा।

विराज दौड़कर चौकेमें चली गई और काठकी मूर्तिकी तरह बैठ गई।

नीलाम्बर अभी-अभी नींदसे जागकर बाहर आकर मुँह धो रहा था। पीताम्बरके डाँटने-गरजनेका शब्द वह अचम्भेमें कान लगाकर सुनता रहा। उसके बाद ही झपटकर बेड़ेके पास आया और लात मारकर उसे तोड़ डाला और उसके घरमें जा खड़ा हुआ।

बेड़ा टूटनेके शब्दसे चौंककर पीताम्बरने सिर उठाया कि सामने ही यमदूतकी तरह बड़े भाईको देखकर वह विवर्ण होकर रुक गया।

ज़मीनपर पड़ी हुई छोटी बहूको सम्बोधन करके नीलाम्बरने कहा—भीतर जा बेटी, कोई डर नहीं है।

बहू काँपती हुई उठकर चली गई। तब नीलाम्बरने सहजभावसे कहा—बहूके सामने तेरा अपमान नहीं करूँगा लेकिन मेरी इस बातको भूलकर भी अवहेलना न करना कि जबतक मैं इस घरमें हूँ तबतक यह सब नहीं हो सकेगा। तू उसपर जो हाथ उठायेगा उसे ही तोड़ डालूँगा। इतना कहकर वह लौटा जा रहा था कि साहस बटोरकर पीताम्बर कह उठा—घरपर चढ़कर मारने तो आ गये किन्तु कारण जानते हो?

नीलाम्बर घूमकर खड़ा हो गया। बोला—नहीं जानना भी नहीं चाहता।

पीताम्बरने कहा—सो क्यों जानना चाहोगे? देख पड़ता है, तब तो मुझे बिल्कुल घर छोड़कर ही भागना होगा।

नीलाम्बर उसका मुँह ताकता रहा फिर बोला—घर छोड़कर किसे भागना पड़ेगा यह मैं जानता हूँ। तुझे याद न कराना पड़ेगा। लेकिन यह मैं तुझे बतलाये जाता हूँ कि जबतक यह नहीं होता, तबतक तुझे सब्र करके रहना ही पड़ेगा।

इतना कहकर नीलाम्बर लौटनेको हुआ कि पीताम्बर सहसा सामने आकर खड़ा हो गया। बोला—तो फिर तुमको भी सलाह देता हूँ दादा, कि दूसरेका शासन करनेके पहले अपने घरका शासन करना अच्छा है।

नीलाम्बर ताकता रह गया। साहस पाकर पीताम्बर कहने लगा—जानते तो हो कि उस पारका घाट किसका है? अच्छा। मैंने तभीसे छोटी बहूको घाटपर जानेको मना कर दिया था। आज रात रहे उठकर वह भाभीके साथ नहाने गई थी। कौन जाने इसी तरह रोज जाती हो।

नीलाम्बरने विस्मित होकर कहा—इसी अपराधपर तूने हाथ उठाया?

पीताम्बरने कहा—पहले सब सुन तो लो। वह जमींदारका लड़का—क्या जाने राजेन्द्र या क्या नाम है उसका—उसकी देश-विदेशमें सुख्यातिकी सीमा नहीं है। आज भाभी उसीके साथ आध घंटेतक बातें करती रही थीं?

नीलाम्बर कुछ समझ न पाकर कह उठा—कौन बातें करता रहा रे? विराज?

पीतांबरने कहा—जी हाँ नहीं।

तूने अपनी आँखों देखा है?

पीतांबरने मुँहपर हँसनेका-सा भाव लाकर कहा—मैं जानता हूँ कि तुम मुझे देख नहीं सकते—मेरा यह न्याय भगवान् करेंगे' लेकिन'

नीलांबरने डाँटकर कहा—फिर भगवानका नाम मुँहपर आता है। क्या करेगा सो कह।

पीतांबर कांप उठा। कुछ रुककर रुद्ध स्वरमें कहने लगा—आँखसे देखे बिना बात कहना मेरा स्वभाव नहीं है। कहता हूँ, अगर घरमें शासन न कर सको तो दूसरेको मारनेके लिए न यह दौड़ा करो।

नीलांबरके सिरपर जैसे अकस्मात् लाठीकी चोट पड़ गई। क्षणभर उद्भ्रान्त विमूढ़ दृष्टिसे ताकते रहकर उसने अन्तमें पूछा—आज बड़ेतक कौन बातें करता रहा विराज बहू? तूने अपनी आँखसे देखा है?

पीतांबर दो-एक पग पीछे और झुका या खड़ा होकर बोला—हाँ, आँखसे देखा है—आज मध्येसे जाकर अधिक ही होगा।

फिर नीलांबर कुछ देरतक चुपचाप ताकता रहकर बोला—अच्छा, अगर यही हुआ तो यह कैसे जाना कि बात करना आवश्यक न था?

पीतांबर मुँह फेरकर हँसकर बोला—यह तो नहीं जानता लेकिन मेरा भी मार-पीट करना उचित नहीं हुआ क्योंकि यह भार छोटी बहूके लिए नहीं बनाया गया है।

क्षणभरकी उत्तेजनासे नीलांबर दोनों हाथ उठाकर दौड़ा परन्तु सहसा रुक गया। पीतांबरके मुँहकी ओर देखता हुआ बोला—तू एक जानवर है, और फिर छोटा भाई ठहरा। बड़ा भाई होकर मैं तुझको शाप नहीं दूँगा। क्षमा करता हूँ। मगर आज तूने अपने गुरुजनके लिए जो कहा उसके लिए भगवान् तुझे क्षमा नहीं करेंगे—जा। यों कहकर वह धीरेसे अपने घरकी तरफ आकर टूटे हुए बेड़ेको खुद अपने हाथसे बाँधने लगा।

विराजने कान लगाकर सब सुना। लज्जा और घृणासे वह सिरसे पैरतक बार-बार काँप उठी। एक बार विचार किया कि सामने जाकर अपनी सब बात कह दे, किन्तु उसके पैर नहीं उठे। पतिके सामने वह यह बात कैसे

अपने मुँहसे उच्चारण करे कि उसके समस्त एक पर पुरुषकी कुभ दृष्टि पड़ी है।

बेड़ा बाँधकर नीलाम्बर बाहर चला गया।

नौकरको थाली परोसकर विराज बाहमें बैठी रही, रातको पतिके सो जानेपर चुपकेसे आकर बिछौनेपर पड़ रही और सबेरे उसकी नींद खुलनेके पहले ही बाहर निकल गई।

इसी तरह मामले खत्ते अब दो दिन बीत गये और नीलाम्बरने कुछ नहीं पूछा तब और एक तरहकी शंका उसके मनके भीतर धीरे-धीरे सिर उठाने लगी। क्योंकि सम्बन्धमें इतनी बड़ी बदनामीकी बातमें पतिके मनमें कोई कौतूहल न उत्पन्न होनेका कोई संगत कारण उसे ढूँढे नहीं मिला। अथवा इस घटनासे वह विस्मित हुआ है यह सम्भावना भी विराजको सान्त्वना नहीं दे सकी। एक तरफ इन दो दिनोंको उसने जैसे छुप-छिपकर बिताया है, वैसे ही दूसरी तरफ डर भरी उसे यह आशा लगी रही कि अब बात उठेगी अब वे बुलाकर घटना जानना चाहेंगे। तब वह आदिसे अन्ततक सब हाल कहकर, स्वामीके चरणोंके नीचे अपने हृदयका सारा बोझ उतारकर स्वस्थ होगी उसकी यह बेचैनी दूर हो जायगी। किन्तु कहाँ वह कुछ भी तो नहीं हुआ। नीलाम्बर चुप ही रहा।

एक बार विराजने यह भी सोचनेकी चेष्टा की कि सम्भव है, स्वामीने इसपर विश्वास ही नहीं किया। लेकिन फिर उसने सोचा कि उसका इस तरह सम्पूर्णरूपसे अपनेको छिपाना क्या पतिके मनमें सन्देह नहीं उत्पन्न कर रहा है! पर जिस बातको वह आप इतने दिनतक छिपाती आई है, उसे अब आप ही आकर कैसे कहे! वह दिन भी इसी तरह बीत गया। दूसरे दिन सबेरे विराज मर्मपीड़ित, व्याकुल हृदयसे घरका काम-धंधा कर रही थी। सहसा उसके हृदयके गहरे अन्तस्तलको मथकर धूमकेतुकी तरह यह भयंकर बात बाहर निकल आई कि अगर उन्होंने झूठ कलंककी बातपर विश्वास ही कर लिया हो तो!

नीलाम्बर पूजा-पाठ समाप्त करके उठनेवाला ही था कि विराज आँधीकी तरह उसके सामने आकर हाँफने लगी।

विस्मित नीलाम्बरके सिर उठाते ही विराज जोरसे होठसे होठ दबाकर कह

उठी—बताओ, मैंने क्या किया है ? मुझसे बोलते क्यों नहीं ?

नीलांबर हँस दिया। बोला—तुम तो भागती फिरती हो, बात किससे करूँ ?

भागती फिरती हूँ ! तुम क्या एक बार पुकार नहीं सकते थे ?

नीलांबरने कहा—जो आदमी भागता फिरे उसे पुकारनेसे पाप होता है।

पाप होता है तो यों कहो कि तुमने छोटे बबुआकी बातपर विश्वास कर लिया ?

सच बात है, विश्वास न करूँगा ?

विराज क्षोभ और दुःखसे रो दी। आँसुओंसे विकृत गलेसे चिल्लाकर बोली—सच नहीं, झूठ है। तुमने क्यों विश्वास किया ?

तुमने नदीके किनारे बात नहीं की थी ?

विराजने उद्धतभावसे उत्तर दिया—हाँ, की थी।

नीलांबरने कहा—तो मैंने इतना ही विश्वास भी किया है।

विराजने हथेलीसे आँखें पोंछते हुए कहा—अगर विश्वास ही किया है तो फिर उसी रोजकी तरह मुझे दण्ड क्यों नहीं दिया ?

नीलांबर फिर हँसा। शामके खिले फूलकी-सी उसकी निर्मल हँसीसे उसका मुखमण्डल उद्भासित हो उठा। दाहिना हाथ उठाकर कहा—अच्छा तो पास आओ, बचपनकी तरह और एक बार कान मल दूँ।

पलभरमें ही विराज सामने आकर, घुटनोंके बल बैठ गई और तुरन्त ही पतिकी छातीपर जोरसे गिरकर दोनों हाथ गलेमें डालकर फूटफूटकर रोने लगी।

नीलांबरने उसे नहीं रोका। उसकी भी दोनों आँखोंमें आँसू भर आये। वह पत्नीके सिरपर चुपचाप दाहिना हाथ रखकर मन-ही-मन आशीर्वाद देने लगा। कुछ देरमें जब रुलाईका जोर कम हो गया, तब विराजने सिर उठाये बिना ही कहा—उससे मैंने क्या कहा था जानते हो ?

नीलांबरने स्नेहपूर्वक मृदु स्वरसे कहा—जानता हूँ, उसे आनेसे रोक दिया है।

तुमसे किसने कहा ?

नीलांबरने हँसकर कहा—कहा किसीने नहीं। लेकिन एक अपरिचित आदमीसे बात की है, तो वह दुःखमें पड़कर ही की है, यह मैं जानता हूँ। तब

यह बात इसके सिवा और क्या हो सकती है ?

विराजकी आँखोंसे फिर आँसू बहने लगे ।

नीलाम्बर कहने लगा—लेकिन काम अच्छा नहीं किया । मुझे बताना चाहिए था, मैं ही जाकर उसे समझा देता । मुझे बहुत दिन पहले ही उसके मनका भाव मालूम हो गया था—कितने ही दिन सबेरे और शाम उसे देखा भी किया है, लेकिन तुमने मना कर दिया था उसीका खयाल करके किसी दिन कुछ नहीं कहा ।

उस दिन शामसे आकाशमें बादल छाये थे और बूँदाबाँदी हो रही थी । रातको पति-पत्नीमें फिर चर्चा चली ।

नीलाम्बरने कहा—आज दिनभर मैं उसकी प्रतीक्षामें ही रहा ।

विराज डरकर कह उठी—क्यों ? किसलिए ?

दो बातें न कहनेसे भगवानके सामने अपराधी होना पड़ेगा—इसलिए ।

भय और उत्तेजनाके मारे विराज उठ बैठी । बोली—ना, यह न होगा, किसी तरह न होगा । इसे लेकर तुम उससे एक शब्द भी न कह सकोगे ।

उसके मुख और आँखोंके भावको लक्ष्य करके नीलाम्बर अत्यन्त विस्मित होकर बोला—मैं तुम्हारा पति हूँ, मेरा क्या यह कर्त्तव्य नहीं है ?

बिना सोचे-विचारे ही विराज कह उठी—पहले पतिके और कर्त्तव्य करो उसके बाद यह कर्त्तव्य करने जाना ।

क्या !—कहकर नीलाम्बर क्षणभर स्तम्भित-सा हो रहा । अन्तको धीरेसे 'अच्छा' कहकर, एक साँस छोड़कर, करवट बदलकर चुप हो रहा ।

विराज उसी तरह पड़ी पड़ी स्थिर होकर सोचने लगी कि आज यह कैसी बात सहसा मेरे मुँहसे निकल गई !

बाहर वर्षाकी बड़ी बूँदोंके गिरनेका धीमा शब्द होने लगा और खुली हुई खिड़कीसे भीगी मिट्टीकी सोंधी सोहावनी गंध भीतर आने लगी । भीतर पति-पत्नी दोनों प्राणी चुपचाप स्तब्ध होकर पड़े रहे ।

बहुत देर बाद नीलाम्बर गहरे आर्त-स्वरमें—जैसे अपने मनमें ही कह रहा हो—कह उठा—मैं कितना निकम्मा और अपदार्थ हूँ विराज, यह जैसा तेरे पास सीखा वैसा और किसीके पास नहीं ।

विराजने कुछ कहना चाहा लेकिन उसके गलेसे बोल ही नहीं फूटा । बहुत

दिनोंके बाद आज इस अत्यन्त दुःख-दैन्य-पीड़ित दम्पतिके बीच शान्तिका सूत्रपात होते ही वह फिर छिन्न-भिन्न हो गया।

१०

दोपहरके समय यहाँ किसीको न देखकर छोटी बहू रोती हुई आई और विराजके पैरोंपर गिर पड़ी। स्वामीने जो अपराध किया था, उसके भयसे व्याकुल होकर इधर दो दिनोंसे वह इसी सुयोगकी ताकमें थी। रोकर बोली—उन्हें शाप न देना जीजी, मेरे मुँहकी ओर देखकर उन्हें क्षमा कर दो। उन्हें कुछ हो गया तो मैं जिऊँगी नहीं।

हाथ पकड़कर उसे उठाते हुए, विषादपूर्ण गम्भीर स्वरमें विराजने कहा—मैं शाप न दूँगी बहन। मेरा कुछ बिगाड़नेकी उसमें ताकत भी नहीं है। लेकिन तुम जैसी सती-लक्ष्मीकी देहपर बिना किसी अपराधके हाथ चलाना दुर्गा मैया तो नहीं सहन करेंगी!

मोहिनी काँप उठी। आँसू पोंछती हुई बोली—क्या करूँ जीजी उनका स्वभाव ही ऐसा है। जिन देवताने उनको इतना क्रोधी बनाया है वही क्षमा करेंगे। फिर भी कोई ऐसा देवी-देवता नहीं बचा जिसकी मैंने मानता न मानी हो। पर मैं बड़ी पापिन हूँ, किसीने मेरी पुकार नहीं सुनी। एक भी दिन ऐसा नहीं बीतता जीजी—कहते-कहते वह हठात् रुक गई।

अभीतक विराजने लक्ष्य नहीं किया था कि छोटी बहूकी दाहिनी कनपटीपर एक विलक्षण गहरा काला दाग पड़ा है। चौंककर कह उठी—री माथेपर क्या यह मारका निशान है?

छोटी बहूने लज्जित मुख नीचा करके गरदन हिलाई।

विराजने पूछा—काहेसे मारा था?

स्वामीकी लज्जाके मारे छोटी बहू सिर नहीं उठा पाती थी। उसने सिर झुकाये हुए ही धीरेसे कहा—क्रोध आनेपर उनको ज्ञान नहीं रहता जीजी।

सो तो मैं जानती हूँ। लेकिन मारा किस चीजसे?

मोहिनी वैसे ही सिर झुकाये बोली—पैरोंमें चट्टी थी

विराज स्तब्ध हो रही, उसकी आँखोंसे आग निकलने लगी। कुछ

दबे हुए विकृत कण्ठसे बोली—कैसे सह लिया तूने छोटी बहू !

छोटी बहू सिर कुछ ऊपर करके बोली—मुझे अभ्यास हो गया है बीबी !

विराजने जैसे उसकी बात कानसे सुनी ही नहीं। विकृत कण्ठसे कहा—और उसीके लिए तू क्षमा करनेको कहने आई है !

जेठानीके मुँहकी ओर देखकर छोटी बहूने कहा—हाँ बीबी तुम प्रसन्न न होओगी तो उनका अनिष्ट होगा, और सहनेकी जो बात कहती हो बीबी सो तो तुम्हींसे सीखा है। मेरा जो कुछ है सो सब तुम्हारे ही चरणोंकी

अधीर होकर विराज कह उठी—नहीं छोटी बहू नहीं। झूठी बात न कह ऐसा अपमान मैं नहीं सह सकती।

मोहिनीने जरा हँसकर कहा—अपना अपमान सह लेना ही क्या बहुत अधिक सहना है बीबी ? तुम्हारा जैसा स्वामी-सौभाग्य संसारमें सब नारियोंको नसीब नहीं होता, फिर भी तुम जो सह रही हो उसे सहना पड़ता तो हमारा चूर ह जाता। उनके मुँहकी हँसी गायब हो गई है, मनमें सुख नहीं है—यह सब तुम्हें रात-दिन आँखोंसे देखना पड़ता है। ऐसे स्वामीका इतना कष्ट तुम्हारे सिवा दूसरी कोई नहीं सह सकती बीबी।

विराज चुप हो रही।

छोटी बहूने दोनों हाथोंसे जल्दीसे उसके पैर पकड़ लिये और कहा—बताओ बीबी उन्हें क्षमा कर दिया ? तुम्हारे मुँहसे सुने बिना मैं किसी तरह ना छोड़ूँगी। तुम जो प्रसन्न न होगी तो उन्हें कोई भी नहीं बचा सकेगा बीबी !

विराजने पैर हटा लिये और हाथसे छोटी बहूकी ठोड़ी पकड़कर कहा—क्षमा किया।

एक बार फिर विराजकी चरणरज माथेसे लगाकर प्रसन्नमुख छोटी ब चली गई।

किन्तु विराज अभिभूतकी तरह उसी जगह [illegible] देखती स्तब्ध होकर बै

। उसके हृदयके अन्तस्तलसे कोई जैसे बा [illegible] र पुकारकर कहने लगा—

। देखकर सीख विराज !

इसके बहुत दिनतक छोटी बहू इस घरमें [illegible] *किन्तु अपनी एक आँ*

एक कान उसने इधर ही लगा रखा [illegible] *मौका आनेके समय उस*

बड़ी सावधानीसे इधर उधर देखकर इस घरमें प्रवेश किया।

विराज गालपर हाथ रखे रसोईघरके बरामदेके एक किनारे स्तब्ध होकर जैसी बैठी थी वैसी ही बैठी ही रही।

छोटी बहूने पास बैठकर विराजके पैर छूकर धीरेसे कहा—जीजी क्या पागल हुई जा रही हो!

विराजने मुँह छिपाकर क्षीण स्वरमें उत्तर दिया—तू न होती!

छोटी बहूने कहा—अपने साथ तुलना करके मुझको अपराधी न बनाओ जीजी। मैं तो तुम्हारे इन दोनों पैरोंकी धूलके योग्य भी नहीं हूँ। लेकिन तुम बताओ, क्यों ऐसी हो रही हो? जेठजीको आज तुमने खाने क्यों नहीं दिया!

विराजने कहा—मैंने तो खानेको मना नहीं किया।

छोटी बहूने कहा—मना नहीं किया यह ठीक है, लेकिन एक बार पास क्यों नहीं गई? खानेके लिए बैठकर उन्होंने कितनी बार पुकारा, एक बार जवाब-तक नहीं दिया। अच्छा तुम्हीं कहो, इससे दुःख होता है कि नहीं? एक बार अगर पास चली जाती तो वह थाली छोड़कर कभी न उठते।

तो भी विराज चुप रही।

छोटी बहू कहने लगी—'हाथ पैर ढीले हैं' कहकर मुझे धोखा न दे सकोगी जीजी। तुमने हमेशा सब काम-काज छोड़कर उन्हें सामने बिठाकर भोजन कराया है—संसारमें इससे बड़ा काम तुम्हारे लिए और कोई कभी नहीं रहा। आज

बात पूरी होनेके पहले ही विराजने पागलकी तरह उसका एक हाथ पकड़कर जोरसे खींचते हुए कहा—तो फिर चलकर देख, इतना कहकर उसे खींच लाकर रसोईघरके बीच खड़ा कर दिया और हाथसे थाली दिखाकर कहा—यह देख!

छोटी बहूने ध्यानसे देखा, एक बड़े पत्थरके पात्रमें बिना साफ किये मोटे चावलका भात और उसीके पास पकाया हुआ करेमुआका साग रखा था। और कुछ भी न था। आज और कोई उपाय न देखकर विराजने इसे नदीके किनारेसे तोड़कर पका लिया था।

देखते-देखते छोटी बहूकी आँखोंसे झर-झर करके आँसू गिरने लगे, किन्तु विराजकी आँखोंमें जलका आभासतक न था। दोनों बहुएँ—देवरानी जेठानी—चुपचाप एक दूसरेका मुँह ताकती रहीं।

विराजने अविकृत सहज स्वरमें कहा—तू भी तो एक स्त्री है, मुझे भी तो पकाकर स्वामीके आगे थाली रखनी पड़ती है। तू ही बता, दुनियामें क्या कोई स्त्री सामने बैठकर स्वामीका ऐसा भोजन करना देख सकती है! मुझे यह बता फिर तेरे मुँहमें जो आवे वही कहकर मुझे गाली दे—मैं कुछ न बोलूँगी।

छोटी बहू एक बात भी न कह सकी उसकी आँखोंसे उसी तरह लगातार जल झरने लगा।

विराज कहने लगी—दैव-संयोगसे अगर किसी दिन रसोईमें कोई दोष होनेसे उन्होंने एक कौर भी कम खाया है तो सारे दिन मेरे हृदयके भीतर कैसी सुइयाँ चुभती रही हैं, यह कोई और नहीं जानता तू जानती है छोटी बहू। और आज उनकी भूखके समय यह जो लाकर देना पड़ता है—सो यह भी शायद अब नहीं मिल सकेगा। आगे यह सहन न कर सकी, देवरानीकी छाती पर पछाड़ खाकर गिर पड़ी और दोनों हाथोंसे उसके गलेसे लिपटकर जोरसे रो उठी। इसके बाद सगी बहनोंकी तरह दोनों बहुत देरतक एक दूसरेके कंठसे लिपटी रहीं। बड़ी देरतक ये दोनों अभिन्न नारी-हृदय चुपचाप आँसुओंसे भीगते रहे। इसके बाद विराजने सिर उठाकर कहा—नहीं मैं तुमसे छिपाऊँगी नहीं क्योंकि मेरा दुःख समझनेवाला तेरे सिवा और कोई नहीं है। मैंने बहुत सोच-विचारकर देखा है कि मेरे यहाँसे हटे बिना उनका यह कष्ट दूर न होगा। लेकिन रहनेसे तो यह दुःख देखे बिना एक दिन भी न बिता सकूँगी। मैं जाऊँगी बता, मेरे जानेपर तू उन्हें देखेगी?

छोटी बहूने आँख उठाकर पूछा—कहाँ जाओगी?

विराजके सूखे होठोंपर एक कठिन दुखी हुई ठण्डी हँसीकी रेखा खिंच गई। जान पड़ता है, एक बार उसके मनमें दुविधा भी आई। वह हिचकी भी। उसके बाद बोली—यह कैसे जानूँगी बहन कि कहाँ जाना होता है। सुनती हूँ उससे बढ़कर पाप शायद और नहीं है। सो यह चाहे जो हो यह दिन-रातकी

कुढ़न तो मिट जायगी!

अबकी बार मतलब समझकर मोहिनी काँप उठी और व्यस्त होकर उसके मुँहपर हाथ रखकर कह उठी—छी छी यह बात मुँहपर भी न लाना जीजी, आत्म-हत्याकी बात जो कहता है, उसे पाप होता है और जो कानोंसे सुनता है उसे भी पाप लगता है। छी छी, यह क्या हो गई हो तुम जीजी!

विराजने हाथ हटाकर कहा—सो नहीं जानती। केवल यह जानती हूँ कि उन्हें अब मैं खानेको नहीं दे सकती। आज मुझे छूकर यह वचन दे कि जिस तरह होगा तू दोनों भाइयोंमें मेल करा देगी!

"वचन देती हूँ" कहकर मोहिनीने सहसा बैठकर विराजके दोनों पैर जोरसे पकड़कर कहा—तो मुझे भी आज एक भिक्षा दोगी, बोलो!

विराजने पूछा—क्या?

छोटी बहूने कहा—तो एक मिनट ठहरो, मैं आती हूँ।

इतना कहकर उसके जानेको पैर बढ़ाते ही विराजने उसका आँचल पकड़ लिया और कहा—नहीं जा नहीं। मैं एक तिनका किसीसे नहीं लूँगी।

छोटी बहूने कहा—क्यों न लोगी?

विराज बहू जोरसे सिर हिलाकर बोली—ना यह किसी तरह न होगा। मैं किसीका भी कुछ न ले सकूँगी।

छोटी बहूने क्षणभर स्थिर दृष्टिसे जेठानीकी इस आकस्मिक उत्तेजनाको लक्ष्य किया, उसके बाद वहीं बैठ गई और उसे जोरसे खींचकर पास बिठाकर कहा—तो सुनो जीजी! मालूम नहीं क्यों, पहले तुम मुझे प्यार नहीं करती थीं अच्छी तरह बात भी नहीं करती थीं। इसके लिए मैं छिपकर अकेलेमें कितना रोई हूँ, कितने देवी-देवताओंको पुकारा है, इसकी कोई गिनती नहीं। आज उन्होंने भी मुँह उठाकर देखा है और तुमने भी छोटी बहन कहकर पुकारा है। अब जरा सोचकर देखो, अगर मुझे इस हालतमें देखकर कुछ न कर पातीं, तो तुम किस तरह व्याकुल होती फिरतीं!

विराज जवाब न दे सकी, सिर झुकाकर रह गई।

छोटी बहू उठकर चली गई और जल्दी ही एक बड़ी टोकरीको सब तरहकी खानेकी सामग्रीसे भरकर लाई और सामने रख दी।

विराज स्थिर होकर देख रही थी। किन्तु छोटी बहू जब पास आकर उसके आँचलका एक छोर उठाकर उसमें एक सोनेकी मोहर बाँधने लगी, तब उससे नहीं रहा गया। उसे जोरसे पीछे ठेलकर चिल्ला उठी—ना, यह किसी तरह नहीं होगा—मर जानेपर भी नहीं।

मोहिनी उस धक्केको सँभालकर सिर उठाकर बोली—होगा क्यों नहीं, निश्चय होगा। यह मेरे जेठजीने मुझे ब्याहके समय दी थी।

इतना कहकर आँचलमें बाँधकर, झुककर और एक बार जेठानीकी चरण रज माथेसे लगाकर, वह घर चली गई।

११

ममताका हलके दिनका पीतलके कर्मोंका कारखाना एक दिन एकाएक बन्द हो गया और चाँदपाल आदिकी बड़ी लड़की यह खबर विराजको देने आई। साँचोंकी बिक्री बन्द होनेसे वह अपनी तरह-तरहकी क्षतियों तथा असुविधाओंका ब्योरा लगातार बकने लगी। विराजने चुप होकर सुना। उसके बाद वह केवल एक छोटी-सी साँस छोड़कर रह गई। लड़कीने समझा उसके दुःखका हिस्सा बँटानेलायक उसे नहीं मिला, इससे वह कुण्ठित होकर चली गई। हाय रे अबोध दुखियाकी लड़की! तू कैसे समझेगी कि उस छोटी-सी साँसमें क्या था, उस मौनकी आड़में कैसा तूफान उठ रहा था! शान्त-मौन पृथ्वीके अन्तस्तलमें कैसी आग धधकती है, यह समझनेकी क्षमता तू कहाँ पावेगी!

नीलाम्बरने आकर कहा—उसे काम मिल गया है। आनेवाली दुर्गापूजासे ही कलकत्तेके एक नामी कीर्तन-दलमें वह तबला बजावेगा।

खबर सुनकर विराजका चेहरा मुर्दे जैसा रक्त हीन हो गया। उसका स्वामी गायिकाके अधीन होकर, गायिकाके साथ, सब भले आदमियोंके सामने बाजा-बजाता फिरेगा तब आहार जुटेगा। लज्जा और धिक्कारसे वह जैसे धरतीमें समा जाने लगी लेकिन मुँह खोलकर मना भी नहीं कर सकी। और कोई उपाय जो न था! सन्ध्याके अन्धकारमें नीलाम्बर उसके मुखका भाव नहीं देख पाया,—अच्छा ही हुआ।

भादोंके सियालमें पानी जैसे घड़ी-घड़ी अपने जलके चिह्नको तट-प्रान्तमें

अंकित करते-करते सूखते सूख दरख्त जैसा जाता है ठीक उसी तरह विराजका शरीर सूखने लगा। बहुत देरीके साथ अत्यन्त सुस्पष्टरूपसे ठीक उसी तरह उसके शरीर-तटकी सारी मलिनताको निरन्तर अनावृत करती हुई उसके देववांछित अनुपम यौवनकी शोभा न जाने कहाँ गायब हो जाने लगी। देह सूख गई मुख मुरझा गया और दृष्टि अस्वाभाविक हो उठी—जैसे वह कोई भयावनी चीज निरन्तर देख रही है। अब घर उसे देखनेवाला कोई नहीं। थी केवल छोटी बहू। एक महीनेसे अधिक हुआ, वह भी मायके बीमार पड़ जानेके कारण मायके गई है। नीलांबर दिनको बैठा प्रायः ही नहीं रहता। जब आता है, तब रातका अंधकार छा जाता है। दोनों आँखें अक्सर लाल रहती हैं। होंठ गरम रहते हैं। विराज सब कुछ देख पाती है, सब कुछ समझ लेती है लेकिन कुछ भी नहीं कहती। कहनेको जी भी नहीं चाहता, अब साधारण बोल-चाल करनेमें भी उसे अशान्ति मालूम होती है।

कई दिनसे इधर तीसरे पहर जाड़ा लगकर सिरमें दर्द होने लगता है। इसी हालतमें उसे झिलमिलाता हुआ सन्ध्याका दीपक हाथमें लेकर रसोईघरमें प्रवेश करना पड़ता है। स्वामी घरमें रहते नहीं, इसलिए अब वह दिनको प्रायः भोजन नहीं बनाती रातको बनाती है परन्तु हर समय उसे बुखार रहता है। स्वामीका खाना हो जानेपर हाथ-पैर धोकर वह पड़ रहती है। इसी तरह उसके दिन बीत रहे हैं। आजकल विराज अपने ठाकुर देवताके मुँह उठाकर देखनेके लिए नहीं कहती और पहलेकी तरह प्रार्थना भी नहीं करती। नित्यकी पूजा समाप्त करके गलेमें आँचल डालकर जब प्रणाम करती है, तब मन ही मन केवल यही कहती है कि भगवान्, जिस राहसे जा रही हूँ, उसी राहमें जरा जल्दी जा सकूँ।

उस दिन सावनकी संक्रान्ति थी। सवेरेसे ही जोरकी वर्षा रुकनेका नाम नहीं लेती थी। तीन दिन ज्वर भोगनेके बाद विराज भूख-प्याससे व्याकुल होकर सन्ध्याके उपरान्त बिछौनेपर उठकर बैठ गई। नीलांबर घरमें न था। क्योंकि इतना ज्वर रहनेपर भी, परसों उसे सीतापुरके एक जनाढ्य शिष्यके यहाँ कुछ मामिकी आशासे जाना पड़ा था। किन्तु कह गया था कि किसी तरह रातको वहाँ नहीं रहूँगा, जिस तरह भी हो, उसी दिन सन्ध्यातक लौट

आऊँगा। परसों बीता कल गया, आजका दिन भी बीत चला, मगर उनके दर्शन नहीं हुए। कई दिनोंके बाद आज विराज दिनमें कई बार रोई है। जब किसी तरह धैर्य नहीं रहा गया तब सन्ध्याका दीपक जलाकर, एक ओढ़िया सिरपर डालकर काँपते-काँपते बाहरके रास्तेके किनारे आकर खड़ी हो गई। पगडंडी अन्धकारके बीच जहाँतक नजर गई उसने ध्यानसे देखा, लेकिन कहीं कुछ न देख पाकर लौट आई। भीगे कपड़े और भीगे चण्डीमण्डपकी सीढ़ीका सहारा लेकर वह बैठ गई और इतनी देर बाद फिर रोने लगी। क्या जाने, उनको क्या हुआ! एक तो दुःख कष्ट और अनाहारसे उनकी देह दुर्बल हो रही है उसपर यह परिश्रम! कहीं बीमार तो नहीं पड़ गये! कहीं किसी घोड़ा-गाड़ीके नीचे तो नहीं आ गये! क्या हुआ, क्या सर्वनाश घटित हो गया—घरमें बैठे-बैठे वह कैसे जाने! किस तरह क्या उपाय करे! और एक विपत्ति यह है कि पीताम्बर भी घर नहीं है। कल तीसरे पहर वह छोटी बहूको लेने गया है। सारे घरमें विराज एकदम अकेली है और स्वयं भी अस्वस्थ है। आज दोपहरसे बुखार चढ़कर उतर गया है मगर घरमें ऐसी कोई सी भी और चीज न थी, जिसे वह खाती। दो दिनसे उसने खाली पानी पिया है। पानीमें भीगनेके कारण उसे जाड़ा मालूम पड़ने लगा सिरमें चक्कर आने लगा। वह किसी तरह हाथों और पैरोंको जोर देकर सीढ़ी छोड़कर उठ खड़ी हुई और चण्डीमण्डपके भीतर जाकर जमीनपर ही पेटके बल पड़कर सिर पटकने लगी।

सदर दरवाजेपर किसीने धक्का दिया। विराजने एक बार कान लगाकर सुना। दूसरा धक्का पड़नेके साथ-ही-साथ 'आती हूँ' कहकर पल-भरमें ही दौड़कर उसने किवाड़ खोल दिये। अभी पलभर पहले वह उठकर बैठनेमें भी असमर्थ थी।

किवाड़ोंके बाहर जो खड़ा था वह उस मोहल्लेके किसानका लड़का था। उसने कहा—माँजी दादा ठाकुरने एक सूखी धोती माँगी है। दे दो।

विराज अच्छी तरह समझ नहीं पाई। चौखटका सहारा लेकर कई सेकेण्ड तक ताकते रहनेके बाद बोली—धोती माँगते हैं! कहाँ हैं वह?

लड़केने जवाब दिया—गोसाईं महाराजके बापकी गति करके अभी तक लौट रहे हैं।

ऐसे ही निर्जनकी तरह पड़ी पड़ी उसने न जाने क्या-क्या सोचकर देखना चाहा, सोचने भी लगी किन्तु उसका सभी सोचना असम्बद्ध था। अब पर, उसी बीच अकस्मात् उसको याद आ गया कि सारे दिन उन्होंने कुछ खाया-पिया नहीं।

फिर उससे रहा नहीं रहा गया। इसलिये ढिबरी जलाकर, दीपक हाथमें लेकर वह भण्डारमें गई और बारीकीसे खोजने लगी कि शायद कहीं कुछ निकल आवे। किन्तु कुछ भी न था। चावलका एक कण भी उसे न देख पड़ा। वह बाहर आकर खूँटीके सहारे कुछ देरतक खड़ी होकर सोचती रही। इसके बाद फूँक मारकर हाथका दीपक बुझाकर रख दिया और खिड़की खोलकर बाहर निकल गई। कैसा घोर अन्धकार था! किन्तु यह भीषण सन्नाटा, घनी झाड़ियों-काँटोंसे भरी फिसलन पड़नेवाला मार्ग वह सब कुछ भी उसकी गतिको नहीं रोक सका। बागके दूसरे छोरपर, बनके भीतर चाण्डालोंकी छोटी-छोटी झोपड़ियाँ थीं। विराज उसी ओर गई। बाहर कोई दीवार नहीं थी। विराजने एकदम आँगनमें खड़े होकर पुकारा—तुलसी!

पुकार सुनकर तुलसी रोशनी हाथमें लिये बाहर आकर विस्मयसे अवाक् हो गया।

इस अँधेरेमें तुम कैसे आई माँजी?

विराजने कहा—थोड़ेसे चावल दे।

चावल दूँ!—कहकर तुलसी हतबुद्धि हो गया, इस अद्भुत प्रार्थनाका कोई अर्थ उसे खोजे नहीं मिला।

विराजने उसके मुँहकी ओर देखकर कहा—खड़ा न रह तुलसी, जरा जल्दी लाकर दे।

तुलसीने और दो-एक प्रश्न करनेके बाद चावल लाकर विराजके आँचलमें बाँध दिये और कहा—लेकिन इन मोटे चावलोंसे क्या काम चलेगा माँजी? यह तो तुम लोग खा न सकोगे।

विराजने सिर हिलाकर कहा—खा सकेंगे।

इसके बाद तुलसीने रोशनी लेकर रास्ता दिखाना चाहा। विराजने मना करके कहा—जरूरत नहीं है, तू अकेला घरको छोड़कर न आ सकेगा। और वह पलक मारते

गति करके ! विराज स्तम्भित हो रही । गोपाल चक्रवर्ती इन लोगोंके एक दूरके नातेका आत्मीय था । उसके वृद्ध पिता बहुत दिनोंसे बीमार थे । दो दिन पहले त्रिवेणीमें[1] गंगा-यात्रा[2] कराई गई थी । आज दोपहरको उनकी मृत्यु हो गई । दाह करके अभी सब लोग लौटे हैं । उन्होंने सब खबर देकर अन्तमें बतलाया कि इधर आसपास दादा ठाकुरके बराबर किसीको नाड़ीकी परख नहीं है, इसीसे वह भी उसी दिनसे साथ थे ।

विराज व्याकुल-सी हुई भीतर आई और एक धोती देकर बिस्तरपर पड़ रही ।

जब प्राणीसे शून्य अँधेरे घरके भीतर उसकी स्त्री अकेली है बुखार, दुश्चिन्ता और अनाहारसे मृत हो रही है—यह सब जान-बूझकर भी जिसका स्वामी बाहर परोपकार करनेमें लगा है उस अभागिनको कहने-सुननेके लिए और क्या बाकी रहता है ! आज उसका शिथिल विकृत मस्तिष्क बार-बार जोर देकर कहने लगा —विराज संसारमें तेरा कोई नहीं है । तेरे माँ नहीं है, बाप नहीं है, भाई नहीं है—स्वामी भी नहीं है । है केवल यमराज । उनके पास जानेके सिवा तेरी ज्वाला शान्त होनेका कोई दूसरा स्थान नहीं है । बाहर वर्षाके शब्दमें झींगुरोंकी झंकारमें, हवाकी सनसनाहटमें यही 'नहीं है, नहीं है' का शब्द निकलकर उसके दोनों कानोंके भीतर गूँजने लगा । भण्डारमें चावल नहीं कोठारमें धान नहीं बागमें फल नहीं पोखरमें मछली नहीं—सुख नहीं, शान्ति नहीं, स्वास्थ्य नहीं, परम छोटी बहू नहीं । उसके साथ आज उसका स्वामी भी नहीं । सच था, आश्चर्य यह है कि आज किसीके खिलाफ विक्षेप और क्षोभका भाव भी उसके मनमें नहीं उठा । एक साल पहले स्वामीकी इस हृदयहीनताके सौ हिस्सेका एक हिस्सा भी, जान पड़ता है, उसे क्रोधसे पागल बना देता । किन्तु आज न जाने कैसा एक तरहका स्तब्ध अवसाद उसे अनुभूतिशून्य बना देने लगा ।

---

१ हुगली जिलेका त्रिवेणी नामक ग्राम । २ बंगालमें जब रोगीके बचने की कोई आशा नहीं रह जाती है या कण्ठश्वास चलने लगती है तब उसे चारपाई समेत गंगा या किसी नदीके किनारे ले जाकर अधजलमें रख देते हैं और सब 'हरिबोल हरिबोल' का उच्चारण करते हैं । इसीको गंगायात्रा कहते हैं ।

—अनुवादक

रहूँ। बल्कि होशमें तू नहीं है—तूने ज्ञान गँवा दिया है। तू अब अपने आपमें नहीं है।

विराज बैठी ही उसका मुँह ताकती रही।

नीलाम्बरने कहा—किसकी आँखोंमें धूल झोंकना चाहती है विराज? नहीं! मैं बड़ा ही मूर्ख हूँ इसीसे उस दिन पीताम्बरकी किसी बातपर मैंने विश्वास नहीं किया। लेकिन वह सच्चा भाई है उसने यथार्थ भाईका ही काम किया था। नहीं तो तू क्यों नहीं कह सकती कि कहाँ थी? क्यों झूठ कहा कि तू घाटपर थी?

विराजकी दोनों आँखें अब ठीक पागलकी आँखोंकी तरह चमकने लगीं। तथापि कण्ठस्वरको संयत करके जवाब दिया—झूठ बात इसलिए कही थी कि वह बात सुनकर तुम लज्जित होगे, दुःख पाओगे, शायद तुम्हारा खाना न होगा इसीसे। लेकिन वह सब मिथ्या है। तुम्हें लज्जा-शरम भी नहीं है, अब तुम मनुष्य भी नहीं रहे!—लेकिन तुमने झूठ बात नहीं कही? एक पशुको भी रखना बड़ा छल करते लज्जा होती किन्तु तुमको नहीं हुई! भले आदमी, बीमार स्त्रीको घरमें अकेली छोड़कर किस विपत्तिके घरमें तीन दिनतक तुम गाँजेकी दमपर दम क्या रहे थे, बताओ?

अब नीलाम्बर बरदाश्त न कर सका। 'बताता हूँ' कहकर हाथके पास रखा हुआ खाली पानका डिब्बा उठाकर उसने विराजके माथेको ताककर जोरसे खींच मारा। बड़ा डिब्बा उसके कपालमें लगकर झन्-से नीचे झुककर गिर गया। देखते-देखते उसकी आँखके कोनेसे बहकर होठोंके किनारेतक खून फैल गया।

बायें हाथसे माथा दबाकर विराज चिल्ला उठी—मुझे मारा?

नीलाम्बरके होठ और मुँह क्रोधसे काँपने लगे। बोला—ना मारा नहीं। लेकिन दूर हो मेरे सामनेसे—यह मुँह अब न दिखा—बेशरमी, दूर हो जा!

विराज उठकर खड़ी हो गई। बोली—जाती हूँ।

एक पग आगे बढ़कर सहसा लौटकर खड़ी होकर बोली—लेकिन सह तो सकोगे? कल जब याद आयेगा कि बुखारके ऊपर तुमने मुझको मारा है निकाल दिया है, तब उसे सह सकोगे? मैंने तीन दिनसे कुछ खाया-पिया नहीं तो भी

करके, शान्त भावसे ही जवाब दिया—आज खा-पीकर सो रहो, यह बात कल सुन लेना।

नीलाम्बरने सिर हिलाकर कहा—नहीं आज ही सुनूँगा। कहाँ गई थीं बोलो!

उसकी जिदका ढंग देखकर इतने दुःखमें भी विराजने हँसकर कहा—अगर न बताऊँ!

नीलाम्बरने कहा—बताना ही होगा। बताओ!

विराजने कहा—मैं यह किसी तरह न बताऊँगी। पहले खाकर सोओ, तब सुन सकोगे।

नीलाम्बरने इस हँसीपर कुछ ध्यान न दिया। दोनों आँखें फैलाकर सिर उठाया। उन आँखोंमें अब वह खुमारी या आच्छन्न भाव न था, हिंसा और घृणा फूटकर बाहर निकल रही थी। उसने भयानक स्वरमें कहा—ना किसी तरह नहीं बिना सुने तुम्हारे हाथका पानीतक मैं नहीं पिऊँगा।

विराज चौंक पड़ी। जान पड़ता है, काले नागके दाँत लगनेसे भी आदमी इस तरह नहीं चौंक उठता। वह लड़खड़ाते-लड़खड़ाते दरवाजेके पासतक पीछे हटकर जमीनपर बैठ गई। बोली—क्या कहा! मेरा छुआ पानीतक नहीं पियोगे!

ना किसी तरह नहीं।

विराजने पूछा—क्यों?

नीलाम्बर चिल्ला उठा—उसपर पूछती हो, क्यों!

विराज चुपचाप स्थिर दृष्टिसे स्वामीके मुखकी ओर ताकती रही। अन्तमें धीरेसे बोली—समझ गई। अब नहीं पूछूँगी। मैं भी किसी तरह नहीं कहूँगी। क्योंकि कल जब तुम्हें होश होगा, तब आप ही समझ जाओगे। इस समय तुम अपने आपेमें नहीं हो।

नशेबाज सब सह सकता है, लेकिन अपनी बुद्धि भ्रष्ट होनेकी बात नहीं सह सकता। गहरे कुपित होकर नीलाम्बर कहने लगा—मैंने गाँजा पिया है, यही तो कहती हो? गाँजा भाग मैंने कुछ नया नहीं पिया, जो मैं होश-हवासमें नहीं

१२

उसके आकाशमें गहरे बादल छाये थे, टिप-टिप करके पानी गिर रहा था। नीलाम्बर सूखे दरवाजेकी चौखटपर सिर रखकर किसी समय सो गया था। सहसा उसके सोये हुए कानोंमें आवाज आई—बहूजी!

नीलाम्बर हड़बड़ाकर उठ बैठा। शायद इसी नामको सुनकर ऐसे ही किसी घराऊ बादलोंसे घिरे प्रभातमें श्रीराधाजी इसी तरह व्याकुल होकर उठ बैठी थीं। वह आँखें मलता हुआ बाहर आया। देखा, आँगनमें खड़ा तुलसी पुकार रहा है। कल सारी रात वन-वनमें हर एक वृक्षके नीचे खोज-खाजकर, थककर, भूखे पेट प्यासे गले थका हुआ डरा हुआ नीलाम्बर लौट आया था और दरवाजेपर ही बैठा था। उसके बाद न जाने कब उसे नींद आ गई थी।

तुलसीने पूछा—सोये क्यों हैं बाबू?

नीलाम्बर हतबुद्धिकी तरह उसकी ओर ताकता हुआ बोला—तब तू किसे पुकार रहा था?

तुलसीने कहा—बहूजीको ही पुकारता हूँ बाबूजी। कल भर रात बीते भोर अँधेरेमें आकर माँजी हमारे घरसे मोरे बापका नाव माँगकर सवार थीं। इसीसे सबेरे दरवाजा खुला पाकर जानने चला आया कि उस नावसे कुछ काम निकला!

नीलाम्बर मन-ही-मन सब समझ गया लेकिन कुछ बोला नहीं।

तुलसी बोला—तो इतने तड़के खिड़की किसने खोली! जान पड़ता है बहूजी घर पर आ गई हैं। इतना कहकर वह चला गया।

नदीके किनारे-किनारे जितने घाट थे, जितने मोड़ थे, जितनी झाड़ियाँ थीं उनको देखते, खोजते नीलाम्बर—जिसने न नहाया था, न खाया था—सहसा एक जगह रुक गया बोला—यह क्या पागलपन मेरे सिरपर सवार हो गया है! क्या अबतक उसे यह याद आनेको बाकी रहा कि दिनभर भूखा, उसने कुछ खाया नहीं, अब भी क्या वह कहीं किसी कारणसे क्षणभर भी ठहर सकती है! तो फिर मैं यह कैसा अद्भुत काम सवेरेसे करता फिर रहा हूँ! यह सब आँखोंके सामने ऐसा सुस्पष्ट होकर दिखाई देने लगा कि उसकी सारी दुश्चिन्ता एकदम धो-पुँछ गई। वह कीचड़ ठेलता मेड़ोंके रास्ते लौटता,नाले-

इस अन्धकारमें तुम्हारे लिए भीख माँगकर आई हूँ। इस अभागीको छोड़कर रह तो सकोगे!

रक्त देखकर नीलाम्बरका नशा उतर गया था वह मुर्देकी तरह चुप हो रहा।

विराजने धोतीके आँचलसे रक्त पोंछकर कहा—इधर साल भरसे जानेके लिए सोच रही थी, लेकिन तुमको छोड़कर नहीं जा सकी। आँख उठाकर देखो मेरी देहमें कुछ नहीं रह गया है आँखोंसे अच्छी तरह नहीं सूझता एक पग भी चलनेकी शक्ति नहीं है। मैं न जाती लेकिन स्वामी होकर जो लांछन तुमने मुझपर लगाया है उससे अब मैं तुमको मुँह नहीं दिखाऊँगी। तुम्हारे पैरोंके नीचे मरनेका लोभ ही मेरा सबसे बड़ा लोभ था। इसी लोभको मैं किसी तरह छोड़ नहीं पा रही थी। आज उसे भी छोड़ती हूँ। कहकर माथेका रक्त पोंछते-पोंछते वह खिड़कीके खुले द्वारसे फिर एक बार अन्धकारपूर्ण बागमें जाकर अदृश्य हो गई।

नीलाम्बरने कुछ कहना चाहा, लेकिन जबान न हिल सकी। दौड़कर पीछे-पीछे जाना चाहा, लेकिन उठ नहीं सका। किसी जादूके मंत्रसे उसे अचल पत्थरकी मूर्ति बनाकर विराज आँखोंसे ओझल हो गई।

आज एक बार उस सरस्वती नदीकी ओर आँख उठाकर देखो, डर मालूम होगा। बैसाखकी यह स्वच्छ अल्पजलाकी, धीरे बहनेवाली नदी सावनके अन्तिम दिनोंमें कैसे तीव्र वेगसे दोनों किनारोंको डुबाकर तेज धारासे बह रही है। जिस घाटके पत्थरके ऊपर एक दिन वसन्तके प्रभातमें दोनों भाई-बहनोंको असीम स्नेह सुखसे एक साथ बैठे हमने देखा था, उसी घाटके पत्थरके ऊपर विराज आज अँधेरी रातमें जिस हृदयको लेकर काँपते-काँपते आकर खड़ी हो गई!

नीचे मत्त जल-राशि सुदृढ़ प्राचीरकी दीवारसे धक्का खाकर, टकराकर भँवरें बनाती हुई बह रही थी। उसी ओर एक बार झुककर देखकर वह सामने ताकती रही। उसके पैरोंके नीचे काला पत्थर, सिरके ऊपर बादलोंसे घिरा नीला आकाश, सामने काला जल, चारों ओर घना काला निस्तब्ध वन और हृदयके भीतर इन सबसे अधिक काली आत्महत्याकी प्रवृत्ति। वह वहीं बैठकर अपने आँचलसे अपने हाथ-पैर मजबूतीके साथ कसकर बाँधने लगी।

१२

उसके आकाशमें गहरे बादल छाये थे, टिप-टिप करके पानी गिर रहा था। नीलांबर बुझे दरवाजेकी चौखटपर सिर रखकर किसी समय सो गया था। सहसा उसके सोये हुए कानोंमें आवाज आई—बहूजी!

नीलांबर हड़बड़ाकर उठ बैठा। शायद श्यामका नाम सुनकर ऐसे ही किसी युगके बादलोंसे घिरे प्रभातमें श्रीराधाजी इसी तरह व्याकुल होकर उठ बैठी थीं। वह आँखें मलता हुआ बाहर आया। देखा आँगनमें खड़ा तुलसी पुकार रहा है। कल सारी रात वन-वनमें हर एक वृक्षके नीचे खोज-खोजकर, रोकर, थके हद थकेसे पहले थका हुआ, डरा हुआ नीलांबर लौट आया था और दरवाजे पर ही बैठा था। उसके बाद न जाने कब उसे नींद आ गई थी।

तुलसीने पूछा—भौजी कहाँ हैं बाबू?

नीलांबर हतबुद्धिकी तरह उसकी ओर ताकता हुआ बोला—तब तू किसे पुकार रहा था?

तुलसीने कहा—बहूजीको ही पुकारता हूँ बाबूजी। कल पहर रात बीते घोर अँधेरेमें आकर भौजी हमारे घरसे थोड़े चावल माँगकर लाई थीं। इसीसे सवेरे दरवाजा खुला पाकर जानने चला आया कि उस चावलसे कुछ काम निकला?

नीलांबर मन-ही-मन सब समझ गया लेकिन कुछ बोला नहीं।

तुलसी बोला—हा इतने तड़के खिड़की किसने खोली? जान पड़ता है बहूजी घाट पर गई हैं। इतना कहकर वह चला गया।

नदीके किनारे-किनारे जितने घाट थे जितने मोड़ थे, जितनी झाड़ियाँ थीं सबको देखते, खोजते, नीलांबर—जिसने न नहाया था न खाया था—सहसा एक जगह रुक गया बोला—यह क्या पागलपन मेरे सिरपर सवार हो गया है। क्या अबतक उसे यह याद आनेको बाकी होगा कि दिनभर हुआ मैंने कुछ खाया नहीं, अब भी क्या वह कहीं किसी कारणसे पलभर भी ठहर सकती है? तो फिर मैं यह कैसा अद्भुत काम सवेरेसे करता फिर रहा हूँ! यह सब आँखोंके सामने ऐसा सुस्पष्ट होकर दिखाई देने लगा कि उसकी सारी बुद्धिमत्ता एकदम धो पुँछ गई। वह कीचड़ ठेलता खेतोंके ढेले तोड़ता नाले-

को रौंदता उलटे पाँव घरकी ओर भागा ।

जब दिन समाप्त होनेको था, पश्चिम आकाशमें सूर्यदेवने अस्तगमनके लिए बादलोंकी ओटसे अपना लाल-लाल मुख बाहर निकाला था उस समय घरमें घुसकर वह सीधा रसोईघरमें जाकर खड़ा हुआ । यद्यपि ऊपर उस समय भी आसन बिछा हुआ है गत रात्रिका परोसा हुआ भात सूखा पड़ा है, चिउँटे और चूहे राज कर रहे हैं, किसीने छेड़ा नहीं है । क्रोधमें उसने गौर नहीं किया था इस समय भातकी हालत देखकर ही समझ गया कि यही दुःखीका दिया हुआ भोग मालूम है यही निराहार भूखे स्वामीके लिए विराज डरसे काँपती हुई अन्धकारमें छिपकर भीख माँग लाई थी, इसीके लिए उसने मार खाकर, अभागिन कटु बात सुनकर लज्जा और धिक्कारके मारे वर्षाकी भयानक रात्रिमें घर छोड़कर चली गई है ।

नीलाम्बर वहीं बैठकर, दोनों हाथोंसे मुँह छिपाकर, स्त्रियोंकी तरह आर्तनाद करता हुआ धाड़ मारकर रो उठा । जब कि वह अभीतक लौटकर नहीं आई, तब उसके लौट आनेकी बात वह न सोच सका—अपनी पत्नीको वह जानता था । वह बिना किसी संशयके यह समझता था कि विराजमें कितना स्वाभिमान है, प्राण जानेपर भी पराये घरमें आश्रय लेकर वह कभी इस कलंकको प्रकट करना नहीं चाहेगी । इसीलिए उसका हृदय भीतरसे इतनी जल्दी इस तरह हाहाकार कर उठा । इसके बाद पेटके बल औंधा पड़कर, दोनों हाथ सामने पसारकर, बिना विश्राम किये बारबार कहने लगा—यह मैं सह न सकूँगा विराज तू आ !

सन्ध्या हो गई, इस घरमें किसीने दीपक नहीं जलाया, रसोईके चौकेमें किसीने खाना बनानेके लिए प्रवेश नहीं किया । रोते-रोते नीलाम्बरकी आँखें और मुँह फूल गया किसीने आँसू नहीं पोंछे, दो दिनके भूखे-प्यासे नीलाम्बरको किसीने खानेके लिए नहीं बुलाया । बाहर जोरसे पानी बरसने लगा, घने-गहरे अन्धकारको चीरकर बिजलीकी रेखा चमक-चमककर उसकी बन्द आँखोंको भीतरतक उद्भासित करके दुर्योगकी खबर बता जाने लगी तो भी वह उठकर बैठा नहीं आँखें नहीं खोलीं, एकदम जमीनमें मुँह डालकर गों-गों करने लगा ।

जब उसकी नींद टूटी, तब सबेरा हो चुका था। बाहरकी ओर एक अस्पष्ट कोलाहल सुनकर, दौड़ आकर, उसने देखा दरवाजेपर एक बैलगाड़ी खड़ी है। व्यस्त होकर उसके सामने खड़े होते ही छोटी बहू घूँघट निकालकर उतर पड़ी। बड़े भाईके ऊपर एक तिरछी नजर डालकर पीताम्बर उस तरफ चला गया। छोटी बहूने पास आकर, धरतीपर सिर रखकर जैसे प्रणाम किया वैसे ही नीलाम्बर अस्फुट स्वरसे कुछ आशीर्वाद उच्चारण करनेके साथ ही जोरसे रो उठा। विस्मित छोटी बहू जबतक अपना झुका हुआ सिर उठावे, तबतक नीलाम्बर देहलीके साथ न जाने कहाँ अदृश्य हो गया।

छोटी बहू जीवनमें आज पहली बार अपने स्वामीके विरुद्ध प्रतिवाद करके टेढ़ी होकर खड़ी हो गई। आँसुओंके बोझसे दबे, लाल हो गये दोनों नेत्र उठाकर उसने कहा—तुम क्या पत्थरके बने हो? दुःख-कष्टमें जीजीने आत्म हत्या कर ली तब भी क्या हम गैर बने रहें? तुम रह सको तो रहो मैं आजसे उस घरका सब काम करूँगी।

पीताम्बर चौंक उठा—यह क्या कह रही हो!

मोहिनीने तुलसीके मुँहसे जितना सुना था और आप जितना अनुमान किया था सब रोते-रोते सुना दिया।

पीताम्बर सहसा विश्वास करनेवाला आदमी नहीं। बोला—उनकी देह तो पानीमें उतरा आवेगी।

छोटी बहूने आँखें पोंछकर कहा—नहीं भी उतरा सकती। धारामें बह गई है—हो सकता है, सती लक्ष्मीकी देहको माता गंगाने अपनी गोदमें उठाकर रख लिया हो। इसके सिवा, लोग ही कितने जी हैं, कौन पता लगाता फिरा है!

पीताम्बरने पहले विश्वास नहीं किया, अन्तमें किया कहा—अच्छा, मैं खोज कराता हूँ। कुछ सोचकर कहा—भाभी मायकेके घर तो नहीं चली गई!

मोहिनीने सिर हिलाकर कहा—कभी नहीं। वह बड़ी मान-मानकी थीं। वह कहीं नहीं गई, नदीमें ही प्राण दे दिये हैं।

"अच्छा, यह भी देखता हूँ" कहकर पीताम्बर सूखा मुँह लिये बाहर चला गया। आज एकाएक भाभीके लिए उसका जी खराब हो गया। लोगोंको बुलाकर, अपने एक आदमीको बिराजके मायकेके घर पता लगानेके लिए भेजकर, जीवनमें

आज उसने पहली बार पुण्य-काम किया। जोरसे पुकारकर कहा—मधुसे कहकर आँगनका ढेला तुड़वा दो, और तुमसे जो हो सके वह करो। रातको मुँहसे और देखा नहीं जाता।

इतना कहकर, थोड़ा-सा गुड़ मुँहमें डालकर और पानी पीकर, कलम कानमें दबाकर वह अपने कामपर चला गया। चार-पाँच दिन नागा होनेसे उसका बहुत नुकसान हो गया था।

काम करते-करते छोटी बहू बराबर आँसू पोंछकर यही सोच रही थी कि वे जिस मुँहकी ओर देख नहीं सकते वह मुँह न जाने कैसा हो गया है।

नीलाम्बर चण्डीमण्डपके बीच आँखें मूँदे निश्चल स्तब्ध बैठा था। सामनेकी दीवारमें राधाकृष्णकी युगल-मोहनीका चित्रपट टँगा था। यह पट बहुत पुराना है। जब रेलगाड़ी नहीं चली थी तब नीलाम्बरके बाबा पैदल यात्रा करके इसे वृन्दावनसे लाये थे। वह परम वैष्णव थे। उनसे यह पट मनुष्यकी वाणीमें बातें करता था—यह इतिहास नीलाम्बरने अपनी माताके मुँहसे बहुत बार सुना था। ठाकुरदेवताकी बात उसके निकट कोई दुर्बोध्य अस्पष्ट मामला न था। उस तरह उन्हें विश्वासके साथ पुकार सकनेसे वे सामने आकर बोलते हैं—बात करते हैं, यह सब उसके निकट प्रत्यक्ष सत्य था। इसीसे बचपनसे, छिपकर इस पटको बोलवानेका प्रयास वह न जाने कितना और कितनी बार कर चुका है; लेकिन सफल नहीं हुआ। आज वह, इस निष्फलताका कारण उसने अपनी अक्षमताको ही माना है। उसके मनमें यह संशय कभी किसी दिन नहीं उठा कि चित्रपट वास्तवमें ही नहीं बोलता है। लिखना पढ़ना उसने सीखा नहीं। अक्षरमात्र पहचानते थे। उसके बाद विराजसे उसने रामायण महाभारत पढ़ना और थोड़ा-बहुत चिट्ठी-पत्री लिख लेना सीखा था। शास्त्र या धर्मग्रन्थोंके पाठ भी वह नहीं पढ़ सका था इसीसे ईश्वर सम्बन्धी धारणा उसकी बहुत ही स्थूल रूपमें थी। आज वह, इस सम्बन्धमें कोई युक्ति-तर्क भी वह ध्यान न कर सकता था। छोटी अवस्थामें इन्हीं बातोंको लेकर कभी पीताम्बरके साथ और कभी विराजके साथ उसकी मार पीटतक हो जाती थी।

विराज नीलाम्बरसे केवल चार साल छोटी थी। इसलिए उसे उतना मानती ।थी। एक बार विराजने मार खाकर नीलाम्बरके पेटमें काटकर खून निकाल

दिया। सामने रानीको खड़ा किया और विराजकी भर्त्सना करके कहा था—छि: बेटी गुरुजनको इस तरह मारना न चाहिए।

विराजने रोते-रोते कहा था—उसने मुझे पहले मारा था।

तब उन्होंने पुत्रको बुलाकर कसम खा दी थी कि वह अब फिर कभी विराजकी देहपर हाथ न उठावे। उस समय उसकी अवस्था चौदह बरसकी थी, आज लगभग तीस बरसकी हो चला है, लेकिन उससे मालूमकर नीलाम्बरने उस दिनतक माताकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं किया।

आज स्तब्ध होकर बैठे हुए नीलाम्बरने पुराने दिनोंकी यह सब भूली हुई कहानी याद करके पहले अपनी मातासे क्षमाकी भिक्षा माँगी, उसके बाद अपने उन्हीं आराध्य देवताको बार-बार सीधी बातोंमें बुलबुलाकर, समझाकर कहने लगा—अन्तर्यामी भगवान्! तुम तो सब देख रहे हो! उसने कभी ज्ञानमात्र अपराध नहीं किया, सब सारा पाप मेरे ही सिरपर लादकर उसे स्वर्गमें जाने दो! यहाँ वह अनेक दुःख पाकर गई है, अब उसे और दुःख न देना। उसकी दोनों बन्द आँखोंके कोनोंसे आँसू गिर रहे थे। एकाएक उसका ध्यान भंग हो गया।

बापू!

नीलाम्बरने विस्मित होकर देखा छोटी बहू थोड़ी दूरपर बैठी है। उसके मुखपर साधारण-सा घूँघट है। उसने सहज कण्ठसे कहा—मैं आपकी बेटी हूँ बापू। भीतर चलिये। नहा-धोकर आज आपको थोड़ा भोजन करना होगा।

पहले नीलाम्बर अवाक् होकर देखता रहा—जैसे कितने ही युग बीत गये, किसीने उसे खानेके लिए नहीं पुकारा। छोटी बहूने फिर कहा—बापू, रसोई हो गई है।

अबकी नीलाम्बर समझा। एक बार उसका सारा शरीर काँप उठा। उसके बाद वह वहीं औंधा पड़कर रो उठा—रसोई हो गई बेटी!



गाँवमें सबने सुना, सभीने विश्वास किया कि विराज बहू नदीमें डूबकर मर गई। केवल पूर्ण पीताम्बरने विश्वास नहीं किया। वह मन ही मन तर्क करने लगा कि इस नदीमें इतने मोड़ हैं, इतने घाट-बाट हैं, लाश कहीं न

कहीं अवश्य भटक जायगी। नदीमें नाव लेकर, किनारे-किनारे घूम-फिरकर और किनारेकी भूमिके सारे वन-जंगलको अपने आदमियोंसे रत्ती-रत्ती छनवाकर भी जब उसका कोई चिह्न न पाया गया तब उसे निश्चयके साथ विश्वास हो गया कि भाभीने और चाहे जो किया हो, वह नदीमें डूबकर नहीं मरी। कुछ समय पहले उसके मनमें एक सन्देह उठा था अब फिर वही सन्देह मनके भीतर चक्कर काटने लगा। मगर किसीके आगे उसे प्रकट करनेका उपाय नहीं था। एक बार मोहिनीके आगे कहना शुरू किया तो वह जीभ काटकर, कानोंमें उँगली देकर पीछे हटकर बोली—तब तो देवी-देवता भी मिथ्या हैं, दिन भी झूठ है, रात भी झूठ है। फिर दीवारमें टँगे हुए भगवती अन्नपूर्णाके चित्रकी ओर देखकर बोली—मेरी जीजी इन्हीं भगवतीका अंश थीं। इस बातको और कोई माने या न माने, मैं जानती हूँ। इतना कहकर वह चली गई।

पीताम्बरने क्रोध नहीं किया। एकाएक वह ऐसा बदल गया था, जैसे कोई दूसरा ही आदमी हो।

मोहिनीने जेठसे बोलना शुरू कर दिया है। खाना परोसकर पास आकर बैठकर, पूछ-पूछकर, जरा-जरा करके, सारी घटना उसने सुन ली। सारे संसारमें केवल उसीने जाना कि क्या हुआ था, केवल उसीने समझा कि कैसी मर्मभेदी व्यथा उसकी छातीमें घुस गई है।

नीलाम्बरने कहा—बेटी मैंने कितना ही दोष क्यों न किया हो, लेकिन जान-बूझकर तो किया नहीं। फिर किस तरह वह माया-ममता छोड़कर चली गई! अब और न सह सकती थी, क्या इसीसे चली गई बेटी!

मोहिनी बहुत-सी बातें जानती थी। एक बार उसका जी चाहा कि कह दे—एक दिन जीजी अपने जानेकी बात कहती थीं और उस दिन अपने स्वामीका सारा भार मुझे सौंप गई हैं। लेकिन कहा नहीं चुप रही।

पीताम्बरने उससे एक दिन पूछा—तुम क्या दादासे बोलती, बात करती हो?

मोहिनीने कहा—हाँ। उन्हें बापू कहती हूँ, इसीसे बोलती हूँ।

पीताम्बरने हँसकर कहा—लेकिन लोग तो सुनकर निन्दा करेंगे।

मोहिनीने सर झुकाके कहा—लोग और क्या कर सकते हैं जो करेंगे! वे

अपना काम करे, मैं अपना काम करूँगी। इस हालतमें अगर मैं उनको बचा सकी तो लोक-निन्दाको सिर-आँखोंपर ले लूँगी। कहकर वह कामसे चली गई।

१३

ग्यारह महीने बीत गये। आगामी शारदीया पूजाके आनन्दका आभास जलमें, स्थलमें, आकाशमें, हवामें, सर्वत्र फैलता फिर रहा है। तीसरे पहर नीलाम्बर एक कम्बलके आसनपर स्थिर बैठा है। देह अत्यन्त कृश, मुख कुछ पीला-सा छोटी-छोटी दाढ़ीं आँखोंमें वैराग्य और विश्वव्यापी करुणा। महाभारतकी पोथी बन्द करके उसने विधवा बहूको सम्बोधन करके कहा—बेटी आज पड़ता है, आज पूँटी ससुरालसे आना न हुआ।

सफेद, बिना किनारीकी धोती पहने निराभरण छोटी बहू कुछ ही दूरपर बैठी मनसे महाभारत सुन रही थी। दिनकी ओर देखकर बोली—नहीं बापू, अब भी समय है आ भी सकते हैं।

दुर्दान्त ससुरके मर जानेके कारण अब पूँटी स्वाधीन है। वह स्वामी और दास-दासियोंको साथ लेकर आज अपने बापके घर आ रही है और यह खबर पहले ही भेज दी है कि पूजाके दिनोंमें वह यहीं रहेगी। अब भी उसे कुछ पता नहीं है। उसकी माताके समान भाभी नहीं है—छः महीने पहले साँपके काटनेसे छोटा भाई मर गया है, यह कुछ भी वह नहीं जानती।

नीलाम्बरने एक साँस छोड़कर कहा—जान पड़ता है, वह न आती तो अच्छा होता। एक साथ इतना दुःख वह कैसे सह सकेगी बेटी!

अत्यन्त प्यारी छोटी बहनको याद करके बहुत दिनके बाद आज उसकी सूखी आँखोंमें आँसू दिखाई दिये। जिस रातको पीताम्बरने साँपके काटनेपर उसके दोनों पैरोंको पकड़कर कहा था कि मुझे कोई और दवा नहीं चाहिए, केवल अपने पैरोंकी धूल मेरे माथेमें मुझमें दे दो। इससे अगर मैं नहीं बचा, तो फिर बचना भी नहीं चाहता और यह कहकर सब तरहकी झाड़-फूँकको जबरदस्ती बन्द कराकर वह लगातार उसके पैरोंके नीचे सिर रगड़ता रहा। विषकी यातनासे छुटकारा पानेकी आशासे अन्तिम क्षणतक उसने पैर नहीं छोड़े। उसी दिन नीलाम्बर अपना आखिरी रोना रोकर चुप हो गया था। आज फिर उसकी उन्हीं

आँखोंमें आँसू आ गये। पतिव्रता साध्वी छोटी बहू अपनी आँखोंके आँसू घुटनोंसे पोंछकर चुप हो रही।

नीलाम्बर धीरे-धीरे कहने लगा—उसके लिए भी उतना दुःख नहीं करता बेटी, मेरे पीताम्बरकी तरह विराजको भी अगर भगवान् उठा लेते तो आज मेरे लिए सुखका दिन था। सो तो हुआ नहीं। पूँटी अब बड़ी हो गई है, उसको समझ आ गई है। बताओ बेटी अपनी मामीका यह कलंक सुनकर उसके हृदयका क्या हाल होगा अब तो वह सिर उठाकर देख भी न सकेगी।

सुन्दरीको इतनी आत्म-ग्लानि हुई कि उसे यह ध्यान नहीं रह सकी और लगभग दो महीने पहले उसने नीलाम्बरके आगे यह कबूल कर लिया कि उस रातको विराज मरी नहीं जमींदार राजेन्द्रके साथ घर छोड़कर चली गई है। नीलाम्बरका मानसिक कष्ट अब उससे देखा नहीं जा रहा था। उसने समझा था कि इस बातको सुनकर वह क्रोधके वश होकर शायद इस दुःखको भूल जायगा। घर आकर नीलाम्बरने यह बात छोटी बहूसे कही थी।

उसी बातको स्मरण करके छोटी बहूने जरा देर चुप रहकर कोमल स्वरसे कहा—ननदजीसे कहनेकी जरूरत नहीं है।

कैसे छिपाऊँगा बेटी! जब वह पूछेगी कि मामीको क्या हुआ था तब क्या जवाब दूँगा!

छोटी बहूने कहा—जिस बातको सब जानते हैं कि जीजीने नदीमें प्राण दिये हैं वही।

नीलाम्बरने सिर हिलाकर कहा—यह नहीं हो सकता बेटी। सुना है पाप छिपानेसे और बढ़ता है। हम उसके अपने आदमी हैं, हम उसके पापका बोझ और नहीं बढ़ा देंगे। यह कहकर वह जरा हँसा। उस उतनी-सी हँसीमें कितनी व्यथा कितनी क्षमा है यह छोटी बहू समझ गई। क्षणभर बाद छोटी बहूने अत्यन्त संकोचके साथ मृदु स्वरसे कहा—ये सब बातें शायद सच नहीं हैं बाबू।

कौन सब बातें? तुम्हारी जीजीकी बातें?

छोटी बहू सिर झुकाये चुप रही।

नीलाम्बरने कहा—सच क्यों नहीं है बेटी, सब सच है। तुम जानती तो हो क्रोध आनेपर उस पापीको ज्ञान नहीं रहता था। जब जरा-सी थी, तब भी ऐसी

ी भी आर अब कहीं हो जाय, तब भी वही रही। उसपर जो अत्याचार और अपमान मैंने किया है, मैं समझता हूँ, उसे स्वयं भगवान् भी नहीं सह सकते, वह तो मनुष्य ठहरी।

नीलाम्बरने हाथसे एक बूँद आँसू पोंछकर कहा—याद आनेसे छाती फटती है बेटी, अभागिनने तीन दिनसे कुछ खाया-पिया न था, मरते आँखों-आँखोंसे मेरे लिए कुछ चावल भीख माँगने गई थी इसी अपराधपर मैंने—इसके आगे कुछ बोला नहीं गया। धोतीका खूँट मुँहमें भरकर, उमड़ी हुई रुलाईको जबरदस्ती रोककर, वह फूट-फूट उठने लगा।

छोटी बहू आप भी उसी तरह रो रही थी। उसके मुँहसे भी कोई बात नहीं निकल सकी। इसी तरह बहुत समय बीत गया। बहुत देर बाद कुछ प्रकृतिस्थ होकर आँख-मुँह पोंछकर, नीलाम्बरने कहा—बहुत सी बातें तुम जानती हो, तब भी सुनो बेटी। मालूम नहीं किस तरह, उसी रातको वह अभागिन, उन्मत्त होकर सुन्दरीके घर जा पहुँची थी उसके बाद ओह!—स्वर्गके दीपसे सुन्दरी उस पगलीको उसी रात राजेन्द्रबाबूके बजरेपर पकड़ लाई

उसकी बात पूरी होते-न-होते ही मोहिनी अपनेको भूलकर, पाषाण-प्रतिम मूक-वत् उस कण्ठसे कह उठी—यह कभी सच नहीं है बाबू, कभी सच नहीं है। दीदीकी देहमें प्राण रहते ऐसा काम कोई उनसे नहीं करा सकेगा। वे तो सुन्दरीका मुँहतक नहीं देखती थीं।

नीलाम्बरने शान्तभावसे कहा—यह भी मैंने सुना है। शायद तुम्हारी बात ही सच है बेटी, उसके शरीरमें प्राण न थे। अपनी तरह ज्ञान-बुद्धि होनेके पहले ही वह उसने मुझे अर्पण कर दिये थे। जो थे वे नहीं गए, आज भी वे मेरे पास हैं। इतना कहकर आँखें बन्दकर जैसे वह अपने हृदयकी भीतरी तहतक ढूँढ़कर देखने लगा।

छोटी बहू मुग्ध होकर उस शान्त पीले आँसू भरे मुखकी ओर ताकती रही। उस मुखमें क्रोध या हिंसा-द्वेषकी तनिक-सी भी छाया नहीं थी। थी केवल असीम व्यथा और अनन्त क्षमाकी अनिर्वचनीय महिमा। वह गलेमें आँचल डालकर प्रणाम करके नीलाम्बरकी पदरज माथेसे लगाकर उठ गई। सन्ध्यादीप जलाते-जलाते वह मन ही मन बोली, जीजीने पतिदान किया था,

इसीसे वे एक दिन भी इसे छोड़कर नहीं रहना चाहती थीं।

*   *   *

आज चार वर्षोंके बाद पूँटी मायके आई है और वह आदमीकी तरह ही आई है। उसके स्वामी, छ महीनेके शिशु-पुत्र पाँच-छः दास-दासी और अपरिमित चीजोंसे सारा घर भर गया। स्टेशनपर उतरते ही वह नौकरसे खबर सुनकर बड़ी व्याकुल होकर रोने लगी थी। ऊँचे स्वरसे रोते-रोते सारे मोहल्लेको चौंकाकर, रात एक पहर बीतनेके बाद घरमें प्रवेश करके, दादाकी गोदमें सिर डालकर, वह औंधी गिर पड़ी। उस रातको उसने पानीतक नहीं पिया दादाको भी नहीं छोड़ा और मुँह ढके रखकर ही थोड़ा-थोड़ा करके सब हाल सुना। पहले वह भाभीसे तो मसखरी करती थी उपेक्षा करती थी किन्तु दादाको जैसे ठीक पुरुष ही नहीं मानती थी संकोच भी नहीं करती थी। उसका सारा रूठना और सारे उपद्रव इस दादापर ही थे। ससुराल जानेके पहले दिन भी मायकेकी खिड़की साफकर वह दादाके गलेसे ही लिपटकर बेहद रोई थी। उसके उन्हीं दादाको जिन्होंने इतने दिन इतना दुःख दिया ऐसा जीर्ण-शीर्ण ऐसा पागल-सा कर दिया है उनके ऊपर उसके क्रोध और द्वेषकी सीमा नहीं रही। अपने दादाके इतने बड़े दुःखके आगे पूँटीने अपने सारे दुःखको तुच्छ मान लिया। उसे अपनी ससुरालवालोंके ऊपर घृणा उत्पन्न हो गई, छोटे दादाकी खोपड़े फाड़के मृत्यु उसे भरती नहीं और उसकी बुढ़िया विधवाकी ओरसे उसने एकदम मुँह फेर लिया।

दो दिन बाद उसने अपने स्वामीको बुलाकर कहा—मैं दादाको लेकर पश्चिम घूमने जाऊँगी तुम यह सब बाल-बच्चर लेकर घर लौट जाओ। और अगर जी चाहे तो न हो, तुम भी साथ चलो।

यतीन्द्रने अनेक युक्ति-तर्कोंके बाद विवश भाव ही सामञ्जस्य समझा और फिर एक बार सब असबाब बाँधने बँधवानेकी तैयारी करने चला गया। यात्राकी तैयारी होने लगी। पूँटीने सुन्दरीको गुप्तरूपसे बुला भेजा था, लेकिन वह आई नहीं। जो बुलाने गया था उससे कह दिया कि मैं यह मुँह न दिखा सकूँगी और जो कुछ कहनेका था सब कह चुकी हूँ। और कुछ कहनेको नहीं है।

पूँटी क्रोधसे होंठ चबाकर चुप हो गयी। पूँटीकी घोर उपेक्षा और उससे भी अधिक निष्ठुर व्यवहारने छोटी बहूके हृदयको कैसी चोट पहुँचाई, इसे अन्तर्यामीके सिवा और किसीने नहीं जाना। छोटी बहूने हाथ जोड़कर मन-ही-मन जेठानीको स्मरण करके कहा—दीदी तुम्हारे सिवा और कौन मुझे समझेगा! तुम कहीं भी हो तुमने अगर मुझे क्षमा कर दिया है, तो यही मेरे लिए सब कुछ है। छोटी बहू सदासे निस्तब्ध प्रकृतिकी है। आज भी वह चुपचाप सबकी सेवा करने लगी किसीसे भी कुछ नहीं कहा। बैठकी बिछानेका भार पूँटीने ले लिया था इसलिए इधर कई दिन वहाँ भी उसके बैठनेकी जरूरत नहीं हुई।

जानेके दिन नीलाम्बरने अत्यन्त विस्मित होकर कहा—तुम नहीं चलोगी बहू?

छोटी बहूने चुपचाप गर्दन हिला दी।

पूँटी लड़केको गोदमें लिये दादाके पास आकर सुनने लगी।

नीलाम्बरने कहा—यह नहीं हो सकता बेटी। तुम अकेली यहाँ कैसे रहोगी और यहाँ रहकर हो क्या होगा बेटी? चलो।

छोटी बहूने वैसे ही सिर झुकाये गर्दन हिलाकर कहा—नहीं बापू, मैं कहीं न जा सकूँगी।

छोटी बहूके मायकेकी माली हालत बहुत अच्छी है। विधवा लड़कीको ले जानेकी उन लोगोंने अनेक बार चेष्टा की थी, किन्तु वह किसी तरह नहीं गई।

सब नीलाम्बर समझता था कि छोटी बहू कैसे मरे हो कारण नहीं जाती। किन्तु अब इतने बड़े घरमें वह क्यों अकेली पड़ी रहना चाहती है, यह वह किसी तरह नहीं समझ सका। पूछा—क्यों बेटी क्यों कहीं नहीं जा सकोगी?

छोटी बहू चुप रही।

न बताओगी तो मेरा जाना न होगा बेटी!

छोटी बहूने मृदु कण्ठसे कहा—आप जाइये मैं रहूँगी।

क्यों?

छोटी बहू फिर कुछ देर चुप रहकर जैसे मन-ही-मन एक लज्जाकी जड़ताको प्राणपणसे दूर करनेकी चेष्टा करने लगी उसके बाद मुख ऊँचा कर बहुत धीरेसे बोली—दीदी शायद कभी आ जायँ इसीसे मैं कहीं न जा सकूँगी बापू!

नीलांबर चौंक उठा। तेज बिजलीकी चमकसे आँखें चौंधिया जानेपर जैसा होता है, वैसा ही अन्धकार उसने चारों ओर देखा। किन्तु केवल क्षणभरके लिए। तत्क्षण ही अपनेको सँभालकर अत्यन्त क्षीण करुण-सी हँसी हँसकर बोला—छिः बेटी, तुम भी अगर ऐसी पागलपनकी बात करो, ऐसी अबूझ हो जाओ, तो फिर मेरा क्या उपाय होगा!

छोटी बहूने क्षणभर आँखें मूँदकर अपने हृदयके भीतर देखा। उसके बाद संशयलेशहीन स्थिर धीमे स्वरसे कहा—मैं अबूझ नहीं हो गई हूँ बापू! आप जो भी चाहे कहिये। किन्तु जबतक चन्द्रमा और सूर्यको उदय होते देखूँगी तबतक किसीकी किसी बातपर विश्वास नहीं करूँगी।

भाई और बहन पास-पास खड़े होकर, अवाक् होकर, उसकी ओर ताकने लगे। उसने वैसे ही शुद्ध स्वरमें कहा—स्वामीके चरणोंमें सिर रखकर मरनेका वरदान सीताजीने आपसे माँग लिया था। वह वर कभी किसी तरह निष्फल नहीं हो सकता। सतीलक्ष्मी सीताजी निश्चय ही और आवेंगी। जबतक जिऊँगी इसी आशासे उनकी राह देखती रहूँगी। मुझसे कहीं जानेके लिए न कहियेगा बापू! इतना कहकर एक क्षणमें बहुत शोक आनेके कारण वह सिर झुकाकर रोने लगी।

अब नीलाम्बरसे और रहा नहीं गया। रुलाई उसके गलेतक आकर बाहर निकलनेके लिए जोर मारने लगी। कहीं आँखोंमें आकर उसे निकालनेके लिए वह रोककर भाग गया।

पूँटीने एक बार चारों ओर नजर डालकर देखा, उसके पास आकर अपने मस्तकको पैरोंके पास बिठाकर, आज पहले-पहल इस विपन्ना भाभीकी गोदमें छिपाकर अस्फुट स्वरमें रोते हुए कहा—भाभी! कभी तुमको पहचान नहीं पाई भाभी मुझे क्षमा करो।

छोटी बहूने झुककर उसके मस्तकको उठाकर छातीसे लगा लिया और उसके मुँहसे मुँह लगाकर अपने आँसू छिपाती हुई वह रसोई घरमें चली गई।

१४

विराजका मरना ही उचित था लेकिन वह मरी नहीं। उसी रातको, मरनेके

ठीक पहले क्षणमें, उसके बहुदिन व्यापी दुःख-दैन्यसे पीड़ित दुर्बल और विकृत मस्तिष्कने अनाहार और अपमानकी असह्य चोटसे, मरनेकी राह छोड़ सम्पूर्ण रूपसे विभिन्न राहमें पैर बढ़ा दिया। मुखको छातीपर रखकर जब वह अपने हाथ पैर आँचलसे बाँध रही थी, उसी समय कहीं बिजली गिरी। उस भयानक शब्दसे चौंककर, सिर उठाकर, उसीके तीव्र प्रकाशमें उस पारका वह नहानेका घाट और वहीं मछली पकड़नेके लिए बनाया गया बल्लीका मचान उसकी नजरमें पड़ गया। वे जैसे अबतक ठीक इसीकी अपेक्षामें चुपचाप आँखें खोले उसकी ओर देख रहे थे। चार आँखें होते ही इशारेसे उसे पुकार उठे। विराज उसी भयानक स्वरमें कह उठी—वे साधु-पुरुष मेरे हाथका पानीतक नहीं पियेंगे, किन्तु यह पापिष्ठ तो मिलेगा। अच्छी बात है।

आहारकी चोंचोंके मुँहपर जलता हुआ कोयला जैसे दबकर बुझकर राख हो जाता है, ठीक वैसे ही विराजके प्रज्वलित मस्तिष्कके सामने उसका अतुलनीय अमूल्य हृदय भी दबकर बुझकर राख हो गया। वह स्वामीको भूल गई, धर्मको भूल गई, मरणको भूल गई और एकटक प्राण-पणसे उस पारके घाटकी ओर ताकने लगी। फिर जोरसे गरजकर कड़कड़ाहटके साथ अन्धकारमें आकाशकी छाती चीरती हुई बिजली कौंध गई। विराजकी फैली हुई दृष्टि संकुचित होकर अपनी ओर लौट आई। एक बार मुँह फिराकर उसने पानीकी ओर देखा एक बार गरदन घुमाकर घरकी ओर देखा, इसके बाद उर्ध्वसे अपने हाथके बाँधे बन्धन खोलकर छलांग मारते ही वह अँधेरे वनमें जाकर गायब हो गई। उसके तेज पैरोंके शब्दसे कितने ही जीव-जन्तु खस-खस, सर सर करके राह छोड़कर हट गये पर उसने उधर ध्यान ही नहीं दिया—वह सुन्दरीके पास जा रही थी। पंचानन ठाकुरके मन्दिरमें उत्सव चल रहा था। पूजा चढ़ाने जाकर विराज कई बार उसका घर देख आई थी। इस गाँवकी बहू होकर भी बचपनमें इस गाँवके प्रायः सभी राह-घाट वह जान-पहचान गई थी। थोड़ी ही देरमें वह सुन्दरीकी बन्द खिड़कीके पास जाकर खड़ी हो गई।

इसके लगभग दो घण्टेके बाद ही कंगाली नामक धीवरने अपनी डोंगी उस पारकी ओर छोड़ दी। अनेक रातोंको वह ऐसे ही चोरीसे सुन्दरीको उस पार पहुँचा आया है और आज भी जा रहा है। किन्तु आज एककी जगह दो स्त्रियाँ

चुपचाप बैठी है। अन्धकारमें विराजका मुँह वह नहीं देख पाया, देख भी लेता तो पहचान न पाता। उसने घाटके पास आकर दूसरे ही क्षण किनारेपर एक अस्पष्ट दीर्घ सीधे शरीरको खड़ा हुआ देखकर विराजने आँखें मूँद लीं।

सुन्दरीने चुपकेसे फिर प्रश्न किया—किसने इस तरह मारा बहू!

विराजने अधीर होकर कहा—मेरी देहपर उनके सिवा और कौन हाथ उठा सकता है सुन्दरी जो तू बार-बार पूछ रही है! सुन्दरी अप्रतिभ होकर चुप हो रही।

और भी दो पहरके बाद एक सुसज्जित बजरेने जैसे ही लंगर उठानेका उपक्रम किया विराजने सुन्दरीकी ओर ताककर कहा—तू साथ न चलेगी!

सुन्दरीने कहा—नहीं बहू मैं यहाँ नहीं रहूँगी तो लोग सन्देह करेंगे। अच्छा बहू डरो नहीं। फिर भेंट होगी।

विराजने और कुछ नहीं कहा। सुन्दरी बंगालीकी डोंगीपर बैठकर अपने घर लौट गई।

जमींदारका सुन्दर सुशोभित बजरा विराजको लेकर, किनारा छोड़कर, त्रिवेणीकी ओर चल दिया। डाँड़के शब्दको दबाकर भोरकी हवा चलने लगी। ऊपर एक किनारे मौन राजेन्द्र नीचा मुँह किये मदिरापान करने लगा। विराज पत्थरकी मूर्तिकी तरह पानीकी ओर ताकती हुई बैठी रही। आज राजेन्द्रने मधुर मदिरा पी थी। शराबका नशा उसके शरीरके रक्तको उत्तप्त और मस्तिष्कको उन्मत्तप्राय बना रहा था। बजरा जब ग्रामसीमाकी सीमाके बाहर हो गया तब वह उठकर विराजके पास आ बैठा। विराजके खुले केश बिखरकर लोट रहे थे, माथेपरका आँचल खिसककर कन्धेके ऊपर आ गया था—किसी बातका उसे होश न था। कौन आया कौन पास बैठा इधर उसने ध्यान ही नहीं दिया।

लेकिन राजेन्द्रको यह क्या हो गया! किसी भयंकर स्थानमें अकेले आ पड़नेपर भूत-प्रेतके भयसे आदमीके हृदयमें जैसी धड़कन भर जाती है ठीक उसी तरह उसके मनमें भी आतंककी आँधी उठ खड़ी हुई। वह ताकता ही रहा झुककर बातचीत नहीं कर सका।

अब तक इसी रमणीके लिए उसने क्या नहीं किया! जो साधारण दिन

स मन ही मन पोषण करता फिरा है। नींदमें, जागतेमें, ध्यान करता रहा है जिसे आँखोंसे देख पानेके लोभसे—खाना-सोना भूलकर वन-जंगलमें छिपा रहा है। जिसका स्वप्नमें भी खयाल न था वही खबर आज उस सुन्दरीने लाकर, होठोंसे लगाकर, उसके कानमें कही थी उस भावके आवेगसे अभिभूत होकर बहुत देरतक वह अपने इस सौभाग्यको हृदयंगम ही नहीं कर सका था।

सामने नदी घूमकर, दोनों किनारोंके दो बड़े-बड़े पेड़के झुरमुटें, बहुतसे पुराने बरगद और पाकरके वृक्षोंके भीतरसे होकर गई थी। जगह-जगह बाँसकी कमचियों और वृक्षोंकी डालोंने उनको अस्पष्ट ढककर सम्पूर्ण स्थानको घोर अन्धकारसे भर रखा था। इस स्थानमें प्रवेश करनेके पहले राजेन्द्रने साहस बटोरकर, कण्ठकी जड़ता हटाकर, किसी तरह कह डाला—तुम—आप—आप जरा भीतर चलकर बैठिये यहाँ पेड़ोंकी डालियाँ वगैरह लगेंगी।

विराजने मुँह घुमाकर देखा। सामने एक छोटा-सा दीपक जल रहा था, उसीके क्षीण प्रकाशमें दोनोंकी आँखें चार हुईं—पहले भी हो चुकी थीं। उस समय वह दुश्चरित्र पराई जमीनपर खड़े होकर भी उस दृष्टिको सहनकर सका था किन्तु आज अपने अधिकारके भीतर अपनेको पापके नशेमें चूर करके भी, वह इस दृष्टिके सामने अपना सिर सीधा नहीं रख सका उसने गर्दन झुका ली।

लेकिन विराज ताकती ही रही। परपुरुष उसके इतने निकट बैठा है अब भी मुखपर कोई आवरण नहीं है, सिरपर जरा-सा आच्छादन नहीं है। इसी समय बजरा घनी अपार ढँकी हुई एक खाड़ीके भीतर घुसते ही डाँड़ चलानेवाले डाँड़ छोड़कर छोटी-छोटी डालियाँ हटानेमें व्यस्त हो गये। यहाँपर नदी अपेक्षाकृत सँकरी थी, इसीलिए धारेका आकर्षण बहुत ही तेज था। 'ओ रे, सावधान।' कहकर राजेन्द्रने डाँड़ चलानेवालोंको सावधान करके उनके ऊपर नजर रखकर विराजसे 'कुछ कम जायगा, भीतर आइये' कहकर आप कमरेमें चला गया।

विराज मोहाच्छन्न और यंत्र-चालितकी तरह उसके पीछे-पीछे जाकर, कमरेके भीतर पैर रखते ही अकस्मात् 'भैया रे!' कहकर चिल्ला उठी।

उस चीत्कारसे राजेन्द्र चौंक उठा। दीपककी अस्पष्ट धुँधली रोशनीमें उस समय विराजकी दोनों आँखें और रक्तसे धुला हुआ माँगका सेंदुर आभूषणके

दोनों नेत्रोंकी तरह जल उठे थे। वह भयाक्रान्त पापी उस अग्निके सामनेसे चोट खाये हुए कुत्तेकी तरह एक भीषण विकृत शब्द करके काँपता हुआ हट गया। बिना जाने अन्धकारमें पैरके नीचे गीले ठंडे और चिकने साँपपर पैर पड़ जानेसे मनुष्य जैसे उछल पड़ता है वैसे ही विराज छिटककर बाहर आ गई। उसने एक बार पानीकी ओर देखा और उसके बाद ही 'मैया रे! यह क्या किया मैंने!' कहकर वह उसी अन्धकारपूर्ण अथाह जलके बीच कूद पड़ी।

डोंगी चलानेवाले माझी आर्तनाद कर उठे इधर उधर दौड़ पड़े जिससे बजरा उलटनेको हो गया। इसके सिवा वे और कुछ भी नहीं कर पाये। आसपाससे जलकी ओर ताककर भी उस दुर्भेद्य अन्धकारमें कुछ भी न देख पाये। राजेन्द्र अपनी जगहसे जरा भी नहीं हिला। उसका सारा नशा उतर गया था सो भी यह क्या था। कुछ देरमें भाटेके खिंचावसे बजरा आप ही बाहर निकल आया। माझीने उद्विग्न मुखसे पास आकर पूछा—बाबू साहब क्या किया जायगा? पुलिसमें खबर देनी होगी?

राजेन्द्र विह्वलकी तरह उसके मुँहकी ओर ताकते रहकर काँपते हुए गलेसे बोला—क्यों जेल जानेके लिए! अरे गफार किस तरह हो सके, भाग चल।

गफार माझी पुराना आदमी था, बाबूको पहचानता था। सभी पहचानते थे। इसीसे मामला कुछ-कुछ पहलेसे ही ताड़ गये थे, इस समय इस इशारेसे उसकी आँखें खुल गईं। वह और सबको मना करके चुपके-चुपके आज्ञा देकर बजरेको उड़ाता हुआ अदृश्य हो गया।

कलकत्तेके पास पहुँचकर राजेन्द्रने स्वस्तिकी साँस ली। गत रात्रिके अत्यन्त घने अन्धकारमें आमने-सामने बैठकर उसने जो आँखें देखी थीं उन्हें स्मरण करके आज दिनके समय इतनी दूर आकर भी उसके शरीरमें कँपकँपी आने लगी। उसने अपने कान पकड़कर मन ही मन कहा—इस जीवनमें अब यह काम कभी न करूँगा। किसके भीतर क्या छिपा हुआ है कोई नहीं जानता। उस पगलीने अपनी भयानक आँखोंसे उसके पैतृक प्राण नहीं हर लिये इसीको अपना बड़ा भाग्य उसने समझा और किसी कारणसे किसी भी समय उधर मुँह कर सकूँगा इसका भरोसा उसे नहीं रहा। अबतक मूर्ख कुलटाओंसे ही वह मिला हुआ था सती क्या चीज है, यह उसे ज्ञान न था। आज उस परिचयसे अपने

कदाचित जीवनमें पहले-पहल होश हुआ कि कैंधुरसे लेका जा सकता है, लेकिन जीवित विपदर इतने बड़े जमींदारके बड़केके भी खेलनेकी चीज नहीं।

१५

उस दिन तीसरे पहर जो स्त्री बिराजके सिरहाने बैठी थी उससे पूछकर बिराजने जाना कि वह हुगलीके अस्पतालमें है। बहुत दिनतक वात-श्लेष्मा विकारके बाद जब उसे होश हुआ है, तभीसे वह धीरे-धीरे अपनी बात स्मरण करनेकी चेष्टा कर रही थी। एक-एक करके बहुत-सी बात उसे याद भी आई हैं।

एक दिन वर्षाकी रातमें उसके स्वामीने उसके शरीरके ऊपर कुठाघात किया था। पीड़ासे जर्जर, उपवाससे शिथिल टूटी हुई उसकी देह और विकल मन उस निदारुण अपमानको सहन नहीं कर सका। कुलपर कुल उठाते रहकर बहुत दिनोंसे ही वह शायद पागल-सी हो रही थी। उस दिन अभिमान और घृणासे 'अब उनका मुँह न देखूँगी' कहकर सारे बंधन तोड़-ताड़कर नदीमें डूब मरने गई थी' किन्तु मरी नहीं।

उसके बाद ज्वर और मानसिक विकारकी झोंकमें वह बजरेपर चढ़ी थी और आधी रातमें नदीमें फाँदकर तैरकर किनारेपर पहुँच गई थी। भीगे सिर और भींगे कपड़ोंसे सारी रात अकेली बैठी वहीं काँपती रही थी। अन्तको न जाने कैसे एक गृहस्थके द्वारपर आकर पड़ गई थी। बस इतना ही याद आता है। यह याद नहीं पड़ता कि कौन यहाँ लाया, कब लाया, कितने दिनोंसे यहाँ इस तरह पड़ी हुई है। और याद आता है कि वह गृह-त्यागिनी कुलटा है, परपुरुषका आश्रय लेकर गाँवसे बाहर हुई थी।

इसके आगे और कुछ वह सोच न पाती थी—सोचना भी नहीं चाहती थी। इसके बाद क्रमशः अच्छी होने लगी उठकर थोड़ा थोड़ा चलने लगी। किन्तु भविष्यकी ओरसे अपनी चिन्ताको उसने प्राणपणसे अलग रखा। वह कैसी घटना थी यह उसके शरीरका प्रत्येक अणु-परमाणु दिन-रात भीतर-भीतर अनुभव अवश्य करता था किन्तु जो पर्दा पड़ा हुआ है उसका जरा-सा कोना उठाकर देखनेमें भी भयसे उसका सारा शरीर ठण्डा पड़ जाता था सिरमें चक्कर आने लगता था और उसे बेहोशी-सी आती जान पड़ती थी।

एक दिन अगहनके महीनेमें सबेरे वही स्त्री उसके पास आकर बोली कि तुम अच्छी हो गई हो, अब तुम्हें यहाँसे अन्यत्र जाना होगा।

विराज 'अच्छा' कहकर चुप हो रही। वह स्त्री उस अस्पतालकी ही थी। उसने समझा था कि इस बीमार मुसलमानीका कोई आत्मीय-स्वजन शायद नहीं है। उसने कहा—बुरा न मानना बच्ची मैं पूछती हूँ कि जो लोग तुमको यहाँ रख गये थे, वे तो फिर किसी दिन देखने आये नहीं! वे क्या तुम्हारे अपने आदमी नहीं थे?

विराजने कहा—नहीं। उन्हें तो मैंने कभी आँखसे नहीं देखा। एक दिन अँधेरी रातमें मैं त्रिवेणीके पास जलमें डूब गई थी। जान पड़ता है वे लोग ही दया करके मुझे यहाँ रख गये थे।

स्त्रीने कहा—ओह, जलमें डूबी थी! तुम्हारा घर कहाँ है जी?

विराजने मामाके घरका नाम लेकर कहा—मैं वहीं जाऊँगी, वहाँ मेरे अपने आदमी हैं।

वह स्त्री अधिक अवस्थाकी थी और विराजके अच्छे स्वभावके कारण उसके ऊपर कुछ ममता भी उसे हो गई थी। उसने स्नेहसे भीगे स्वरमें कहा—वहीं जाओ बच्ची। जरा सावधानीसे रहना कुछ दिनमें अच्छी हो जाओगी।

विराजने जरा हँसकर कहा—अब अच्छी क्या होऊँगी मैं! यह आँख भी ठीक न होगी और यह हाथ भी अच्छा न होगा।

रोगके बाद उसकी बायीं आँख अन्धी और बायाँ हाथ बेकार हो गया था। उस स्त्रीकी आँखोंमें आँसू भर आये। बोली—कहा नहीं जा सकता बच्ची, अच्छा भी हो सकता है।

दूसरे दिन वह अपना एक पुराना जाड़ेका कपड़ा और कुछ राह-खर्च दे गई। विराज उसे लेकर, प्रणाम करके बाहर जा रही थी, सहसा लौटकर बोली—मैं जरा अपना मुँह देखूँगी एक शीशा अगर हो

"है क्यों नहीं अभी देती हूँ" कहकर जरा देरमें ही लौट आकर एक आइना विराजके हाथमें देकर वह अन्यत्र चली गई। विराज फिर एक बार अपने कोठेके पलंगपर लौट आकर शीशा लेकर बैठी। अपने मुखके प्रतिबिम्बकी ओर देखते ही एक अतीव घृणासे उसका मुँह अपने-आप विमुख हो गया। दर्पणको

झुककर सिरहानेमें मुँह छिपाकर वह गम्भीर आर्तस्वर कर उठी। उसका सिर मुँड़ा हुआ है—उसके वे आकाशसे छाये बादलोंके समान काले केश कहाँ हैं! उसके सारे मुखको इस तरह कठ विकृत किसने कर दिया! वह कमलदलायत विशाल आँखें कहाँ गईं! वह अतुलनीय कुन्दन-सा रंग किसने हर लिया! भगवान्! यह कैसा भारी दण्ड तुमने दिया! अगर कभी भेंट हो गई तो वह मुख कैसे सामने करेगी! जितने दिनतक इस देहमें प्राण रहते हैं उतने दिन तक आशा एकदम निर्मूल होकर नहीं मरती। इसीसे शायद अत्यन्त क्षीण, थोड़ी-सी आशा, अन्तःसलिला नदीकी तरह अत्यन्त गुप्त अन्तस्तलमें उस समय भी बह रही थी। हे दयामय! उसे दुःख देकर—नष्ट करके—तुमको क्या मिला!

ज्ञान और आनेके बाद रोगशय्यामें धीरे-धीरे जब स्वामीका मुख उसे उज्ज्वल होकर दिखाई देता था तब कभी-कभी सहसा ख्याल होता था कि मैंने जो कुछ किया है वह तो अज्ञान अवस्थामें ही किया है तो क्या वह अपराध क्षमा नहीं हो सकता! सब पापोंका प्रायश्चित्त है क्या केवल इसीका नहीं है! अन्तर्यामी तो जानते हैं, यथार्थ पाप मैंने नहीं किया; तथापि जो कुछ किया है वह क्या इतने दिनों तक जो स्वामीकी सेवा की है उससे नहीं धो-पुँछ जायगा! बीच-बीचमें सोचती थी कि उनके मनमें तो क्रोध नहीं टिकता अगर एकाएक पैरोंपर जाकर गिर पड़ूँ और सब कुछ खोल-कर कह दूँ तो वह मेरे मुँहकी ओर देखकर क्या करेंगे! ऐसा होनेपर वह सम्भवतः क्या करेंगे इस कल्पनाको कितने रंगोंसे, कितनी तरहसे रंगकर, सँवारकर देखनेके लिए वह रात-रातभर जागकर बिता देती थी नींद आनेपर उठ जाती, पानीसे आँखें और मुँह धोती और फिर नये सिरेसे इसी प्रसंगको सोचने बैठती थी। हाय भगवन्! उसके उस विचित्र चित्रको क्यों इस तरह दोनों पैरोंसे रौंदकर तुमने चूर-चूर कर दिया! वह अपने स्वामीके पैरोंपर कभी गिरकर लज्जाके मारे अब यह मुँह उठाकर उनके मुँहकी ओर कैसे देखती!

उस कमरेमें एक और बीमार स्त्री थी। विराजको इस तरह रोते देखकर वह उठकर पास आ गई और विस्मयके स्वरमें पूछने लगी—क्या हुआ जी! क्यों रोती हो!

हाय रे! और एक आदमी विराजके रोनेका कारण जानना चाहता है!

विराजने परपर आँखें पोंछ डालीं और किसी ओर दृष्टिपात न करके वह धीरेसे बाहर निकल गई।

उस दिन लोगोंकी भीड़भाड़से भरी और उनके बोल-चालसे गूँज रही सड़क के एक किनारे होकर जब उसने अपने अनभ्यस्त श्रान्त दोनों पैरोंको धीरे जीवनकी उद्देश्यहीन अनिश्चित यात्राके लिए आगे बढ़ाया तब उसकी छाती को चीरकर एक लम्बी साँस बाहर निकल आई। उसने मन ही मन कहा— भगवान्! शायद तुमने यह अच्छा ही किया। अब कोई इधर आँख उठाकर भी नहीं देखेगा—पर मुख और ये आँखें शायद इसी यात्राके योग्य हैं। गाँवके लोगोंने जाना है कि वह पतित्यागिनी कुलटा है। इसीसे उसके लिए यह मुख उठाकर अपने गाँवका मुख अपने स्वामीका मुख देखना निषिद्ध हो गया है। शायद इस मुखका ऐसा हो जाना ही तुम्हारा मंगलमय विधान है ईश्वर!— विराज रास्तेपर चलने लगी।

१६

कितने ही दिन बीत गये। विराज पहले दासीवृत्ति करने गई थी; किन्तु उसकी टूटी हुई देह काम न कर सकी गृहस्थने विदा कर दिया। उससे भिक्षा ही उसकी उपजीविका है। वह राह-राह भीख माँगती है हाटके नीचे पड़कर जा लेटी है और पेड़के नीचे ही पड़ रहती है। इस वर्तमान जीवनमें उसके पिछले जीवनका रत्तीभर भी चिह्न मौजूद नहीं है। उसके शरीरपर शतछिन्न वस्त्र, जटा बने हुए घोंसलेसे रूखे बाल, भिक्षामें मिली हुई एक मैली कथरी है। इस समय जैसी ही उसकी देह है, वैसा ही वर्ण है, वैसा ही रूप है। अब प, अभी उसकी अवस्था केवल पचीस वर्षकी है। एक दिन इसी देहकी तुलना स्वर्गमें भी नहीं मिलती थी! अतीतको तोड़कर, अलग करके भगवान्ने जैसे उसे नये सिरेसे गढ़ दिया है। वह आप भी सब भूल गई है। भूल नहीं सकी केवल दो बातें। एक तो कुछ माँगते समय 'दो' कहनेमें उसका मुँह लाल हो जाता है, आज भी यह शब्द उसके गलेसे स्पष्ट नहीं निकल पाता और दूसरी बात वह नहीं भूलती कि उसे बहुत दूर जाकर मरना होगा। मरनेका वह स्थान किस देशान्तरमें है—यह अवश्य वह नहीं जानती किन्तु यह जानती है

के इस सुदूर स्थानपर पहुँचनेके लिए ही वह बराबर इधर उधर दौड़ रही है। वह
इसी तरह मरनी न रहता स्वामीको नहीं दिखा सकेगी, और उसका सच्चा
इस पापके बिना मरनेसे ही उसको यह अवस्था भयसे देखकर स्वामीको
प्रेम पा सकती, न एक क्षणके लिए भी भूल न सकनेके कारण वह निरन्तर
दूर हटते जा रहे थे।

वह एक बस्ते बराबर पर चल रही है लेकिन उसका वह अन्तिम
स्थान कहाँ है? कहाँ, किस भूमिखण्डपर, इस अभागे तथा मरुस्थलको
लाँघकर इस कल्पित जीवनको चुपचाप समाप्त कर सकेगी। आज दो दिनसे
वह एक वृक्षके नीचे पड़ी है उठ नहीं सकी!

फिर धीरे धीरे रोगने घेर लिया है—खाँसी, बुखार, छातीमें दर्द। इस
तरहसे बड़ी बीमारीमें पड़कर अस्पताल गई थी अच्छी होने न होने पर पथभ्रम,
मनपान और आधा पेट भोजन। उसकी देह बहुत सबल थी, इसीसे अबतक
टिकी है किन्तु अब बात पता है नहीं टिकेगी। आज आँखें मूँदकर सोच
रही थी कि यह वृक्षतल ही क्या वह गन्तव्यस्थान है? इसीके लिए क्या यह
इतने देश घूमी है, इतना रास्ता बिना विश्राम किये चली है? अब क्या
वह न उठेगी?

दिन समाप्त हो गया, वृक्षकी सबसे ऊँची चोटीपरसे अस्तोन्मुख सूर्यकी
अन्तिम आभा कहीं हट गई। सन्ध्याकी घंटाध्वनि गाँवके भीतरसे बहती
हुई आकर उसके कानोंमें पड़ी। इसीके साथ उसकी मन्द आँखोंके सामने
अपरिचित ग्राम-वधुओंकी शान्त मंगल-मूर्तियाँ नाच उठीं। इस समय कौन
क्या कर रही है किस तरह दीपक जलाती है, हाथमें दीपक लेकर कहाँ-कहाँ
दिखाती फिरती है, अब गलेमें आँचल डालकर प्रणाम करती है, तुलसी
चौतरेपर दीपक रखकर भगवान्‌के चरणोंमें कौन क्या कामना निवेदन कर
रही है यह सब कुछ वह आँखोंसे देखने लगी और कानोंसे सुनने लगी।
आज बहुत दिनोंके बाद उसकी आँखोंमें आँसू आये। जैसे कितने ही हजार
वर्ष बीत गये हैं वह किसी घरमें सन्ध्याका दीपक नहीं जला सकी, किसीके
मुखको स्मरण करके भगवान्‌के चरणोंमें उसकी आयु और ऐश्वर्यके लिए प्रार्थना
नहीं कर सकी। इन सब चिन्ताओंको वह प्राणपणसे दूर रखती थी। किन्तु

रहा रहे हैं। पहले पूँटीने ऐसा नहीं सोचा था। वह हताश नहीं हुई थी। समझती थी और दो दिन बीतें सब ठीक हो जायगा, किन्तु दो-दो दिन करके चार-पाँच महीने बीत गये, कहाँ कुछ भी तो न हुआ! घर छोड़कर आनेके दिन मोहिनीकी बातोंसे व्यवहारसे विराजके ऊपर उसके मनमें एक करुणाका भाव जाग उठा था; उसकी बातोंपर विश्वास भी किया था। यदि उसका दादा ठीक हो जाता तो बचपनकी बातें याद करके वह शायद मन ही मन विराजको सम्पूर्णरूपसे क्षमा भी कर सकती। वास्तवमें क्षमा करनेके लिए, उसी भाभीको थोड़े मधुर भावसे स्मरण करनेके लिए एक समय वह आप भी व्याकुल हुई थी, लेकिन वह सुयोग उसे मिलता कहाँ है! दादा कहाँ ठीक होते हैं! एक तो संसारमें ऐसे किसी दुःखकी, ऐसे किसी कारणकी वह कल्पना ही नहीं कर सकती, जिससे इस आदमीको इतने दुःखमें डालकर कोई हटकर खड़ा हो सकता है। भाभी भली हो या बुरी, अब पूँटी उधर भ्रूक्षेप भी नहीं करती किन्तु उसके दादाको त्यागकर जानेके अक्षम्य अपराधकी जो स्त्री अपराधिनी है उसके प्रति पूँटीके विद्वेषकी भी जैसे सीमा नहीं रही, वैसे ही, उस अभागिनीको हर घड़ी स्मरण करके, उसके वियोगको इस तरह मनमें पालकर, जो आदमी अपनेको इस तरह तिल-तिल क्षय करता जा रहा है, उसके ऊपर भी उसका चित्त प्रसन्न नहीं हुआ।

एक दिन वह मुँह फुलाये आकर बोली—दादा चलो, घर चलें।

नीलाम्बरने कुछ विस्मित होकर ही बहनके मुँहकी ओर देखा। कारण आधा महीना प्रयागमें बितानेकी बात हुई थी। पूँटीने दादाके मनका भाव समझकर कहा—एक दिन भी अब रहना नहीं चाहती, कल ही चलूँगी।

उसके स्वभावको देखकर नीलाम्बरने जरा विषादकी हँसी हँसकर कहा—क्यों रे पूँटी क्या बात है?

पूँटीने अबतक जोर करके आँसू रोक रखे थे, अब रो पड़ी। अश्रुविकृत स्वरमें बोली—रहकर क्या होगा? तुम्हें यहाँ अच्छा नहीं लगता तुम खर्च-खर्च करके प्रतिदिन सूखते जा रहे हो। ना, मैं किसी तरह एक दिन भी नहीं रहूँगी।

नीलाम्बरने स्नेहसे हाथ पकड़कर, खींचकर, पास बिठाकर कहा—लौट जानेसे

हाँ क्या मैं अच्छा हो आऊँगा रे ! इस देहके ठीक होनेकी आशा अब मैं नहीं करता पूँटी—इससे एक बारगी जो होना हो वह घर आकर यहीं हो।

दादाकी बात सुनकर पूँटी और अधिक रोती हुई बोली—तुम क्यों उसे हमेशा इस तरह याद किया करते हो ? दिन-रात सोच-सोचकर ही तो तुम ऐसे हुए जा रहे हो।

तुमसे किसने कहा कि मैं उसे हमेशा याद करता हूँ ?

पूँटीने उसी तरह जवाब दिया—कहेगा और कौन ? मैं खुद ही जानती हूँ।

नीलाम्बरने कहा—तू उसे नहीं याद करती ?

पूँटीने आँसू पोंछकर उद्धत भावसे कहा—ना, नहीं याद करती। उसे याद करनेसे पाप होता है।

नीलाम्बर चौंक पड़ा—क्या होता है ?

पाप होता है। उसका नाम लेनेसे मुँह अपवित्र होता है स्नान करना पड़ता है। कहते-कहते उसने तिरस्कारके साथ ऐसा दादाकी स्नेहकोमल दृष्टि पलभरमें ही बदल गई है। नीलाम्बरने बहनके मुँहकी ओर देखकर कठिन स्वरमें कहा—पूँटी !

सुनकर वह डर गई और अत्यन्त कुण्ठित हो पड़ी। वह दादाकी बड़ी दुलारी बहन है। बचपनसे ही हजार अपराध करनेपर भी कभी उसने दादाकी ऐसी आँखें नहीं देखीं ऐसा स्वर नहीं सुना। इतनी बड़ी अवस्थामें झिड़की खाकर क्षोभ और अभिमानसे उसका सिर झुक गया।

नीलाम्बर और कुछ न कहकर जब वहाँसे उठ गया तब पूँटी आँखोंमें आँचल देकर फफककर रोने लगी। दोपहरको दादाके भोजनके समय पास नहीं गई। तीसरे पहर दासीके हाथ खानेकी सामग्री भेजकर आप आड़में खड़ी रही।

नीलाम्बरने न तो कुछ खाया और न बात ही की।

शाम हो चुकी है। नीलाम्बर सन्ध्या-जप आदि आह्निक समाप्त करके पूजाके आसनपर ही चुपचाप बैठा है। पूँटीने चुपकेसे पीछे आकर घुटने टेककर दादाकी पीठपर मुँह रख दिया। उसका दादासे सन्धि करनेका यही तरीका है। बचपनमें अपराध करके, मारपीटसे डाँट खाकर, वह इसी तरह आकर परिहार करती थी। नीलाम्बरको सहसा यह स्मरण हो आया और उसकी आँखें

गीली हो उठीं। पूँटीके सिरपर हाथ रखकर कोमल स्वरमें उसने कहा—क्या है रे!

पूँटी पीठ छोड़कर बालककी तरह दादाकी गोदमें आँखें गिराकर, मुँह छिपाकर रोने लगी। नीलांबर उसके सिरपर एक हाथ रखकर चुपचाप बैठा रहा। बहुत देर बाद पूँटीने रुआँसी आवाजमें कहा—अब कभी न कहूँगी दादा!

नीलांबर हाथसे उसके केशोंको इधर उधर करता हुआ बोला—ना अब कभी न कहना।

पूँटी चुप होकर वैसे ही पड़ी रही।

उसके मनकी बात समझकर नीलांबरने कोमल स्वरमें कहा—वह तेरी बड़ी है—गुरुजन है। केवल नातेमें ही नहीं पूँटी उसने तुझे माकी तरह पाला-पोसा है और तेरी माताके समान हो गई है। और लोग जो चाहे कहें, लेकिन तेरे मुँहसे यह बात निकलना घोर अपराध है। पूँटीने आँखें पोंछते पोंछते कहा—वह क्यों हम लोगोंको इस तरह छोड़कर चली गई?

वह क्यों गई पूँटी, सो केवल मैं जानता हूँ और जो सबके अन्तर्यामी हैं वह जानते हैं। वह आप भी नहीं जानती थी—उस समय वह पागल हो गई थी। उसको जरा भी ज्ञान या होश होता तो वह आत्महत्या ही करती पर यह काम न करती।

पूँटीने और एक बार आँखें पोंछकर उसकी हुई आवाजमें कहा—तो अब क्यों नहीं वह आती दादा?

या है और कुछ नहीं।

पूँटी फिर रो पड़ी।

नीलाम्बरने हाथसे अपनी आँखें पोंछकर कहा—वह अपनी साधकी—कामनाकी—दो बातें अब सब मुझसे कहा करती थी। एक साध यह कि अन्त समय वह मेरी गोदमें सिर रख सके और दूसरी साध यह कि सीता-सावित्रीकी तरह होकर मरनेके बाद उन्हीं सतियोंके पास जाय। अभागिनकी सभी साध मिट गई।

पूँटी चुप होकर सुनने लगी।

नीलाम्बर आँसुओंसे रुँधे गलेको साफ करके बोला—तुम सभी उसे अपराध लगाते हो। मना नहीं कर पाता इससे मैं भी चुप रहता हूँ। लेकिन क्या भगवान्को कैसे धोखा दूँ! वह तो देखते हैं कि किसकी भूल, किसके अपराधका बोझा सिरपर लादकर वह डूब गई। तू ही कह मैं किस मुँहसे उसे दोष दूँ! मैं उसे आशीर्वाद दिये बिना कैसे रहूँ! नहीं बहन संसारकी नजरमें वह चाहे कितनी कलंकिनी हो उसके खिलाफ मेरा कोई क्षोभ, कोई शिकायत नहीं है। इस जन्ममें पाकर भी अपने दोषसे उसे मैंने गँवा दिया भगवान् करे, अगले जन्ममें भी मैं उसे पाऊँ।

वह आगे कुछ कह न सका क्योंकि उसका गला एकदम रुँध गया। पूँटीने जल्दीसे उठकर आँचलसे दादाके आँसू पोंछते-पोंछते आप भी रो दिया। सहसा उसे ध्यान पड़ा कि दादा शेष कहीं हटके जा रहे हैं। रोकर कहा—जहाँ इच्छा हो वहाँ रहो दादा लेकिन मैं तुमको एक दिनके लिए भी कहीं अकेला नहीं छोड़ सकती, नहीं छोड़ूँगी।

नीलाम्बर सिर उठाकर जरा हँसा।

विराज जगन्नाथपुरीकी राहपर लौटी आ रही थी। इसी राहको पकड़कर जब वह अनुदिन मृत्युशय्याकी खोजमें गई थी, उसके उस जानेमें और अब इस आनेमें कितना अन्तर है। अब वह अपने घर आ रही है। उसकी दुर्बल देह राहमें जितना ही अग्रसर होकर विश्रामकी भिक्षा माँगने लगी, उसे अपनी देहपर उतना ही क्षोभ और खीझ आने लगी। वह किसी भी कारणसे कहीं भी विश्राम करनेको राजी नहीं। उसकी आँखें भस्ममें परिवर्तित हो गई हैं,

गीली हो उठीं। पूँटीके सिरपर हाथ रखकर कोमल स्वरमें उसने कहा—
क्या है रे !

पूँटी पीठ फेरकर बालककी तरह दादाकी गोदमें औंधी गिरकर, मुँह छिपा कर रोने लगी। नीलाम्बर उसके सिरपर एक हाथ रखकर चुपचाप बैठा रहा। बहुत देर बाद पूँटीने रुआँसी आवाज़में कहा—अब कभी न कहूँगी दादा !

नीलाम्बर हाथसे उसके केशोंको इधर उधर करता हुआ बोला—ना अब कभी न कहना।

पूँटी चुप होकर वैसे ही पड़ी रही।

उसके मनकी बात समझकर नीलाम्बरने कोमल स्वरमें कहा—वह तेरी भाभी है—गुरुजन है। केवल नातेमें ही नहीं पूँटी उसने तुझे माँकी तरह पाल-पोसा है और तेरी माताके समान हो गई है। और लोग जो चाहे कहें, लेकिन तेरे मुँहसे यह बात निकलना घोर अपराध है। पूँटीने आँखें पोंछते पोंछते कहा—वह क्यों हम लोगोंको इस तरह छोड़कर चली गई ?

वह क्यों गई पूँटी सो केवल मैं जानता हूँ और जो सबके अन्तर्यामी हैं, वह जानते हैं। वह आप भी नहीं जानती थी—उस समय वह पागल हो गई थी। उसको जरा भी ज्ञान या होश होता तो वह आत्महत्या ही करती, यह काम न करती।

पूँटीने और एक बार आँखें पोंछकर उलझी हुई आवाज़में कहा—तो अब क्यों नहीं वह आती दादा !

क्यों नहीं आती ? आनेका उपाय नहीं है बहन इसीसे नहीं आती। इतना कहकर, जोर करके अपनेको सँभालकर क्षणभर बाद ही उसने कहा—जिस अवस्थामें वह मुझे छोड़कर गई है, अगर उसके लौटनेकी जरा-सी भी राह रहती तो वह लौट आती—एक दिन भी कहीं नहीं रहती। यह बात क्या तू आप ही नहीं समझती पूँटी !

पूँटीने मुँह छिपाये रहकर ही गरदन हिलाकर कहा—समझती हूँ दादा

नीलाम्बरने क्षोभमें आकर कहा—तो यही कह बहन। वह आना चाहती है, आने नहीं पाती। यह कैसा दण्ड है पूँटी सो तुम लोग अवश्य नहीं देख पाते लेकिन मैं आँखें मूँदते ही देख पाता हूँ। यह देखना ही नित्य मुझे खाये डाल

रहा है और कुछ नहीं।

पूँटी फिर रो पड़ी।

नीलांबरने हाथसे अपनी आँखें पोंछकर कहा—यह अपनी कामनाकी—दो बातें जब तब तुमसे कहा करती थी। एक साध यह कि अन्त समय वह मेरी गोदमें सिर रख सके और दूसरी साध यह कि सीता-सावित्रीकी तरह होकर मरनेके बाद उन्हीं सतियोंके पास जाय। अभागिनकी सभी साधें मिट गईं।

पूँटी चुप होकर सुनने लगी।

नीलांबर आँसुओंसे तैसे गलेको साफ करके बोला—तुम सभी उस अपराध लगाते हो। मना नहीं कर पाता इससे मैं भी चुप रहता हूँ। लेकिन सदा भगवान्‌को कैसे धोखा दूँ! वह तो देखते हैं कि किसकी भूल, किसके अपराधका बोझा सिरपर लादकर वह डूब गई। तू ही कह मैं फिर मुँहसे उसे दोष दूँ! मैं उसे आशीर्वाद दिये बिना कैसे रहूँ! नहीं बहन संसारकी नजरों वह चाहे कितनी कलंकिनी हो उसके खिलाफ मेरा कोई क्षोभ, कोई शिकायत नहीं है। इस जन्ममें पाकर भी अपने दोषसे उसे मैंने गँवा दिया भगवान् करें, अगले जन्ममें भी मैं उसे पाऊँ।

वह आगे कुछ कह न सका यहींपर उसका गला एकदम रुँध गया। पूँटीन जल्दीसे उठकर आँचलसे दादाके आँसू पोंछते-पोंछते आप भी रो दिया। सहसा उसे भान पड़ा कि दादा जैसे कहीं दूरसे आ रहे हैं। रोकर कहा—क्यों इधर हो कहाँ चले दादा लेकिन मैं तुमको एक दिनके लिए भी कहीं अकेला नहीं छोड़ सकती नहीं छोड़ूँगी।

नीलांबर सिर उठाकर जरा हँसा।

विराज जगन्नाथपुरीकी सड़कपर बैठी आ रही थी। इसी सड़कको पकड़कर जब वह अनुदित मृत्युकामनाकी खोजमें गई थी, तबके उस जानेमें और अब इस आनेमें कितना अन्तर है! अब वह अपने घर आ रही है। उसकी दुबल देह राहमें जितना ही कातर होकर विश्रामकी भिक्षा माँगने लगी उसे अपनी देहपर उतना ही क्रोध और खीझ आने लगी। वह किसी भी कारणसे कहीं भी विश्राम करनेको राजी नहीं। उसकी आँखों मस्तिष्कमें परिवर्तित हो गए है

गीली हो उठीं। पूँटीके सिरपर हाथ रखकर कोमल स्वरमें उसने कहा—क्या है रे!

पूँटी पीठ छोड़कर बालककी तरह दादाकी गोदमें आधी गिरकर, मुँह छिपाकर रोने लगी। नीलाम्बर उसके सिरपर एक हाथ रखकर चुपचाप बैठा रहा। बहुत देर बाद पूँटीने रुआँसी आवाजमें कहा—अब कभी न कहूँगी दादा!

नीलाम्बर हाथसे उसके केशोंको इधर उधर करता हुआ बोला—हाँ अब कभी न कहना।

पूँटी चुप होकर वैसे ही पड़ी रही।

उसके मनकी बात समझकर नीलाम्बरने कोमल स्वरमें कहा—वह तेरी भाभी है—गुरुजन है। केवल नातेमें ही नहीं पूँटी उसने ठीक माँकी तरह पाला-पोसा है और तेरी माताके समान हो गई है। और लोग जो चाहे कहें, लेकिन तेरे मुँहसे यह बात निकलना घोर अपराध है। पूँटीने आँखें पोंछते पोंछते कहा—वह क्यों हम लोगोंको इस तरह छोड़कर चली गई!

वह क्यों गई पूँटी तो केवल मैं जानता हूँ और जो सबके अन्तर्यामी हैं, वह जानते हैं। वह आप भी नहीं जानती थी—उस समय वह पागल हो गई थी। उसको जरा भी ज्ञान या होश होता तो वह आत्महत्या ही करती पर यह काम न करती।

पूँटीने और एक बार आँखें पोंछकर उलटी हुई आवाजमें कहा—तो अब क्यों नहीं अब आती दादा!

क्यों नहीं आती! आनेका उपाय नहीं है बहन इसीसे नहीं आती। इतना कहकर, और फिर अपनेको सँभालकर क्षणभर बाद ही उसने कहा—जिस अवस्थामें वह मुझे छोड़कर गई है, अगर उसके लौटनेकी जरा-सी भी राह रहती तो वह लौट आती—एक दिन भी कहीं नहीं रहती। यह बात क्या तू आप ही नहीं समझती पूँटी!

पूँटीने मुँह छिपाये रहकर ही गर्दन हिलाकर कहा—समझती हूँ दादा'

नीलाम्बरने जोशमें आकर कहा—तो यही कह बहन। वह आना चाहती है आने नहीं पाती। यह कैसा दण्ड है पूँटी सो तुम लोग अवश्य नहीं देख पाते, लेकिन मैं आँखें मूँदते ही देख पाता हूँ। यह देखना ही नित्य मुझे खाये जाता

रहा है और कुछ नहीं।

पूँटी फिर रो पड़ी।

नीलाम्बरने हाथसे अपनी आँख पोंछकर कहा—वह अपनी साधकी—कामनाकी—दो बातें अब तब मुझसे कहा करती थी। एक साध यह कि अन्त समय वह मेरी गोदमें सिर रख सके और दूसरी साध यह कि सीता-सावित्रीकी तरह होकर मरनेके बाद उन्हीं सतियोंके पास जाय। अभागिनकी सभी साधें मिट गईं।

पूँटी चुप होकर सुनने लगी।

नीलाम्बर आँसुओंसे रुँधे गलेको साफ करके बोला—तुम सभी उसे अपराध लगाते हो। मना नहीं कर पाता इससे मैं भी चुप रहता हूँ। लेकिन क्या भगवान्को कैसे धोखा दूँ? वह तो देखते हैं कि किसकी भूल, किसके अपराधका बोझा सिरपर लादकर वह डूब गई। तू ही कह मैं किस मुँहसे उसे दोष दूँ! मैं उसे आशीर्वाद दिये बिना कैसे रहूँ! नहीं बहन, संसारकी नजरमें वह चाहे कितनी कलंकिनी हो उसके खिलाफ मेरा कोई क्षोभ, कोई शिकायत नहीं है। इस जन्ममें पाकर भी अपने दोषसे उसे मैंने गँवा दिया, भगवान् करें, अगले जन्ममें भी मैं उसे पाऊँ।

वह आगे कुछ कह न सका यहींपर उसका गला एकदम रुँध गया। पूँटीने जल्दीसे उठकर आँचलसे दादाके आँसू पोंछते-पोंछते आप भी रो दिया। सहसा उसे ध्यान पड़ा कि दादा कैसे कहीं रूठे जा रहे हैं। रोकर कहा—जहाँ इच्छा हो वहाँ चले दादा लेकिन मैं तुमको एक दिनके लिए भी कहीं अकेला नहीं छोड़ सकती, नहीं छोड़ूँगी।

नीलाम्बर सिर उठाकर जरा हँसा।

विराज सप्तग्रामपुरीकी राहपर लौटी आ रही थी। इसी राहको पकड़कर जब वह अनुद्दिष्ट मृत्युपथयात्रीकी खोजमें गई थी, तबके उस जानेमें और अब इस आनेमें कितना अन्तर है। अब वह अपने घर आ रही है। उसकी दुर्बल देह पगमें जितना ही कातर होकर विश्रामकी भिक्षा माँगने लगी उसे अपनी देहपर उतना ही क्रोध और खीझ आने लगी। वह किसी भी कारणसे कहीं भी विलम्ब करनेको राजी नहीं। उसकी आँधी यन्त्रमें परिवर्तित हो गई है,

यह उसे मालूम हो गया है। इसीसे आशंकाकी सीमा नहीं थी कि कहीं वह वहाँतक न पहुँच पाये। बचपनसे ही उसे यह पक्का विश्वास था कि शरीर निष्पाप न हो तो कोई अपने स्वामीके चरणोंमें प्राणत्याग नहीं कर पाती। वह इसी उपायसे मरनेके पहले एक बार अपने शरीरकी परख कर लेना चाहती है—उसका प्रायश्चित्त सम्पूर्ण हुआ कि नहीं। इस परीक्षामें उत्तीर्ण हो सकनेपर वह निर्भय होकर बड़े आनन्दसे जीवनके उस किनारेपर खड़ी होकर उनकी राह देखती बैठी रहेगी। किन्तु दामोदर नदीके इस पार आकर उसके हाथों और पैरोंमें वरम आ गया, मुँहसे अधिक मात्रामें खून आने लगा। अब आगे किसी तरह पैरोंमें चलनेकी ताब नहीं रही। वह हताश होकर एक वृक्षके तले बैठकर मनसे रोने लगी। यह कैसा भयानक अपराध है, जो इतना करके भी उसकी अन्तिम आशा पूरी नहीं हुई! उसका यह जन्म तो गया, दूसरे जन्ममें भी आशा नहीं रही तब वह और क्या करेगी? आशा नहीं है, तो भी वह वृक्षके तले पड़कर सारा दिन हाथ जोड़कर स्वामीके चरणोंमें प्रार्थना करने लगी।

दूसरे दिन तारकेश्वरके आसपास कहीं बाजार लगनेका दिन था। सबेरेसे ही उस सड़कपर बैलगाड़ियाँ चलने लगीं। उसने हिम्मत करके एक बूढ़े गाड़ीवानसे प्रार्थना की। बूढ़ा गाड़ीवान उसका रोना देखकर राजी हो गया और उसे अपनी गाड़ीपर चढ़ाकर तारकेश्वर पहुँचा गया। विराजने निश्चय किया कि मन्दिरके आसपास ही कहीं वह पड़ी रहेगी। यहाँ कितने ही लोग आते-जाते रहते हैं। शायद किसी उपायसे वह एक बार छोटी बहूके पास खबर भेज सके।

कितने ही नर-नारी कठिन व्याधियोंसे पीड़ित कितनी ही कामनाएँ करके, इस देवमन्दिरको घेरकर इधर-उधर पड़े हुए हैं। उन्हींके बीच आकर विराजने बहुत दिनोंके बाद कुछ शान्तिका अनुभव किया। उनकी तरह उसके भी व्याधि है, कामना है। वह उसीको लेकर यहाँ चुपचाप पड़ी रह सकेगी किसीकी भी दृष्टि आकृष्ट नहीं करेगी किसीका भी अर्थहीन कौतूहल चरितार्थ न होगा। यह सोचकर इतने दुःखमें भी उसे आराम मिला। लेकिन रोग तेजीके साथ बढ़ने लगा। माघके इस दुर्जय जाड़ेमें बिना कुछ खाये-पिये छः दिन बीत गये किन्तु अब और भी दिन कट जायँगे, ऐसी आशा नहीं रही, कोई आवेगा— यह भी भरोसा नहीं रहा। भरोसा रहा केवल मृत्युका। वह उसीके लिए फिर

एक बार अपनेको तैयार करने लगी।

उस दिन आकाशमें बादल छाये हुए थे। तीसरा पहर होते न होते ही अँधेरा-सा जान पड़ने लगा। सबेरे उसके मुँहसे बहुत-सा रक्त निकल आनेके कारण, उसकी मृतकल्प देह मानों एकदम निःशेष हो गई थी। उसने मन ही मन कहा—जान पड़ता है आज ही सब समाप्त हो जायगा। उसीसे वह मंदिरके पीछे मुँह ढाँके पड़ी थी। दोपहरको देवताकी पूजा हो चुकनेपर वह और दिनोंकी तरह उठकर बैठकर प्रणाम नहीं कर सकी—मन ही मन प्रणाम कर लिया। इतने दिन वह स्वामीके चरणोंमें केवल विनती ही करती आ रही है। वह अबोध नहीं है। जो काम उसने कर डाला है उससे इस जन्मपर उसका कोई दावा नहीं रहा केवल यही उसने चाहा है कि उसका अगले जन्मका अधिकार न जाय समझे-बूझे बिना अपराध करनेका दण्ड इस जन्मको लाँघकर दूसरे जन्म तक व्याप्त न हो सके, यही भिक्षा उसने माँगी है। किन्तु आज दिनका अन्त होनेके साथ-साथ उसकी चिन्ता धारा सहसा एक आश्चर्यमार्गमें मुड़ गई। वह भिक्षाका भाव नहीं था; विद्रोहका भाव दिखाई पड़ा। उसके सारे चित्तमें भरकर एक अपूर्व अभिमानका सुर अनिर्वचनीय माधुर्यसे बज उठा। वह उसीमें मग्न होकर मन ही मन केवल यही कहने लगी—तो फिर तुमने क्यों कहा था?

उसे मालूम नहीं हुआ कि कब उसका अवश बायाँ हाथ गिरकर परिक्रमाकी राहमें फैल गया है। सहसा उसी हाथपर एक कठिन व्यथा पाकर वह अस्फुट स्वरमें आर्तोक्ति कर उठी—उसके मुँहसे 'आह'का शब्द निकल गया। यह आने-जानेकी राह थी। जिस आदमीने न देखकर इस अवश दीर्घ हाथको अनजानेमें कुचल दिया था उसने अत्यन्त लज्जित और व्यथित होकर, झुककर खड़े होकर, कहा—हाय हाय! कौन इस तरह राहमें पड़ा हुआ है! मुझसे बड़ा अन्याय हुआ—अधिक चोट तो नहीं लगी!

विराजने धीरेसे मुँहसे कपड़ा हटाकर देखा। इसके बाद और एक अस्फुट ध्वनि करके वह चुप हो गई। यह आदमी नीलाम्बर था। वह एक बार झुककर देखनेके बाद हट गया।

कुछ देरमें सूर्य अस्त हो गये। पश्चिम क्षितिजपर बादल न थे।

हिमन्तमण्डलसे निकली और बिखरी हुई सूर्यकिरणोंकी सुनहली आभा मंदिरके कलशपर, पेड़की चोटीपर फैल गई थी। नीलाम्बरने दूर खड़े होकर पूँटीसे कहा—उस बीमार स्त्रीको मैंने जोरसे कुचल दिया है बहन। देख तो अगर उसे कुछ दे सकें—जान पड़ता है, कोई भिखारिन है।

पूँटीने देखा, वह स्त्री एकटक उन्हींकी ओर ताक रही है। तब वह धीरेसे पास जाकर खड़ी हो गई। उसके मुखका कुछ हिस्सा कपड़ेसे ढँका था, तो भी जान पड़ा उसने यह मुख पहले कभी देखा है। पूछा—हाँ जी, तुम्हारा घर कहाँ है?

'सप्तग्राममें' कहकर वह स्त्री हँसी।

बिराजकी सबसे सुन्दर चीज उसके मुखकी हँसी थी। इस हँसीको समस्त संसारमें कोई भी नहीं भूल सकता था।

'अरे यह तो भाभी है!" कहकर पूँटी उसी घड़ी उस जीर्ण-शीर्ण देहके ऊपर औंधी पड़कर मुँह रखकर रो उठी।

नीलाम्बर दूरपर खड़ा देख रहा था। बातचीत न सुनकर भी वह समझ गया। एकबार बिराजको सिरसे पैरतक देखा उसके बाद शान्त स्वरसे कहा—यहाँ न रो पूँटी उठ। इतना कहकर, बहनको अलग हटाकर, स्त्रीकी जीर्ण देहको छोटे बच्चेकी तरह उठाकर छातीसे लगाये हुए तेज चालसे अपने घरकी ओर चला गया।

  

चिकित्साके लिए उत्तम स्वास्थ्यकर स्थानमें जानेके लिए, बिराजसे बहुत कुछ कहा गया खुशामद की गई, किन्तु किसी तरह उसे राजी नहीं किया जा सका। घर छोड़कर जानेको वह किसी तरह राजी नहीं हुई।

नीलाम्बरने पूँटीको आड़में बुलाकर कहा—और कितने दिन हैं बहन! जहाँ जिस तरह रहना चाहे, रहने दे। अब तुम इसे और दिक न करो।

तारकेश्वरमें स्वामीकी गोदमें सिर रखकर उसने पहले यही आवेदन किया था कि उसे घर ले चलो उसकी अपनी शय्यापर सुला दो। घरके ऊपर, घरकी हर एक सामग्रीपर और स्वामीके ऊपर उसकी कैसी उत्कट तृष्णा है, इस बात-को जो कोई आँखोंसे देखता वही उसका अनुभव करके रो देता। दिन रात-

के अधिकांश समयमें ही विराज दुलारसे मेरोप-सी पड़ी रहती है, किन्तु थोड़ा-सा सचेत होते ही घरकी हर एक चीजको गौरसे ताका करती है।

नीलाम्बर उसकी शय्याको छोड़कर प्रायः ही कहीं नहीं जाता और प्रायः ही आँखोंमें आँसू भरे हुए प्रार्थना करता है कि भगवान्, तुमने बहुत दण्ड दिया अब क्षमा करो। जो मनुष्य परलोक जानेकी तैयारी कर चुका है उसके इस लोकके माया-मोहका बन्धन काट दो।

पररमणगामिनीका पतिके ऊपर यह उत्कट आकर्षण देखकर नीलाम्बर मन ही मन कंपित हो उठता है। दो सप्ताह बीत गये। इससे घोर विकारके लक्षण प्रकट होने लगे हैं। आज दिनभर प्रलाप करके कुछ देर पहले वह सो गई थी। संध्याके बाद उसने आँखें खोलकर देखा। पूँटी रोते-रोते उसके पैरोंके पास पड़कर सो रही है। छोटी बहू सिरहानेके पास बैठी है। उसे देखकर विराजने कहा—छोटी बहू है न?

छोटी बहूने उसके मुखपर झुककर कहा—हाँ जीजी मैं मोहिनी हूँ।

पूँटी कहाँ है?

छोटी बहूने हाथसे दिखाकर कहा—तुम्हारे पैरोंके पास सो रही है।

वह कहाँ है?

छोटी बहूने कहा—उस तरफ संध्या-पूजा कर रहे हैं।

"तो फिर मैं भी करूँ" कहकर वह आँखें मूँदकर मन ही मन जप करने लगी। बहुत देर बाद दाहिना हाथ माथेसे छुआकर प्रणाम किया। इसके बाद छोटी बहूके मुँहकी ओर क्षणभर चुपचाप ताकती रही फिर धीरे-धीरे बोली—जान पड़ता है आज ही जा रही हूँ बहन, लेकिन मेरी कामना यही है कि फिर दूसरे जन्ममें तुमसे भेंट हो, फिर तुम्हें इसी तरह अपने निकट पाऊँ।

इससे ही सब लोगोंको मालूम हो गया था कि विराजका जीवन बिलकुल समाप्त हो आया है इस समय उसकी बात सुनकर छोटी बहू चुपचाप रोने लगी।

विराज अब खूब शान्त है। उसने गलेको और भी धीमा करके चुपके चुपके कहा—छोटी बहू, सुन्दरीको एक बार बुला सकती है? छोटी बहूने रुँधी हुई आँखसे कहा—अब उसे क्यों बुलाती हो जीजी? वह नहीं आयेगी।

विराजने कहा—आयेगी री आयेगी। एक बार बुला भेजो। मैं उसे क्षमा करके आशीर्वाद दे जाऊँ। अब मुझे किसीके ऊपर क्रोध नहीं है, किसीके प्रति कोई क्षोभ नहीं है। भगवान्‌ने जब क्षमा करके मेरे स्वामीको लौटा दिया है, तब मैं भी सभीको क्षमा करके जाना चाहती हूँ।

छोटी बहूने रोते-रोते कहा—यह भगवान्‌की क्षमा क्या है जीजी! बिना अपराधके इतना दण्ड देकर भी उनकी मनोकामना पूरी नहीं हुई—यह तुमको भी उठा ले जाना चाहते हैं। एक हाथ से छिना तो भी अगर तुम्हें हम लोगों के पास छोड़ देते

विराज हँस उठी बोली—मुझे लेकर तुम क्या करोगी! गाँव-मोहल्लेमें बदनामी हो गई है—मेरे जीते रहनेमें तो अब कोई काम नहीं है बहन!

छोटी बहू जोर देकर कह उठी—भ्रम है जीजी। इसके सिवा यह तो झूठी बदनामी है—उसका हम लोग नहीं डरते।

विराजने कहा—तुम लोग नहीं डरते मगर मैं डरती हूँ। बदनामी झूठी नहीं है बिलकुल सच है। मेरा अपराध चाहे जितना थोड़ा हुआ हो छोटी बहू, उसके बाद हिन्दू घरकी स्त्रीका जीवित रहना ठीक नहीं। तुम कहती हो कि भगवान्‌के दया नहीं है। किन्तु

उसकी बात पूरी होनेके पहले ही पूँटी उमड़ी हुई अस्वाभाविक स्वरमें चिल्ला उठी—ओह भगवान्‌की बड़ी दया है!

अबतक वह चुपके-चुपके रो रही थी और सुन रही थी। अब उससे बर्दाश्त न हो सका और वह इस तरह चिल्ला उठी। रोकर फिर बोली—उनकी जरा सी भी दया नहीं है, उनके जरा-सा भी विचार नहीं है। जो असल पापी है, उनका कुछ नहीं हुआ—और हम लोगोंको ही वह इस तरह दण्ड दे रहे हैं।

उसके रोनेकी ओर ताककर विराज मुस्कराकर हँसने लगी। वह हँसी कैसी मधुर, कैसी हृदय-विदारक थी! उसके बाद बनावटी क्रोधके स्वरमें बोली—चुप रह कलमुँही, चिल्ला नहीं।

पूँटी दौड़ आकर उसके गलेसे लिपटकर जोरसे रो उठी—तुम मरो नहीं भाभी, हम जाने नहीं देंगे। तुम दवा खाओ—और कहीं चलो—तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ भाभी, और कुछ दिन जिओ।

पूँटीके रोनेका शब्द सुनकर, आह्निक बीचमें ही छोड़कर, नीलांबर तेजीके साथ पास आकर सुनने लगा। पूँटीके मुँहमें जो आया, वही कहकर वह भाभीके अत्याचार और जिद्द छुड़ानेके लिए मिन्नतें करने लगी।

अबकी विराजकी दोनों आँखोंसे बहकर बड़ी-बड़ी आँसूकी बूँदें गिर पड़ीं। छोटी बहूने अच्छी तरह सँभालकर उसके आँसू पोंछे और पूँटीको खींचकर अलग किया। पूँटी छोटी बहूकी छातीमें मुँह छिपाकर, सबको सुनाती हुई फूट फूटकर रोने लगी।

बहुत देर बाद विराज उसके रुँधे गलेसे बार-बार कहने लगी—रो मत पूँटी सुन।

नीलांबर बाहरमें खड़ा होकर सुनने लगा उसने ध्यान किया कि विराजका चैतन्य सम्पूर्ण लौट आया है, उसकी मन्त्रणाका अन्त हो गया है। विराज कहने लगी—बिना समझे उनको दोष न दे पूँटी। उनका कैसा सूक्ष्म विचार है, तो भी कितनी दया है—इस बातको आज मुझसे बढ़कर कोई नहीं जानता। भरना ही मेरा जीना है—वह मेरे न रहनेपर ही तुम लोग समझोगे। और तू कहती है कि एक हाथ और एक आँख उन्होंने ले ली है, सो तो दो दिन आगे-पीछे शरीर नष्ट होता ही। किन्तु इतनी-सी सजा देकर उन्होंने मुझे तुम लोगोंकी गोदमें बैठा दिया—यह तुम लोग किस तरह भूलोगे पूँटी!

साफ बैठा दिया है!—कहकर पूँटी रोती ही रही।

भगवान्की दया या सूक्ष्म विचारके एक अक्षरपर भी उसने विश्वास नहीं किया बल्कि यह सब उसे घोर अत्याचार और अविचार ही जान पड़ने लगा। कुछ देर बाद विराजने कहा—पूँटी, बहुत देरसे नहीं देखा जरा एक बार अपने दादाको तो बुला दे।

नीलांबर बाहरमें खड़ा ही था। उसके पास आते ही छोटी बहू सिरौना छोड़कर खड़ी हो गई। नीलांबरने सिरहाने बैठकर धीरेसे दाहिना हाथ साथ पानीसे उठाकर अपने हाथमें ले लिया और वह नाड़ी देखने लगा। सचमुच विराजमें अब कुछ बाकी न था। नीलांबरने इसके पहले ही यह अनुमान कर लिया था कि यह बुखारके जोरसे इतनी बातें कर रही है और उसके उतरनेके साथ ही बहुत सम्भव है कि सब समाप्त हो जाय। इस समय नाड़ी देखकर भी

उसने यही समझा।

बिराजने कहा—खूब हाथ दबो।—कहकर ही वह हँस पड़ी। सहसा वह यह मर्मभेदी परिहास कर उठी। इसीको लेकर यह इतना बड़ा अनर्थ हुआ है, यह बात उसीको याद आ गई। वेदनासे नीलाम्बरका मुख विवर्ण हो गया। ध्यान पड़ता है, बिराजने भी यह देख पाया। उसने फौरन पछताकर कहा— ना ना, वह बात मैंने नहीं कही। सच ही कहती हूँ, अब कितनी देर है!

इतना कहकर, चेष्टा करके अपना सिर स्वामीकी गोदमें उठाकर रख दिया। फिर बोली—उनके सामने और एक बार तुम कहो कि मुझे क्षमा कर दिया।

रुँधे स्वरसे 'किया है' कहकर नीलाम्बरने हाथसे अपनी आँखें पोंछीं।

बिराज क्षणभर आँखें मूँदे पड़ी रही। फिर धीरेसे कहने लगी—जानकर या अनजान इतने दिन तुम्हारी गृहस्थी करनेमें न जाने कितने अपराध और गलतियाँ मैंने की हैं—छोटी बहू, तुम भी सुनो, पूँटी, तू भी सुन रखी, तुम लोग सब भूलकर आज मुझे विदा करो। मैं जाती हूँ। इतना कहकर वह हाथ बढ़ाकर स्वामीके चरण खोजने लगी। नीलाम्बरने सिरहानेका तकिया हटाकर पैर उस उठा दिये। बिराज हाथसे बार-बार लगातार उनके पैरोंकी रज अपने माथेमें लगाती हुई बोली—मेरा सब दुःख इतने दिन बाद सार्थक हुआ। और कुछ नहीं है। देव मेरी धुल निष्पाप है। अब चलती हूँ, जाकर राह देखती रहूँगी।

कहकर वह करवट लेकर पतिकी गोदमें मुँह छिपाकर अस्फुट स्वरमें बोली—इसी तरह मुझे लिये रहो कहीं जाना नहीं। इतना कहकर चुप हो गई। वह बिल्कुल थक गई थी।

सभी रूखा मुँह लिये बैठे रहे। रातके बारह बजनेके बाद वह प्रलाप करने लगी। नदीमें फाँद पड़नेकी बात—अस्पतालकी बात—निर्दोष पाखीकी बात—यही सब। किन्तु उन सभी बातोंमें अति उत्कट एकाग्र पति-प्रेम था। पड़ोसके भ्रमने किस तरह उस स्त्री-स्वामीको अलगाया—पीड़ा पहुँचाई, केवल यही।

इन कई दिनोंसे विराजके सामने बैठकर नीलाम्बरको मालूम करना पड़ता था। उस दिन बीच-बीचमें पूँटीको पुकारकर, छोटी बहूको पुकारकर बकने लगी। उसके बाद सबेरेके समय पुकारना मन्द हो गया और ऊर्ध्वश्वास चलने लगी। फिर उसने किसीकी ओर देखा नहीं फिर उसने किसीसे कुछ कहा नहीं। स्वामीकी देहपर सिर रखकर सूर्योदयके साथ-साथ ही दुनियाके सारे दुःखोंका अन्त हो गया।

—समाप्त—

बचपनकी कहानियाँ

१—लल्लू

बचपनमें मेरा एक मित्र था। उसका नाम था लल्लू। पचास-साठ साल पहले—अर्थात् इतने दिन पहले जिसकी ठीक धारणा ही तुम न कर पाओगे—हम दोनों एक छोटे-से बंगला-स्कूलके एक ही दर्जेमें पढ़ते थे। हमारी अवस्था उस समय दस-ग्यारह सालकी होगी। आदमीको डरा देनेके, छकानेके इतने कौशल लल्लूके दिमागमें थे, जिनकी कोई गिनती नहीं। उसने एक दिन अपनी माँको अचानक रबरका साँप दिखाकर ऐसी आफतमें डाला था कि वह भी डरकर भागीं तो उनके एक पैरमें मोच आ गई और वह सात-आठ दिनतक लँगड़ाकर चलती रहीं।

मैंने नाराज होकर कहा—इसके लिए एक मास्टर रख दो। घरमें आकर वह पढ़ाने बैठेंगे, तो फिर इसे ऊधम-उपद्रव करनेका मौका नहीं मिलेगा।

सुनकर लल्लूके बापने कहा—ना। उनके खुद भी कोई मास्टर नहीं था अपनी ही कोशिशसे दुःख उठाकर, कष्ट भोगकर उन्होंने लिखा-पढ़ा था और आज वह एक बड़े नामी वकील हैं। उनकी इच्छा थी कि लड़का भी वैसे ही विद्या प्राप्त करे। लेकिन शर्त यह हुई कि जिस समय लल्लू क्लासकी परीक्षामें अव्वल न हो सकेगा तभीसे उसे घरमें पढ़ानेके लिए मास्टर रख दिया जायगा। उस दफा लल्लूकी जान बच गई लेकिन मन ही मन वह अपनी माँके ऊपर चिढ़ गया। कारण यह था कि माँ उसके सिरपर मास्टर लादनेकी कोशिशमें थीं। वह जानता था कि घरमें मास्टरको बुलाना और पुलिसको बुलाना बराबर है।

लल्लूके पिता धनी पुरुष थे। कई साल हुए, पुराना घर तुड़वाकर नए

निर्मलिया इमारत बनवाई है। तभीसे बल्लूकी माँकी यही इच्छा है कि अपने गुरु महाराजको उसमें लाकर उनके चरणोंकी रजसे घरको और अपनेको पवित्र करें। लेकिन गुरु महाराज बूढ़े हैं, फतेहपुरसे इतनी दूर आनेके लिए राजी नहीं होते। अबकी बार अच्छा मौका हाथ आया है। क्योंकि गुरु महाराज सूर्यग्रहणमें गंगास्नान करनेके लिए काशी आये हैं पर लौटते समय नंदरानी (बल्लूकी माँ) को आशीर्वाद देते जायेंगे। बल्लूकी माँ आनन्दसे फूली नहीं समातीं गुरु महाराजके स्वागत और सेवाकी तैयारीमें जुटी हुई हैं। इतने दिन बाद उनकी मनोकामना पूरी होगी—घरमें गुरुदेवके पैर पड़ेंगे। घर पवित्र हो जायगा।

नीचेके बड़े कमरेसे असबाब-पत्र हटा दिया गया। नया निवाड़का पलंग बनवाया गया—गुरुजी उसपर सोवेंगे। इसी कमरेके एक कोनेमें गुरुजीके पूजा-पाठके लिए स्थान ठीक किया गया। क्योंकि तिमंजिलेपर बने ठाकुरद्वारेमें गुरुजी जा न सकेंगे—चढ़ने-उतरनेमें उन्हें कष्ट होगा।

कुछ दिन बाद गुरुजी आकर उपस्थित हुए। लेकिन कैसा खराब दिन था—कैसा दुर्योग था। आकाशमें काले बादलोंकी घटा छाई हुई थी। जैसी जोरकी हवा चल रही थी, वैसी ही जोरकी वर्षा हो रही थी। आंधी और पानी थमनेका नाम ही नहीं लेते थे।

इधर मिठाई-पकवान बनानेमें और फल वगैरह काटकर सजानेमें बल्लूकी माँ इतनी व्यस्त थीं कि उन्हें दम मारनेकी फुर्सत नहीं थी। इसी बीचमें वह अपने हाथसे झाड़पोंछकर गुरुजीके पलंगमें मसहरी डाल गई बिछौने बिछा गई। बातचीतमें रात हो गई, थकके थके हुए गुरुदेव खा-पीकर पलंगपर जाकर लेट गये। नौकर-चाकर छुट्टी पा गये।

बढ़िया पलंग और गुलगुले बिछौनेपर लेटकर प्रसन्नचित्त गुरुजीने मन ही मन अपनी चेली नन्दरानीको अनेक आशीर्वाद दिये।

लेकिन गहरी रातमें अकस्मात् उनकी नींद उचट गई। घबराकर उठकर मसहरी खोलकर उनके सूखे हुए पेटके ऊपर पानी गिर रहा था—उनकी तोंद तर हो रही थी। ओह वह पानी कितना ठण्डा था! हड़बड़ाकर वह पलंगसे उठ पड़े, पेटको पोंछते हुए कहने लगे—नन्दरानीने तो नया बनवाया

है लेकिन देखता हूँ, पत्तोंकी कड़ी धूप खाकर छत इतनी जल्दी चिटक गई है।

निवाड़का पलंग भारी नहीं था। मसहरीसमेत उसे गुरुजी दूसरे कोनेमें खींच ले गये और कुरसीसे फिर लेट रहे। लेकिन एक मिनट भी नहीं बीतने पाया दोनों आँखें वैसे ही मूँदी थीं कि फिर वैसे ही दो-चार बूँद ठण्डा पानी टप-टप-टप पेटके ठीक उसी स्थानपर टपक पड़ा।

स्मृतिरत्न महाशय फिर उठ बैठे फिर पलंगको खींचकर दूसरे किनारेपर ले गये। बोले—ऐं! छत इस सिरेसे उस सिरेतक फट गई जान पड़ती है।

फिर लेटे, फिर पेटके ऊपर उसी जगह टपसे पानी गिरा। फिर उठकर, पेटका पानी पोंछकर पलंग खींचकर और एक किनारेपर ले गये लेकिन लेटते ही वहाँ भी वैसा ही पानी टपकने लगा। फिर खींचकर चौथे कोनेपर ले गये लेकिन वहाँ भी वही हाल हुआ। तकिया टटोलकर देखा, बिछौना भी भीग गया है सोनेका उपाय नहीं है।

स्मृतिरत्न मुश्किलमें पड़ गये। बूढ़े आदमी ठहरे, जगह भी नई है, अपनी कुछ नहीं। दरवाजा खोलकर जाते डर लगता है और यहाँ रहना भी खतरेसे खाली नहीं। क्या ठिकाना कभी कुछ छत कहीं अचानक सिरपर ही न गिर पड़े। डरते हुए दरवाजा खोलकर गुरुजी बरामदेमें आये वहाँ एक लालटेन जरूर जल रही थी लेकिन आदमी कोई न था। आकाशमें घोर अँधेरा छाया हुआ था।

जैसा जोरका पानी बरस रहा था, वैसी ही जोरकी हवा चल रही थी। खड़े रहना भी कठिन था। नौकर-चाकर सब कहाँ हैं किधर सोते हैं। यह भी बेचारे नहीं जानते। जोरसे चिल्लाकर पुकारा, लेकिन कोई नहीं बोला। एक तरफ एक बेंच पड़ी थी। कचहरीके सिपाही गरीब मवक्किल उसीपर आकर बैठते थे।

लाचार होकर गुरुजी उसीपर आकर बैठे। उन्होंने मनमें यह अवश्य अनुभव किया कि इससे उनकी मर्यादाको बड़ी ठेस लगी, लेकिन और उपाय ही क्या था! उधरसे चलनेवाली ठंडी हवामें बरसनेवाले पानीकी बौछारें मिली हुई थीं और वे उड़-उड़कर गुरुजीके ऊपर पड़ रही थीं उनसे रोएँ खड़े हो

रहे थे। आधी धोती खोलकर उन्होंने देहको अच्छी तरह ढक लिया और दोनों पैर, जहाँतक हो सका ऊपर उठाकर आराम पानेका ढंग कर लिया। थकान और आराममें बाधा पड़नेसे देह शिथिल हो रही थी मनमें खीझ भर गई थी नींदके बोझसे पलकें भारी हो रही थीं। गुरुजी घरमें हमेशा सीधा सादा भोजन करते थे, आज यहाँ बढ़िया भोजनकी सामग्री पाकर उन्होंने खूब डटकर खा *लिया था।* उसपर रातको सोनेको नहीं मिल रहा था। फल यह हुआ कि दो-एक खट्टी डकारें गलेतक आकर रह गईं। गुरुजी बहुत घबराये।

इसी समय एकाएक एक नया उपद्रव उठ खड़ा हुआ जिसका गुरुजीको खयाल भी नहीं था। बड़े-बड़े मच्छरोंने न जाने कहाँसे आकर उनके कानोंके पास भनभनाना शुरू कर दिया। आँखोंकी पलकें उठना नहीं चाहती थीं, उन्होंने साफ जवाब दे दिया था। गुरुजीका मन आशंकासे भर गया—न जानें ये बदमाश मच्छर कितने हैं। यह हाल केवल एक ही दो मिनट रहा, जो अनिश्चित था वह निश्चित हो गया—गुरुदेवको मालूम हो गया कि ये खूनके प्यासे शत्रु बेशुमार हैं, संसारमें कोई भी ऐसा बहादुर नहीं है, जो इस सेनाका सामना कर सके। मच्छरोंके काटनेमें जैसी खुजली वैसे ही जलन होने लगी। गुरुजी तेजीसे उठकर यहाँसे भागे, लेकिन मच्छरोंने उनका पीछा नहीं छोड़ा। कमरेके भीतर जैसे पानीके कारण टिकना दूभर था, वैसे ही बाहर मच्छरोंके मारे चैन न थी। गुरुजी बार-बार लगातार इधर-उधर हाथ-पैर चलाते थे, अँगोछा फटकारकर मच्छरोंको भगाते थे, लेकिन किसी तरह उनके धावेको रोक न पाते थे। गुरुजीकी इस कोशिशसे अगर दो-चार मच्छर शहीद हो जाते थे तो उनकी जगह लेनेके लिए नई कुमक आ जाती थी—दूने उत्साहसे और सैकड़ों मच्छर हमला कर देते थे। गुरुजी बरामदेमें इस सिरेसे उस सिरेतक दौड़ने-भागने लगे और इस जाड़ेकी ऋतुमें भी उनकी देहसे पसीना निकलने लगा—उनका जी चाहने लगा कि गला फाड़कर चिल्लावें पुकारें। लेकिन यह बिलकुल लड़कपनकी बात होगी लोग हँसेंगे, यह सोचकर वह चुप रहे।

उन्होंने कल्पनाकी नजरसे देखा कि उनकी बेटी नन्दरानी बढ़िया पलंगके गुलगुले गद्देपर मसहरीके भीतर आरामसे सो रही है। घरके और लोग भी अपनी-अपनी जगहपर बिलकुल बेफिक्रीके साथ सो रहे हैं। केवल उन्हींको सोना—

दिया—देखो, हरामजादा कहाँ गया ! काम-काज घरका चूल्हेमें जाय, तुम जाओ, उस बदमाशको जहाँ पाओ मारते-मारते यहाँ पकड़ लाओ ।

बब्लूके पिता उसी समय ऊपरसे नीचे उतर रहे थे । स्त्रीका बेतहाशा बिगड़ना और चिल्लाना देख-सुनकर वह भौंचक्केसे हो गये । बोले—क्या बात है ! हुआ क्या ! क्यों चिल्ला रही हो !

नन्दरानी रो पड़ी । बोली—तुम अपने इस पाजी बब्लूको घरसे निकाल दो नहीं तो मैं आज ही गंगामें डूबकर इस महापाप का प्रायश्चित्त करूँगी ।

बब्लूके पिताने पूछा—उसने किया क्या ?

नन्दरानीने कहा—बिना किसी कारणके उसने गुरुजीकी क्या दशा की है जरा चलकर अपनी आँखोंसे देखो तो सही ।

तब सब जने कमरेके भीतर गये । नन्दरानीने सब हाल-हवाल कहा और उन्हें सब करतूत दिखाई । फिर पतिसे कहा—इस पाजी लड़केको लेकर कैसे गृहस्थी निभ सकती है तुम्हीं बताओ !

गुरुजी सब समझ गये । अपनी मूर्खतापर खुद आप ही 'हो हो' करके जोर से हँस पड़े ।

बब्लूके बाप दूसरी ओर मुँह फेरकर खड़े थे । शायद उन्हें भी हँसी आ रही थी ।

नौकरोंने आकर कहा—बब्लूबाबू कोठीमें कहीं नहीं हैं ।

और एक नौकरने आकर खबर दी कि वह मौसीके घरमें बैठे पेटपूजा कर रहे हैं । मौसीने उनको रोक लिया, आने नहीं दिया ।

मौसी माने नन्दरानीकी बहिन । उसका पति भी वकील है । वह पासके ही दूसरे मोहल्लेमें रहता है ।

इसके बाद लगभग पन्द्रह दिनतक बब्लूने अपने घरकी चौखटपर पैर नहीं रखा ।

२—बच्चोंका चोर

उन दिनों चारों तरफ यह खबर फैल गई कि रूपनारायण नदके ऊपर रेलका पुल बनेगा लेकिन पुलका काम रुका पड़ा है । इसका कारण यह है कि

पुलकी देवी तीन बच्चोंकी बलि माँग रही हैं। बलिदानके बिना पुल नहीं बन सकता। फिर खबर फैली कि दो बच्चे पकड़कर जीते ही पुलके खम्भेके नीचे गाड़ दिये गये हैं, अब केवल एक लड़केकी जरूरत है। उसके मिल जानेपर पुल तैयार हो जायगा। यह भी सुना गया है कि रेल-कम्पनीके आदमी लड़केकी खोजमें शहर और गाँवोंमें चक्कर लगा रहे हैं। कोई नहीं कह सकता कि वे कब कहाँ पहुँच जायेंगे। उनको पहचानना भी कठिन है; क्योंकि उनमेंसे कोई भिखारीके वेशमें है, कोई साधु-सन्यासीका बाना बनाये है और कोई गुण्डों डाकुओंकी तरह लाठी बाँधे घूमता है। यह अफवाह बहुत दिनोंसे फैली हुई थी इसलिए आसपासके गाँवोंमें रहनेवाले बेहद डरे हुए थे और सन्देहका यह हाल था कि हर किसीको यह लड़का पकड़नेवाला रेल-कम्पनीका आदमी ही समझ बैठते थे। हर एक यही समझता था कि अबकी उसीकी बारी है, शायद उसीका बच्चा पकड़कर पुलके नीचे दफना दिया जायगा।

किसीके भी मनमें शान्ति न थी सभी घरोंमें सनसनी थी। उसके ऊपर अखबारोंकी खबर भी थी। कलकत्तेमें जो लोग नौकर थे, वे आकर बतलाते थे कि उस दिन बड़ेबाजारमें एक लड़का पकड़नेवाला पकड़ा गया है। कलकी ही बात है, कलकत्तेकी एक गलीमें और एक आदमी पकड़ा गया है। वह एक छोटे लड़केको पकड़कर अपनी झोलीमें डाल रहा था। इसी तरहकी नित्य नई कितनी ही खबरें सुन पड़ती थीं। कलकत्तेकी गलियों-कूचोंमें सन्देहके शिकार कितने ही बेगुनाह बेचारे पकड़े और पीटे गये, किसी तरह मुश्किलसे उनके प्राण बचे और इस अत्याचारकी खबरें लोगोंके मुँहसे हमारे कस्बे—हमारे गाँवमें भी पहुँचने लगीं। ऐसे ही समयमें एक घटना एक दिन एकाएक हमारे गाँवमें भी हो गई।

गाँवकी राहके पास ही कुछ फासलेपर, एक बागके भीतर एक बूढ़े ब्राह्मण और उनकी ब्राह्मणी दोनों रहते थे। वह मुखिया थे। उनके लड़का-बाला कोई नहीं था लेकिन दुनियामें और दुनियाके सभी मामलोंमें आसक्ति खासकर मानकी ममता अठारह आने थी। उनके एक सगा भतीजा था। उसे उन्होंने अलग कर दिया, मगर उसका हिस्सा नहीं दिया। देनेकी कल्पना भी उन दोनोंने कभी नहीं की। भतीजा बीच-बीचमें आकर कहा-सुनी करता था लड़ता-झगड़ता था

और अपने हिस्सेके बरतन कपड़े और गृहस्थीकी सामग्रीका दावा करता था। कहता था—मैं कुछ भीख नहीं माँगता। कमाई सब मेरे पुरखोंकी है, मेरे बापका हिस्सा हजम करनेवाले तुम कौन होते हो?

इधर उसकी चाची हल्ला मचाकर चिल्ला चिल्लाकर लोगोंकी भीड़ जमा कर लेती थी। कहती थी—हीरू (भतीजा) हमें मारने आया है। यह गुण्डा हमें मार डालनेकी धमकी देता है।

हीरालाल कहता—अच्छी बात है, किसी दिन मारकर ही सब कसूर करूँगा।

इसी तरह दिन बीत रहे थे।

उस दिन झगड़ेकी हद हो गई। दोनों ओर गरमागरमी बढ़ चली। हीरूने आँगनमें खड़े होकर कहा—यह आखिरी मर्तबा कहता हूँ चाचा, मेरा हिस्सा जो मुझे मिलना चाहिए, दोगे या नहीं?

चाचाने झिड़ककर कहा—चल जा तेरा कुछ नहीं है।

हीरूने भी तमककर कहा—नहीं है?

चाचाने कहा—हाँ हाँ नहीं है।

हीरूने कहा—तुम झूठ बोलते हो। मैं अपना हिस्सा लेकर ही छोड़ूँगा।

चाची रसोईघरमें थी। बाहर निकलकर बोली—तो फिर जा अपने बापसे पूछ आ।

हीरालालने कहा—मेरे पिता तो स्वर्ग गये, वह आ नहीं सकेंगे। मैं जाकर तुम्हारे बापदादोंको पूछ आऊँगा। उनमें शायद कोई अभी जीता हो। वह आकर मेरा रत्ती-रत्ती हिस्सा बाँट देगा।

इसके बाद कई मिनटतक दोनों ओरसे जिस भाषाका इस्तेमाल किया गया वह यहाँ लिखी नहीं जा सकती।

जानेके पहले हीरालाल कह गया कि आज ही इसका फैसला करके रहूँगा—यह तुमसे कहे जाता हूँ। सावधान रहना!

रसोईघरके भीतरसे चाचीने गरजकर कहा—तू तो बड़ा तीसमारखाँ है न! जा जो बनाते बना लेना।

हीरालाल वहाँसे सीधा शाहपुर नामके गाँवमें पहुँचा। इस गाँवमें कुछ गरीब मुसलमान रहते थे। मोहर्रममें वे ताजिये निकालते उनके आगे बड़ी-बड़ी

लाठियाँ लेकर चलते और अपनी कसरत तथा करतब दिखाते थे। लाठियों-में तेल पिला था और उनकी गाँठोंमें खूबसूरतीके लिए पीतलकी फुलियाँ जड़ी थीं। इसीसे बहुत लोग यह समझते थे कि इस अंचलमें उनके बराबर लाठी चलानेवाला कोई नहीं है। ऐसा कोई काम नहीं जिसको ये न कर सकते हों। केवल पुलिसके भयसे ही ये शान्त रहते हैं।

हीरालालने रफीक मियाँके पास जाकर कहा—ये दो रुपये पेशगी लो। एक तुम्हारा और एक तुम्हारे भाईका है। काम पूरा कर दो, तब और भी इनाम मिलेगा।

दोनों रुपये हाथमें लेकर रफीक मियाँने हँसकर कहा—क्या काम है बाबू?

हीरालालने कहा—इस देशमें तुम दोनों भाइयोंको कौन नहीं जानता! तुम्हारी लाठीके जोरसे निवास खानदानके बाबुओंने कितनी जमींदारीपर अपना कब्जा कर लिया है। तुम चाहो तो क्या नहीं कर सकते हो!

बड़े मियाँने आँखका इशारा करके कहा—चुप रहो बाबू, थानेका दारोगा सुन पावेगा तो फिर हमारी जान नहीं बचेगी। पुलिसको यह मालूम है कि बीरनगर गाँवपर हम दोनों भाइयोंने ही लाठीके जोरसे निवास बाबूका दखल कराया है। लेकिन कोई हमें मौकेपर पहचान नहीं सका, इसीसे उस वक्त हम साफ बच गये।

हीरालालने बड़े आश्चर्यके साथ कहा—कोई नहीं पहचान सका?

रफीकने कहा—कोई पहचानता कैसे! सिरपर बहुत बड़ा पग्गड़ बँधा था, गालोंपर गलमुच्छे लगे थे, माथेपर बड़ा-सा सेंदुरका टीका था, हाथमें ७ हाथकी लाठी थी। लोगोंने समझा कि हिन्दुओंकी यमराजपुरीसे यमदूत ही आकर हाजिर हो गये हैं। पहचानते क्या, सब अपनी जान लेकर न जाने कहाँ भागकर छिप रहे।

हीरालालने उसका हाथ पकड़ लिया। कहा—ऐसा ही काम एक बार और तुम्हें करना होगा मियाँ। मेरे चाचा तो फिर भी मेरा थोड़ा-बहुत हिस्सा देनेको तैयार हो सकते हैं लेकिन चाची हरामजादी ऐसी शैतान है कि एक फूटी कौड़ीमें भी हाथ नहीं लगाने देना चाहती। वही पग्गड़ वही गलमुच्छा वही सेंदुरका टीका लगाकर, हाथमें लम्बी लाठी लेकर एक बड़े चाचाके आँगनमें

जाकर पड़ रहो आओ और वहीं डाकुओंकी धमकी-घुड़की दिखाओ। बस, मैं फिर देख लूँगा कि कैसे क्या होता है। मेरा जो कुछ पावना है, सब वसूल कर लूँगा। ठीक शाम होनेके पहले, छुटपुटेमें चलो बस, काम पूरा हो जायगा।

हनीफ मियाँ राजी हो गये। यह तय हो गया कि हनीफ और महमूद दोनों भाई, वही डाकू-बाबाका पहनकर, भेस बनाकर आज ही दिया जलनेके पहले चाचाके घर जा धमकेंगे। उनके पीछे हीरालाल रहेगा।

एकादशीका दिन था। दिनभरके व्रतके बाद हीरालालकी चाची जगदंबाने अपने पतिको खिलानेके लिए आँगनसे मिले हुए चबूतरेपर आसन बिछाया और थाली लाकर सामने रखी। मुखर्जी चाचा फलाहार करनेके लिए बैठे। साधारण फल, कंदमूल और दूध, यही फलाहारका सामान था। मुखर्जी बादी-प्रकृतिके थे, इसलिए अधिक आहार करनेसे उनकी तबियत खराब हो जानेका डर था। पत्थरके पात्रमें डाब (कच्चे नारियल) का पानी रखा था। उसे पीनेके लिए चाचाने जैसे ही पात्र उठाया वैसे ही—ठीक उसी समय—दरवाजा ठेलकर हनीफ और महमूद, दोनों भाई सामने खड़े हो गये। वही सिरपर बड़ी सी पगड़ी वही भयानक गलमुच्छा वही माथेपरसे लिपा हुआ सेंदुरका टीका, और हाथमें वही एक हाथकी ऊँची मोटी लाठी। चाचाके हाथसे पत्थरका पात्र धम-से धरतीपर गिर पड़ा। जगदंबा जोरसे चीख पड़ी—अरे मोहल्लेवालो, दौड़ो दौड़ो आओ—लड़के पकड़नेवाले आये हैं—बच्चोंके चोर—बच्चोंके चोर!

सामनेके छोटे-से मैदानमें रोज मोहल्लेके, गाँवके छोटे-छोटे बच्चे जमा होकर तरह-तरहके खेल खेलते थे। आज भी खेल रहे थे। वे भी चिल्लाते हुए इधर उधर भागे—लड़के पकड़नेवाले आये हैं! बच्चोंके चोर आये हैं! बच्चोंको पकड़े लिये जा रहे हैं!

घर बतानेके लिए हीरालाल भी हनीफ और महमूदके साथ आया था। और दरवाजेकी आड़में छिपा हुआ था। उसने यह रंग देखा तो धीमी आवाजसे कहा—देखते क्या हो मियाँ जान लेकर भागो। मोहल्लेके लोग घेरकर पकड़ लेंगे तो फिर जान बचाना कठिन हो जायगा।

इतना कहकर वह वहाँसे चम्पत हो गया।

कलीफ मियाँने शहरकी ओर चोर चोर कहे न सुनी हो लेकिन क्योंकि रह आनेका हुल्लड़—गायब किये जानेकी अफवाह उनके कानोंतक भी पहुँच चुकी थी। पल भरमें ही उनकी समझमें आ गया कि इस अपरिचित अनजानी जगहमें, ऐसे भेषमें, खासकर संतुरका लम्बा-चौड़ा टीका लगाये हुए वे अगर पकड़ लिये गये तो उनकी एक भी हड्डी साबुत नहीं रहेगी!

यह ख्याल आते ही दोनों भाई जान लेकर भागे। लेकिन भागनेसे क्या हो सकता था! राह पहचानी नहीं थी। दिनका उजेला भी बुझ गया था—संध्याका अँधेरा मुँह बाये उसे लीलता चला आ रहा था। चारों ओर बहुतस कण्ठोंकी मिली हुई एक ही पुकार सुन पड़ रही थी—पकड़ो! पकड़ो! मार डालो सालेको!

छोटा भाई महमूद किधर भागा कुछ पता नहीं लेकिन बड़े भाई कलीफ को लोगोंने चारों ओरसे घेर लिया। वह प्राण बचानेके लिए काँटोंका जंगल फैला हुआ एक गड़ैयामें कूद पड़ा। इसके बाद सब लोग गड़ैयाके किनार खड़े होकर उसे ताक-ताककर ईंट-कंकड़ मारने लगे। कलीफ जब सिर निकालता था तब सिरपर ढेला पड़ता था। वह फिर पानीमें सिर कर लेता था। फिर जब उबकर सिर उठाता था तभी ढेला आकर लगता था।

कलीफ मियाँ इस तरह ईंट खाकर और पानी पीकर अधमरा हो गया। वह जितना ही हाथ जोड़कर कहना चाहता था कि वह बच्चा पकड़नेवाला चोर नहीं है, बच्चे पकड़ने नहीं आया है, उतना ही लोगोंका क्रोध और सन्देह बढ़ता जाता था। वे कहते थे कि तो फिर यह जटाजूट क्यों लगाये है! यह स्वांग क्यों बाँधे है! उसके मुँह भरमें यह संतुर कहाँसे आया!

पगड़ी उसकी खुल गयी थी गलमुच्छ भी खुलकर एक तरफ झूल रहा था माथेका संतुर भी घुलकर मुँहभरमें फैल गया था।

कलीफ मियाँ क्या कैफियत देता और उसकी सुनता ही कौन!

इसी बीचमें कुछ अधिक उत्साही लोग पानीमें उतरकर कलीफको किनारेपर घसीट लाये। वह रो-रोकर केवल यही कह रहा था कि वह कलीफ मियाँ है और दूसरा उसका भाई महमूद मियाँ है। वे लड़के पकड़नेवाले नहीं हैं—वे बच्चोंके चोर नहीं हैं।

इसी समय मैं उसी रास्ते निकला—उधर एक कामसे गया था। हुल्लड़ सुनकर उस गड्ढेके किनारे गया। मुझे देखकर वह उत्तेजित भीड़ फिर एक बार आपेसे बाहर हो गई। सभी एक स्वरसे कहने लगे—इन्होंने एक बच्चोंका चोर पकड़ा है।

बेचारे फकीर मियाँकी दशा देखकर मेरी आँखोंमें आँसू आ गये। उसमें बोलनेकी भी ताब नहीं थी। गलफटा पगड़ी, सेंदुर और रोलीने मिलकर उसकी अजीब सूरत बना दी थी। वह केवल सबको हाथ जोड़ता था और रोता था।

मैंने लोगोंसे पूछा—इसने किसीका लड़का चुराया है? किसने अपना लड़का चुरानेकी नालिश की है?

उन लोगोंने कहा—यह कौन जाने!

मैंने कहा—अच्छा वह लड़का कहाँ है, जिसे इसने पकड़ा था?

लोग बोले—यह भी हम नहीं जानते।

मैंने कहा—तो फिर इसे तुम इस तरह मारते क्यों हो?

उनमेंसे एक आदमी जो शायद अधिक बुद्धि रखता था, बोला—जान पड़ता है, उसको इसने लड़केको गड्ढेके भीतर कीचड़में गाड़ रखा है।

दूसरा बोला—हाँ हाँ यहाँसे मौका पाकर निकाल ले जायगा। बलि देनेके लिये पुलके खंभेके नीचे गाड़ देगा।

मैंने कहा—जरा सोचो तो, मरे प्राणीकी कहीं बलि दी जाती है?

उन्होंने कहा—मरा क्यों होगा जीता होगा।

मैंने कहा—लड़केको दलदलमें गाड़ देनेसे वह भला कभी जीता रह सकता है?

मेरी बात और युक्ति तब उनमेंसे बहुतोंको ठीक जान पड़ी। पहले लोग जोशमें थे इसलिये यह सोचनेका अवसर ही किसीको नहीं मिला।

मैंने कहा—इसे छोड़ दो। फिर उस आदमीसे पूछा—फकीर मियाँ, मामला क्या है सच-सच बताओ।

अब समय पाकर फकीरने रोते-रोते सब लम्बा हाल बतलाया। हीरालालके चाचा मुरली और उनकी स्त्रीके साथ किसीकी सहानुभूति नहीं थी। सुनकर

कुछ लोगोंको लतीफ मियाँपर तरस भी आया ।

मैंने कहा—लतीफ मियाँ अब अपने घर जाओ । अब कभी ऐसा काम न करना ।

उसने कान पकड़े, नाक रगड़ी । फिर कहा—खुदाकी कसम बाबूजी अब ऐसा काम कभी नहीं करूँगा ।—लेकिन मेरा भाई कहाँ गया ?

मैंने कहा—भाईकी चिन्ता घर जाकर करना लतीफ मियाँ । अभी तो यही गनीमत समझो कि तुम्हारी अपनी जान बच गई ।

लतीफ लँगड़ाता लड़खड़ाता किसी तरह अपने घर गया ।

बहुत दिन गये फिर एक बार पासके दूसरे मोहल्लेमें—गोपाल-टोलामें—भारका हुल्लड़ और शोर गुल सुन पड़ा । गोपाल बाबूके घरकी नौकरानी गोशालामें गऊकी सानी करनेके लिए गई थी । उसने गऊके लिए कुट्टी काटनेको हरी जुवारका गट्ठा घसीटा तो वह उससे खींचा नहीं गया । एकाएक उसके भीतरसे एक विकट सूरतका आदमी निकला और उसने फुर्तीसे झुककर नौकरानीके दोनों पैर पकड़ लिये ।

नौकरानी जितना ही चिल्लाती है कि अरे दौड़ो दौड़ो भूत मुझे खाये लेता है, उतना ही भूत उसका मुँह हाथसे बन्द कर कहता है—मैया, चिल्ला नहीं मुझे बचा—मैं भूत-प्रेत नहीं हूँ, मैं आदमी हूँ ।

नौकरानीकी चिल्लाहट सुनकर घरके मालिक गोपाल बाबू हाथमें लालटेन और साथमें नौकर-चाकर लेकर गोशालामें दौड़ आये ।

इसके पहले जो घटना हो चुकी थी वह गाँवके सब लोग सुन चुके थे । इसलिए वह भाईकी-सी दुर्गति छोटे भाईकी नहीं हुई । सबने सहजमें ही विश्वास कर लिया कि लतीफका भाई महमूद है भूत नहीं ।

गोपाल बाबूने उसे छोड़ दिया, लेकिन उसकी वह पके बाँसकी खूबसूरत लाठी छीन कर कहा—छोटे मियाँ तुम्हें जिन्दगीभर याद रहेगा इसीलिए यह रखे लेता हूँ । मुँहका यह सब रंग-चंग धो डालो और चुपकेसे घर चले जाओ ।

एहसान मानकर, कृतज्ञ होकर सैकड़ों सलाम करके महमूद वहाँसे चल दिया ।

यह कोई मनगढ़न्त कहानी नहीं है, सचमुच हमारे गाँवमें हुई एक सत्य घटना है।

३—बलिदानकी विभीषिका

उसका पुकारनेका नाम था बच्चू। उसका अच्छा-सा एक नाम जरूर था, लेकिन मुझे याद नहीं है। आप शायद जानते होंगे कि बच्चू शब्दका एक अर्थ प्रिय या प्यारा भी है। मालूम नहीं उसका यह नाम किसने रखा था माँ-बापने या और किसीने लेकिन यह सच है कि वह सबको प्यारा था। इतना सार्थक नाम बहुत कम लोगोंका होता है।

स्कूलकी पढ़ाई समाप्त करके हम लोग कालिजमें भर्ती हुए। वह मेरा सहपाठी था। बच्चूने कहा—मैं रोजगार करूँगा। पढ़ना छोड़कर, मात्र दस रुपये माँगकर उसने ठेकेदारी शुरू कर दी। हम साथियोंने कहा—बच्चू तुम्हारी पूँजी तो सिर्फ दस रुपये हैं इस पूँजीसे क्या होगा?

उसने हँसकर कहा—और कितना चाहिए यही बहुत है।

सभी उसे प्यार करते थे, यह पहले ही कहा जा चुका है। उसे काम मिल गया। इसके बाद कॉलिज जाते समय प्रायः ही मैं देखता था कि सिरपर छतरी लगाये कुछ मजदूरोंसे सड़ककी मरम्मत छोटे-मोटे काम बच्चू करा रहा है। हम लोगोंको देखकर हँसकर दिल्लगी करता था—जाओ जाओ दौड़ो—नहीं तो अभी रजिस्टरमें गैरहाजिरी पड़ जायगी।

हम लोग जब छोटे थे, जब वर्नाक्युलर स्कूलमें पढ़ते थे, तब वह हम सबका मिस्त्री था। उसके किताबोंके थैलेमें हमेशा एक इमामदस्तेकी मुँगरी नाखूनगिरी, एक टूटी छुरी छेद करनेके लिए एक नुकीली कील और एक घोड़ेका नाल—ये सब औजार पड़े रहते थे। क्या जाने कहाँसे वह सब सामान उसने जमा किया था, लेकिन ऐसा कोई काम नहीं था जिसे वह इन औजारोंसे कर न सकता हो। स्कूल-भरके लड़कोंके टूटे छातोंकी मरम्मत करना, स्लेटका फ्रेम कसना लड़कोंके फटे हुए कपड़ोंकी सिलाई कर देना इत्यादि न जाने क्या-क्या और कितने काम वह कर देता था। वह कभी किसी कामके लिए 'ना' नहीं करता था। और काम भी बड़ी सफाई और खूबसूरतीके साथ करता था। एक

रह और महानन्द पञ्च था। अल्लू कुछ पैसोंका रंगीन कागज खरीद लाया। बाँसकी तीली और कागजसे उसने एक खिलौना बनाया। उन खिलौनोंको बेचकर उसने चार रुपये खड़े कर लिये। उन्हीं पैसोंसे उसने भरपेट भुनी मूँगफलियाँ हम लोगोंको खिलाई।

साथ-साथ सब सीखने लगे। हम सब सयाने हुए। जिमनास्टिककी कसरतमें कोई अल्लूके बराबर नहीं था। उसकी दौड़मे बल जैसे असाधारण था वैसे ही उसमें साहसकी भी सीमा नहीं थी। डर किसे कहते हैं, यह शायद वह जानता ही न था। सभीकी सहायताके लिए वह तैयार रहता था सभीकी विपत्तिमें वह सबके आगे साथ देनेके लिए उपस्थित होता था।

उसमें केवल एक बहुत बड़ा दोष था। किसीको डरानेका मौका मिलते ही वह किसी तरह अपनेको सँभाल नहीं पाता था। इस मामलेमें अपने-गुरुजन-बड़े-बूढ़े उसके लिए बराबर थे। हम कोई सोच नहीं पाते थे कि डरानेके ऐसे अद्भुत उपाय पल भरमें ही उसे कैसे सूझ जाते थे। दो-एक ऐसी घटनाएँ सुनिए।

मोहल्लेमें मजूमदार भट्टाचार्योंके घरमें महाकालीकी पूजा थी। आधी रातको बलिदानका समय जब आया तो देखा गया कि बलि देनेवाला लुहार गैरहाजिर है। लोग उसे लानेके लिए दौड़े लेकिन जाकर देखा वह पेटकी पीड़ासे बेहोश पड़ा तड़प रहा है।

लोगोंने लौटकर जब यह खबर दी तो सब लोग सिरपर हाथ रखकर बैठ गये। अब क्या हो! क्या किया जाय! इतनी रातको घातक (बलि देनेवाला) कहाँ मिलेगा! यह तो बड़ा अनर्थ हुआ! देवीकी पूजा व्यर्थ, खण्डित हुई जा रही है। इतनेमें एक आदमी कह उठा—अल्लू बकरेकी बलि दे सकता है—उसके हाथमें इतनी ताकत है कि एक ही हाथमें बकरेका सिर काट दे। अनेक बकरे इस तरह वह काट चुका है।

सब लोग अल्लूके पास दौड़े गये। अल्लूको सोतेसे जगाया गया। अल्लू उठ बैठा और सुनकर बोला—ना मुझसे न होगा।

लोगोंने कहा—नहीं न करो। देवीकी पूजामें विघ्न पड़ेगा तो सबका सत्यानाश हो जायगा। देवीका कोप सबपर पड़ेगा।

कल्लूने कहा—सर्वनाश हो तो हो। छुटपनमें यह काम मैंने किया था लेकिन अब नहीं करूँगा।

जो बुलाने आये थे, वे फिर चीखने लगे। बस और १०–१५ मिनटतक मुहूर्त है। मुहूर्त निकल जानेपर सब गड़बड़ हो जायगा पूजा पूरी न हो सकेगी। तब महामायीके कोपसे कोई न बचेगा।

कल्लूके बापने आकर जानेकी आज्ञा दी। बोले—ये लोग लाचार होकर ही आये हैं न जाना अन्याय होगा। तुम जाओ।

इस आज्ञाको न मानना कल्लूके बूतेकी बात नहीं थी।

कल्लूको देखकर भक्तोंकी महामायाकी चिन्ता दूर हुई। समय अधिक नहीं था। पटापट बकरेको देवीके नामपर उत्सर्ग करके उसके माथेपर सेंदुर लगाया गया गलेमें लाल फूलोंकी माला डाली गई। इसके बाद सिरसमेत उसका गला बलिदानके काठके भीतर रखा गया। घर भरके सब लोग जोरसे 'माँ' 'माँ' कहकर चिल्लाने और अपनी भक्तिका प्रचण्ड प्रदर्शन करने लगे। उस कोलाहलमें उस बेचारे निरीह जीवका मिमियाना—करुण अन्तिम आर्तनाद न जाने कहाँ डूब गया। कल्लूके हाथका खाँड़ा पल-भरमें ही ऊपर उठा और पूरी ताकतसे नीचे गिरा। साथ ही बलिके बकरेके कटे हुए कण्ठसे रक्तका फुहारा छूटा और उसने चारोंकी धरतीको लाल कर दिया। कल्लू भयभीत अपनी आँखें मूँदे था।

धीरे धीरे ढाक-ढोल और शंख-घड़ियालका मिला हुआ शब्द धीमा पड़ा। दूसरा भी बकरा पास ही खड़ा काँप रहा था उसके माथेपर सेंदुरका टीका लगाया गया गलेमें लाल फूलोंकी माला पहनाई गई। फिर उसी बलिके काठपर उसकी गर्दन रखी गई। उसका भी वैसा ही दीन दृष्टिसे देखते हुए, प्राणोंकी भीख माँगते हुए मिमियाना और चिल्लानेका करुण शब्द सुन पड़ा। बहुतसे कण्ठोंकी 'माँ' 'माँ' कहकर माताके प्रति भक्ति प्रकट करनेकी भारी पुकार गूँज उठी। फिर कल्लूके हाथका वह रक्तसे सना खाँड़ा पलक मारते ही उठा और नीचे गिरा। पशुका शरीर दो टुकड़े होकर पृथ्वीपर कुछ देर तक पड़ा रहा हाथ-पैर पटककर क्या जाने किससे आखिरी बार फरियाद करके बेचारा स्थिर हो गया। उसके कटे हुए गलेसे निकली हुई रक्तकी धाराने उस जगहकी

बकरोंको मार भी खतम कर दिया।

बाजा बजानेवाले पागलकी तरह ज़ोरसे ढोल पीट रहे थे। आँगनमें भीड़ किये हुए बहुतसे लोग बहुत तरहसे कोलाहल कर रहे थे। सामनेके बरामदेमें ऊँचे आसनपर बैठे हुए मनोहर चटर्जी आँखें मूँदकर इष्टदेवका नाम जप रहे थे। एकाएक बब्बू एक भयंकर हुंकार कर उठा। सब शोर-गुल थम गया। सब लोग विस्मयसे स्तब्ध हो गये। यह क्या! बब्बूकी असम्भव रूपसे फैली हुई आँखोंकी दोनों पुतलियाँ इधर उधर घूम रही थीं। उसने चिल्लाकर ज़ोरसे कहा—और पाँठा (बकरा) कहाँ है?

डरके किसी आदमीने डरते डरते जवाब दिया—और पाँठा तो नहीं है। हमारे यहाँ सिर्फ दो बलि दी जाती है?

बब्बू अपने हाथके खूनसे सने हुए खाँड़ेको सिरके ऊपर दो-तीन दफे घुमा कर गरज उठा—पाँठा नहीं है! यह न होगा। मेरे ऊपर खून सवार है। पाँठा लाओ, नहीं तो आज मैं जिसे पाऊँगा उसीको पकड़कर मनुष्य की बलि दूँगा।

इसके बाद "जय माँ, जय महाकाली" कहकर वह छलाँग मारकर, उछल-कर, बलिस्थलके इस पारसे उस छोरपर पहुँच गया। उसके हाथका खाँड़ा उस समय झन्कारके साथ सिरके ऊपर घूम रहा था।

उस समय जो कुछ हुआ उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। सभी एक साथ दरवाजेकी ओर भागे, कहीं बब्बू बलिदानके लिए पकड़ न ले। भागने की कोशिशमें वह धक्का-मुक्की और रेल-पेल हुई कि वही दृश्य उपस्थित हो गया जो शिवके गणोंके हाथों दक्षका यज्ञ भंग करनेपर कभी हुआ होगा। कोई गिर कर चूर कुचल गया कोई घुटनोंके बल रेंगकर किसीके पैरोंके भीतर सिर छिपाने की कोशिश करने लगा, किसीका गला किसीकी बगलमें ऐसा दबा कि उसका दम घुटने लगा। एक आदमी दूसरेको धकेलकर भागनेकी कोशिश करते समय दौड़के बल आगे गिर पड़ा उसके दाँत टूट गये। लेकिन यह हाल मिनट दो मिनट ही रहा। उसके बाद सारा आँगन खाली हो गया।

बब्बू गरज उठा—मनोहर चटर्जी कहाँ है? पुरोहित कहाँ गया?

पुरोहित महाशय रोगी आदमी थे, इस गड़बड़में मौका पाकर पहले ही देवी-

की प्रतिमाकी आड़में जाकर छिप गये थे। गुरुदेव कुशासनपर बैठे दुर्गापाठ कर रहे थे। चटपट उठकर ठाकुरद्वारेकी दालानके एक मोटे खम्भेकी आड़में जाकर छिप रहे। लेकिन मनोहर बाबू बहुत मोटे थे इसलिए उनके लिए इधर-उधर भागना बड़ा कठिन था। दस्युने आगे बढ़कर बाँयें हाथसे उनका एक हाथ कसकर पकड़ लिया और कहा—चलो, बलिकाष्ठपर अपना गला रखो।

एक तो दस्युकी यमकी तरह काली मूर्ति उसपर दाहिने हाथमें उसके खाँडा। डरके मारे पटवारीके प्राण सूख गये। रुलाँसे गलेसे यह विनती करने लगा—दस्यु! बेटा! जरा शान्त होकर देखो मैं पाँठा नहीं हूँ, आदमी हूँ। मैं नातेमें तुम्हारा चाचा होता हूँ भैया। तुम्हारे बाप मेरे छोटे भाईकी तरह हैं।

दस्युने कहा—मैं यह कुछ नहीं जानता। मुझपर खून सवार है। चलो, मैं तुम्हारी बलि दूँगा माताका आदेश है।

पटवारी महाशय जोरसे रो उठे—ना बेटा माताका आदेश नहीं है, कभी नहीं है। माता तो जगत्-जननी—सबकी माता है।

दस्युने कहा—जगत्की माता है! यह ज्ञान तुमको है! और पाठा बलि दोगे! फिर मुझे पाठा काटनेके लिए बुलवाओगे! बोलो!

पटवारीने रोते-रोते कहा—कभी नहीं भैया अब कभी बलि नहीं दूँगा। मैं माताके आगे तीन बार कहकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि आजसे मेरे घरमें बलिदान बन्द हो गया।

दस्युने कहा—ठीक कहते हो न!

पटवारी बोले—ठीक कहता हूँ भैया, बिलकुल ठीक—अब कभी नहीं। मेरा हाथ छोड़ दो बेटा मैं घरको जाऊँगा।

दस्युने हाथ छोड़कर कहा—जाओ, तुमको छोड़ देता हूँ। लेकिन पुरोहित किधर गया! और गुरुदेव! वह कहाँ है!

यह कहकर वह फिर एक बार हुंकार करके छलाँग मारकर ठाकुरद्वारेकी दालानकी ओर जैसे आगे बढ़ा वैसे ही प्रतिमाके पीछेसे और खम्भेकी आड़से दो दुबे-दुबे कण्ठोंकी मन्द आर्त रोनेकी आवाज सुनाई पड़ी। महीन और मोटे गलेके ये दोनों शब्द ऐसे अद्भुत और हँसानेवाले थे कि दस्यु अपनेको सँभाल न सका—हाः हाः हाः करके जोरसे हँसते हुए उसने अपने हाथका खाँडा फेंक

दिया और एक दौड़ लगाकर घरके बाहर निकल गया।

उस दिनसे किसीको यह समझनेको बाकी नहीं रहा कि वह खून सवार होने की बात बिलकुल झूठी थी—सब उसकी चालाकी थी। कल्लू शैतानी करके अबतक लोगोंको डरा रहा था। पाँच मिनटके भीतर ही सब भागे हुए लोग फिर आकर जमा हो गये।

देवीकी पूजा तब भी बाकी थी। उसमें यथेष्ट विघ्न पड़ गया था। उस भारी शोर-गुलके भीतर पटवारी महाशय सबके सामने बार-बार प्रतिज्ञा करने लगे—इस बदमाश छोकरेको कल सबेरे ही अगर उसके बापसे कहकर पचास जूते न लगवाऊँ तो मेरा नाम मनोहर पटवारी नहीं।

लेकिन कल्लूको जूते नहीं खाने पड़े। सबेरे उठकर ही वह घरसे ऐसा गायब हुआ कि सात-आठ दिनतक उसका कुछ पता ही नहीं लगा। सात आठ दिनके बाद एक दिन अँधेरेमें छिपकर मनोहर पटवारीके घरमें घुसकर कल्लूने उनके पैर छूकर क्षमा माँग ली और मिले हुए दण्ड या पिताके कोपसे छुटकारा पा गया।

खैर, वह चाहे जो हो, देवताके सामने पटवारीने जो प्रतिष्ठान न करनेकी कसम खाई थी उसे उन्होंने नहीं तोड़ा। उनके घरसे काली-पूजाका प्रतिष्ठान उठ गया।

४—पचास साल पहले

यह डकैतोंका किस्सा है। इन लोगोंकी बातें सुनी तो बहुतोंने हैं और मुझ जैसे जो बूढ़े हैं, उनमेंसे बहुतोंने देखी भी हैं। पचास-साठ साल पहलेतक पश्चिम बंगालमें—अर्थात् हुगली, बर्दवान आदि जिलोंमें—इन लोगोंका उपद्रव बहुत अधिक था।

उसके भी पहले, अर्थात् दादी-नानीके मुँहसे सुना है कि लोगोंके आने-जानेकी कोई भी राह या सड़क ऐसी न थी, जिसपर शामके बाद चलना खतरेसे खाली हो। ये सब लुटेरे जैसे लोभी थे वैसे ही निर्दयी निष्ठुर भी। ये रातभर सड़कके किनारे पेड़ोंके झुंडमें, झाड़-झंखाड़में, छिपे रहते थे। इनके एक हाथमें बड़ी-सी लाठी और दूसरे हाथमें, लम्बे बाँसके भारी और छीलकर नुकीले बनाये गये छोटे-छोटे टुकड़े रहते थे। इन टुकड़ोंको 'पाबड़ा' कहते थे।

जबरदस्ती पर जोर पड़ा।

मेरे रोने धोनेसे मेरी दादी तो कुछ नरम पड़ीं, मगर नयन मुझे साथ ले जानेके लिए किसी तरह तैयार नहीं हुआ। बोला—सौंधी जाने-आनेमें लगभग आठ कोसकी ही तो राह है, चाँदनी रात होनेके कारण अकेलेमें ले जा सकता था। लेकिन रास्ता ठीक नहीं है—खतरा है। अगर मैं समयसे न लौट सका तो आप ही बताइये, अकेले गऊको सँभालूँगा या बछड़ेको सँभालूँगा या अपने को सँभालूँगा !

रास्तेका भय क्या है, यह इस तरफके सभी लोग जानते हैं। दादीजी एकदम 'ना' कर बैठीं। मुझसे बोलीं—तू कभी नहीं जा सकता। अगर चोरीसे भाग जायगा तो तेरे मास्टरको चिट्ठी लिखकर बता दूँगी। वह कमसे कम पचास बेंत मारेंगे।

लाचार होकर दूसरी तरकीब निकाली। नयनके चले जानेपर मैं पोखरमें नहाने जानेका बहाना करके शरीरमें तेल मलता हुआ लँगोटा कंधेपर डालकर घरसे निकल पड़ा। नदीके किनारे-किनारे बन-जंगल और झाड़-झंखाड़के मार्गों के भीतर होकर दो-ढाई मीलतक दौड़ता हुआ चला गया। जिस जगहपर हमारे गाँवका कच्चा रास्ता ग्रांडट्रंक रोडकी पक्की सड़कसे जाकर मिला था, उसी जगह जाकर मैं खड़ा हुआ और लगभग दस मिनटके बाद ही मुझे नयन आता दिखाई दिया।

मुझे देखकर पहले तो वह बहुत बका-झका उसके बाद मैं किस तरह बहाना करके आया हूँ—यह सुनकर हँस पड़ा। उसने कहा—अच्छा चलो देखता जो भाग्यमें है, वही होगा। इतनी दूर आकर अब तो लौट नहीं सकता।

नयनने बड़गाँवकी एक दूकानसे चिवड़ा और बताशे लेकर मेरी धोतीके खूँटमें बाँध दिये मेरे खानेके लिए। चलते-चलते लगभग दोपहरको हम दोनों वर्धपुरमें नयनकी बुआके घर पहुँचे। नयनकी बुआ गरीब नहीं थी खाने पहननेका कोई कष्ट नहीं था।

घरके नीचे ही कुन्ती नामकी नदी थी, नदी छोटी थी, पर पानी इतना था कि उसमें ज्वार-भाटा आया करता था। मैं नदीमें जाकर नहा आया। बुआकी नयी बहू केलेके पत्तेमें चिउड़ा गुड़, दूध और केले, फलाहारका सामान परोस गई।

भोजनके बाद नयनकी बुआने कहा—बच्चा चार-पाँच कोस पैदल चलकर आया है अभी फिर लौटकर जाना होगा। अब कुछ देर लेटकर आराम कर लो भैया, धूप कम होनेपर तीसरे पहर जाना।

बुआका छोटा लड़का मेरी फरमाइश पूरी करने—मेरे लिए बाँसकी कम-चियाँ काटनेके लिए गया।

नयन और मैं दोनों ही पैदल चलकर इतने थक गये थे कि सो गये। हमारी आँख जब खुली तब चार बज गए थे। दिनकी ओर देखकर नयन कुछ चिन्तित-सा देख पड़ा, लेकिन मुँहसे उसने कुछ नहीं कहा। दस-पन्द्रह मिनटमें ही हम दोनों चलने को तैयार हो गये। चलते समय नयन पैर छूकर बुआको पाँच रुपये देने लगा लेकिन उन्होंने लिये नहीं लौटा दिये। बोलीं—अपने बच्चोंको इन रुपयोंकी मिठाई ले देना।

मेरे कंधेपर बाँसकी कमचियोंका गट्ठा था। नयनके बाँयें हाथमें गऊकी रस्सी और दाहिने हाथमें लम्बी बाँसकी लाठी थी। लेकिन गऊको लेकर तेज चला नहीं जा सकता। दो कोस भी न चल पाये थे कि शाम हो गई और आकाशमें चन्द्रमा दिखाई दिया। रास्तेके दोनों तरफ बड़े-बड़े पीपल बरगद और पाकरके पेड़ थे, जो ऊपर जाकर आपसमें ऐसे मिल गये थे कि राहमें घना अँधेरा छा गया था। सिर्फ जगह जगह पत्तोंकी फाँकोंसे छनकर आई हुई चाँदनीका हलका प्रकाश सड़कके ऊपर आकर पड़ रहा था।

नयनने कहा—भैया तुम मेरी बाईं तरफ आकर अपने बाँयें हाथसे गऊकी रस्सी पकड़ लो। मैं तुम्हारे दाहिने रहूँगा।

मैंने कहा—क्यों नयन दादा?

नयनने कहा—कुछ नहीं, यों ही। आओ, चलें।

मैं बालक होनेपर भी समझ गया कि नयनकी आवाजमें घबराहट भरी है।

धीरे-धीरे पक्की सड़क छोड़कर हम कच्ची राहमें पहुँच गये। आसपासका जंगल, झाड़-झंखाड़ और भी घना हो आया। बहुतसे पुराने और बड़े-बड़े पाकरके पेड़ोंकी चोटीने ऊपर सिरसे-सिर मिलाकर, घने पत्तोंका पर्दा डालकर, कहींपर तनिक भी फाँक नहीं रखी थी, जिससे होकर चन्द्रमाका प्रकाश जमीनतक पहुँच पाता। संध्याके समय सियारोंकी आवाजें इसी

पशुओंको पर हाँक ले गये थे। पशुओंके खुरोंसे उठी हुई धूल अब भी नाक और मुँहमें भरी जा रही थी।

इसी समय सामने लगभग ५०-६० हाथके फासलेपर किसीकी गला फाड़कर निकली हुई चीख सुनाई पड़ी—बाप रे! मार डाला रे! अरे कोई बचाओ! बचाओ! साथ ही साथ लाठियाँ बरसनेका शब्द हुआ। उसके बाद ही सन्नाटा छा गया।

नयन सन्नाटेमें आकर खड़ा हो गया। बोला—खतम हो गया!

मैंने पूछा—क्या खतम हो गया नयन दादा?

एक आदमी!—कहकर कुछ देर खड़े रहकर उसने कुछ सोचा उसके बाद कहा—चलो भैया हम लोग जरा होशियार होकर चलें।

गफूर बाईं तरफ, नयन दाहिनी तरफ और मैं दोनोंके बीचमें, इस तरह हम लोग आगे बढ़े।

बचपनसे सुनता आ रहा हूँ, बीच-बीचमें लुटेरोंके शिकार हुए लोगोंकी लाशें भी देखी हैं, इसलिए बालक होनेपर भी सब समझ गया। "अरे कोई बचाओ! बचाओ!" की दीन पुकार उस समय भी मेरे दोनों कानोंमें गूँज रही थी।

मैंने डरते-डरते कहा—नयन दादा वे सब तो सामने ही खड़े हैं, हम लोग जायँ कैसे? अगर मारें"

नयनने कहा—नहीं भैया मेरे पहले नहीं मारेंगे। वे लुटेरे हैं न बहादुर नहीं हो सकते। देखते ही भाग खड़े होंगे। बड़े डरपोक होते हैं।

गफूर, मैं और नयन, तीनों धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगे। डरके मारे पैर काँप रहे थे, साँस नहीं ले पा रहा था ऐसी हालत थी। रातकी छाया और धूलके मारे अभीतक कुछ भी नहीं देख पड़ा था। पन्द्रह बीस हाथ आगे बढ़ते ही देख पड़ा, हम लोगोंकी आहट पाकर अथवा शायद देखकर पाँच-छः आदमी दौड़कर एक पाकरके पेड़की आड़में छिप गये।

नयनने एकाएक खड़े होकर बड़ी भयानक भारी आवाजसे चिल्लाकर कहा—खबरदार! तुम लोगोंको बताये देता हूँ—चौमनका लड़का भी साथ है। अगर पकड़ा जाय तो तुममेंसे एकको भी जीता न छोड़ूँगा!

किसीने इसका जवाब नहीं दिया। हम लोगोंने और भी कुछ आगे बढ़कर

देखा, राहमें एक आदमी मुँहके बल मिट्टीमें पड़ा है। उसके ऊपर कुछ थोड़ा सा चन्द्रमाका प्रकाश पड़ रहा था। नयनने झुककर देखा और हाय-हाय कर उठा। उस आदमीकी नाकसे, कानोंसे मुँहसे खून बह रहा था। केवल उसके पैर उस समय भी थर-थर काँप रहे थे। उसके कंधेकी भिखारीकी झोली जैसी हो कंधेपर थी, लेकिन उसका चावल मिट्टीमें इधर उधर बिखर गया था। उसके हाथका एकतारा लाठियोंकी चोटसे चूर-चूर होकर अलग पड़ा था।

नयन सीधा उठकर खड़ा हो गया। बोला—अरे पापियो, अरे नरकके कीड़ो! तुमने बेकार ही एक भिखारीके, एक वैष्णवके, प्राण ले लिये! यह तुमने क्या किया!

नयनका कलेजा यह भयानक सत्य जैसे सहसा वेदनासे भर गया। लेकिन उधरसे कोई जवाब नहीं आया। नयनके इस दुःख और वेदनाका प्रधान कारण यह था कि वह खुद भी एक कट्टर वैष्णव था। गुरुसे कंठी ले चुका था। उसके गलेमें मोटे मोटे दानोंकी तुलसीकी माला थी नाकसे माथेतक लम्बा तिलक था सारे शरीरमें तरह-तरहकी छापें लगी थीं। उसके घरमें एक छोटा-सा ठाकुरद्वारा भी था, जिसमें चैतन्य महाप्रभुका पट (चित्र) स्थापित था। हजार बार नाम मंत्र (हरिनाम) जपे बिना वह पानी नहीं पीता था। बचपनमें उसने पाठशालामें पहली पोथी पढ़ी थी। अब अपनी कोशिशसे उसने इतनी विद्या हासिल कर ली है कि अपनेकी पोथी मजेमें बाँच लेता है। ढिबेकी रोशनीमें ठाकुरजीकी दालानमें बैठकर वह सस्ते संस्करणके विश्रामसागर, भक्तिमाल आदि वैष्णव ग्रंथ नित्य बहुत रात गयेतक सुरसे पढ़ता है। मांस वह खाता नहीं और उसका इरादा है कि आगे चलकर किसी दिन मछली खाना भी छोड़ देगा।

नयनके वैष्णव होनेका भी एक छोटा-सा इतिहास है। उसकी अवस्था चालीसके लगभग है, लेकिन जब पचीस-तीस थी तब डकैतीके एक मामलेमें फँसकर वह एक बार सालभर हवालात और जेलमें रह आया था। मेरी दादीके एक चचेरे भाई जिलेके बड़े और नामी वकील थे। दादीजीने उनके जरिये पैरवी कराकर और बहुत-सा धन खर्च करके नयनको छुड़ाया था।

जेलसे छुटकारा पाते ही वह सीधा नवद्वीप (नदिया) चला गया और

किसी गोसाइँ महाराजसे मंत्र लेकर, सिर मुड़ाकर, तुलसीकी माला पहनकर गाँवको लौटा। उस दिनसे वह पक्का और कट्टर वैष्णव है। नयन जब-तब आकर मेरी दादीको दहलीजपर सिर रखकर प्रणाम कर जाता था। वह ब्राह्मणकी विधवा थीं नयनको छूनेका अधिकार न था, इसलिए वह किसी भी पेड़का पत्ता लेकर दादीके पैरोंके पास रख देता था। दादी उसे अपने पैरोंके अँगूठेसे छू देती थीं। नयन उस पत्तेको उठाकर माथेसे, पलकोंसे बराबर लगाकर कहता था—माँजी असीस दीजिये कि अबकी मैं मरकर आपकी जातिमें पर जन्म लूँ जिससे तुम्हारे पैरोंकी धूल अपने हाथसे लेकर माथेमें लगा सकूँ। दादी भी स्नेहपूर्वक हँसकर कहती थीं—नयन अबकी तू मेरे आशीर्वादसे ब्राह्मणका जन्म पायेगा।

नयनकी आँखोंमें आँसू भर आते। वह कहता—इतनी बड़ी आशा तो नहीं करता माँजी। मेरे पापोंकी कोई हद नहीं मैं महापापी हूँ और यह बात और कोई न जाने तुम तो अच्छी तरह जानती हो। तुमसे तो मैंने कुछ भी नहीं छिपाया माँजी।

दादी कहतीं—तेरे सब पाप मिट गये हैं नयन। तेरे जैसे भक्त और भगवान्‌पर विश्वास रखनेवाले आदमी इस संसारमें कितने हैं! इस राहको तू कभी न छोड़ना रे, तेरी करनी तेरा परलोक बना देगी। उसके लिए कुछ चिन्ता न कर।

नयन आँखें पोंछता-पोंछता चल देता। दादी जाते वक्त कहती थीं—कल आकर यहीं प्रसाद पाना। देख भूलना नहीं।

यह सब मैंने कई बार अपनी आँखसे देखा है। इसीलिए, जिन वैष्णवोंकी वह जी-जानसे सेवा करता है, उनमेंसे एककी इस प्रकार बेदर्दीके साथ हत्या हुई देखकर वह अगर इस तरह क्रोधके मारे आपेसे बाहर और विचलित हो उठा तो इसमें विस्मयकी कोई बात नहीं थी।

नयनने कहा—बेचारा गरीब वैष्णव भीख माँगकर शामको घर लौटा जा रहा था। उसके पास क्या पानेकी आशासे पापियो, तुमने उसकी हत्या कर डाली! दो-चार आने पैसे ही तो हाथ लगे होंगे। जी चाहता है, तुम लोगोंको भी इसी तरह मार डालूँ।

उसकी पेड़की आड़से जवाब आया—तो चार आने लेके तो कौन सुराति देता है रे! अपने पुरखाके मालसे अशर्फी दू, बच गया! अपनी यह धरम-करमकी बातें रहने दे—भाग जा भाग जा।

उसकी बात पूरी होनेके पहले ही नयन शेर लेरकी तरह गरज उठा। बोला—हरामजादो! कायरो! मारूँगा मैं! तुम्हारे सरको!

इतना कहकर टेंटसे मेरी थातीसे लिये हुए पाँचों रुपये निकालकर, उन्हें झनझनाते हुए कहा—देखो, मेरे पास इतने रुपये हैं। इन्हें न छोड़ना। हिम्मत हो तो सब मिलकर आओ ले जाओ। लेकिन फिर तुम्हें सावधान किये देता हूँ, मेरे हाथ जो यह लालपानका कड़ा है, इसके अंगमें अगर जरा भी चोट आई तो तुम सबको सजाके लिए इसी राहपर मुक्का दूँगा तब घर चलूँगा। अकेला राहमें मैं नयन खड़ा हूँ, और कोई नहीं। पूछता हूँ, तुमने मेरा नाम सुना है कभी, या यों ही लाठी हाथमें लेकर भिखारियोंको मारते घूमते हो? हरामजादो, तुम सियारों और कुत्तोंसे भी गये बीते हो।

नयनके पहले जवाब आया था उस पेड़के नीचे सन्नाटा छा गया, किसीने चूँ नहीं की। दो-तीन मिनट चुप रहकर नयनने और भी अधिक कड़ी आवाज़ करके गाली देकर पुकारा—क्यों रे, आओगे, या मैं रुपये लेकर ही मैं घर जाऊँ!

फिर कोई जवाब नहीं आया। राहमें दो-तीन पत्थर पड़े हुए थे। नयनने एक-एक करके वे सब उठा लिये। फिर कहा—चलो मैया, अब घर चलें। रात हो रही है, तुम्हारी थाती शायद चिन्ता कर रही होगी। ये सब सियार-कुत्तोंकी औलाद ही तो हैं, मनुष्यके पास कैसे फटक सकते हैं! तुम यदि एक पीतलकी ही कलमकी हाथमें लेकर इन्हें मारने आओगे, तो भी ये सब सिरपर पैर रखकर भाग जायेंगे मैया।

इस बीचमें मेरा डर दूर हो गया था और साहस बढ़ गया था। कहा—चलो नयन दादा!

नयन हँस पड़ा। बोला—इतने तो भाई, कोई अचरज नहीं। सियार-कुत्ते आदमीका सामना तो नहीं करते, लेकिन मौका पाकर काटनेसे तो बाज नहीं आते। यही हाल इनका भी है।

हम दोनों आगे चले। नयन बिलकुल चुप था। मैंने बार-बार कई प्रश्न किये, पर उसने एकका भी जवाब नहीं दिया सिर्फ हाँ या ना कह देता था। कुछ दूर आगे जाकर एक बड़ेसे पेड़की छायामें, खूब घने अन्धकारके बीच वह ठिठककर खड़ा हो गया। बोला—ना भैया आँखोंसे भैयाजको इसा देखकर हत्यारोंको उसको सजा दिये बिना मुझसे जाया न जायगा। ब्राह्मण-भैय्याके प्राण लेनेका बदला मैं इन पापियोंसे जरूर लूँगा।

मैंने पूछा—कैसे बदला लोगे नयन दादा?

वह बोला—क्या मैं एक सालेको भी न पकड़ पाऊँगा? तब हम दोनों मिलकर इसी तरह लाठीसे पीट-पीटकर उसे भी मार डालेंगे।

पीटकर मारनेके आनन्दसे मैं बेहद प्रसन्न और उत्साहित हो उठा। जैसे यह भी कोई नई तरहका खेल था मेरी समझमें। इन लुटेरोंके बारेमें मैंने न जाने कितनी तरहकी बातें सुनी थीं लेकिन अब समझ गया कि सब झूठ हैं। नयन दादाने आने नहीं दिया नहीं तो मैं ही पीछा करके एकको पकड़ लाता। मैंने कहा—नयन दादा तुम अच्छी तरह एकको पकड़े रहना मैं अकेले ही पीटकर मार डालूँगा। लेकिन कहीं मेरी छीप टूट गई तो!

नयनने फिर हँसकर कहा—छीपकी मारसे नहीं मरेगा भैया यह सोंटा लो।

कहकर नयनने एक अच्छा सा पतला डन बटोरकर आये हुए पाकड़ोंमेंसे निकाला और वह मेरे हाथमें थमाकर उसने कहा—गढ़को पकड़कर इसी जगह खड़े रहो भैया मैं अभी दो-एकको पकड़े लाता हूँ। लेकिन देखो रोने चिल्लानेकी आवाज सुनकर डरना नहीं।

मैंने कहा—ना डर क्या है। यह सोंटा जो मेरे हाथ में है।

तब नयनने बाकी दोनों पकड़े कांखमें दबाये, बड़ी लाठी दाहिने हाथमें ली और फिर रास्ता छोड़कर झाड़ियोंके किनारे-किनारे घुटनोंके बल दोनों हाथोंके सहारे उसी तरफ और चला।

लुटेरोंने समझा था कि हम लोग भाग गये इससे निश्चिन्त होकर और आये थे और मरे हुए भिखारीकी ईंट उठाकर और झोली फाड़कर देख रहे थे कि उसके पास क्या है। एकाएक उनमेंसे एकने देखा कि पास ही एक पेड़की आड़में नयन खड़ा है। वह डरकर चिल्ला उठा—वहाँ कौन खड़ा है?

नमन बोला—मैं नमन काठी हूँ। ऐसे ही खड़ा रह। भागा नहीं कि मरा।

लेकिन नमनकी बात पूरी होनेके साथ ही मैंने बहुत-से पैरोंकी भागनेकी आहट सुनी और लगभग उसीके साथ ही अत्यन्त आर्त स्वरसे कोई रो उठा और जैसे हड़बड़ाकर एक झाड़ीके ऊपर गिर पड़ा।

नमन चिल्लाकर बोला—भैया, एक सालेको पकड़ लिया है, और सब भाग गये।

यह शुभ खबर पाकर मैं वहीं खड़ा होकर उछलने लगा। मैंने जोरसे चिल्लाकर कहा—उसे यहाँ पकड़ लाओ नमन दादा, मैं पीटकर मारूँगा। तुम न मार डालना।

नमनने कहा—नहीं भैया तुम्हीं मारना।

और एक करुण शब्द सुन पड़ा जान पड़ता है नमनने उसके लाठीका हूल मारा इसीसे वह आदमी फिर चिल्ला उठा। दो-एक मिनटके बाद मैंने देखा एक आदमी लँगड़ाता, लड़खड़ाता हुआ आ रहा है और उसके पीछे नमनचन्द है।

पास आते ही वह आदमी जोरसे रोता हुआ मेरे पैरोंसे लिपट गया। नमनने लाठीका हूल मारकर उसे उठाकर खड़ा किया। अब उस आदमीको देखकर मैं काँप उठा। मुँहमें उसने कालिख पोत रखी थी और उसमें बीच-बीचमें चूनेकी टिपकी लगी हुई थी। वह जैसा दुबला और कमजोर था, वैसा ही लम्बा। सैकड़ों जगहसे फटा एक चीथड़ा लपेटे था। वह थरथर रो रहा था।

उसके गालमें एक प्रचंड थप्पड़ मारकर नमनने कहा—चुप कर हरामजादे! जो मैं पूछूँ उसका सच-सच जवाब दे। तुम कै आदमी थे? उनके नाम और घरका पता बता।

पहले तो उस आदमीने कुछ बताना नहीं चाहा, पर पीठपर और एक लाठीका हूल पड़ते ही उसने अपने सब साथियोंके नाम और पते बता दिये।

नमनने कहा—याद रखूँगा भूलूँगा नहीं। अब बता, बेचारे भिखारीके गिर पड़नेपर तूने लाठीके कितने हाथ मारे थे?

उसने कहा—यही पाँच सात।

नमनने दाँत पीसकर कहा—[illegible]

उसी तरह भेड़, जिस तरह मैंने उस वैष्णव भिखारीको पड़े देखा था !

फिर मुझसे कहा—भैया इधर बढ़ आओ । देखो इस छोटेके पाँच-सात हाथोंमें ही इसे खतम कर देना चाहिए । देखूँगा तुम्हारे हाथोंमें कितनी ताकत है ।—और तू साले देर क्यों कर रहा है ? भेड़

इतना कहकर नयनने कान पकड़कर उसे राहमें बिठा दिया और उसके आपसे बैठनेके पहले ही उसकी पीठमें कसकर दो-तीन लातें ऐसी जमाईं कि वह औंधे मुँह लोट गया !

तब नयनने मुझसे कहा—हाँ भैया अब मारो तो ताककर । दो-तीन हाथमें ही काम तमाम हो जायगा तुम्हें अधिक कष्ट नहीं करना पड़ेगा ।

नयन बाबाका स्वर बदल गया, उसका चेहरा ही जैसे बदल गया । वह चेहरा देखकर मेरे रोंगटे खड़े हो गये, मेरे हाथ-पैर काँपने लगे । मैंने रुआँसे होकर कहा—मुझसे यह काम न हो सकेगा नयन बाबा ।

नयनने कहा—तुमसे न हो सकेगा ? अच्छा तो मैं ही इसे खतम करता हूँ ।

मैंने विनतीके स्वरमें कहा—ना नयन बाबा, मारो नहीं ।

लेकिन वह आदमी लात खाकर जो धरती पर लोट गया तो अब तक उसने न हाथ-पैर हिलाये और न मुँहसे ही प्राण बचानेके लिए कुछ कहा ।

मैंने कहा—चलो, इसे बाँधकर थाने पहुँचा दें ।

यह सुनकर नयन जैसे चौंक उठा । बोला—थानेमें ? पुलिसके हाथमें ?

मैंने कहा—हाँ । इसने जैसे एक आदमीको मारा है, वैसे ही वे भी इसे धरती पर पछाड़ेंगे । जैसी करनी वैसी भरनी ।

नयन जरा देर चुप रहा । इसके बाद उस लुटेरेके एक और लाठीका हूल मारकर बोला—अबे उठ ।

लेकिन वह हिला-डुला भी नहीं । नयनने कहा—साला मर गया क्या ? यह तो बस हड्डियोंका ढाँचा है, शायद दो-तीन दिनसे पेटमें अन्नका दाना भी नहीं गया । उसपर चला था औरोंकी हत्या करने और लूटने ।—जा साले दूर हो । उठकर घर जा ।

मगर वह आदमी उसी तरह पड़ा रहा । तब नयनने झुककर, उसकी नाक पर हाथ रखकर कहा—नहीं, मरा नहीं । बेहोश हो गया है । होश आनेपर

आप उठकर घर चला आयगा। चलो नयन हम भी घर चलें। बहुत देर हो गई। माँ फिक्र कर रही होंगी।

राहमें चलते-चलते मैंने कहा—उसे छोड़ क्यों दिया नयन दादा? पुलिसको सौंप देते तो अच्छा होता।

नयनने कहा—क्यों भला?

मैंने कहा—फाँसी होती। खून करनेसे फाँसी होती है, यह हमारी पढ़नेकी पुस्तकमें लिखा है।

नयनने कहा—लिखा है भला?

मैंने कहा—लिखा तो है ही। चलो घरमें मैं तुमको किताब लाकर दिखा दूँगा।

नयनने विस्मयका भान करके कहा—कहते क्या हो भैया, एक आदमीकी हत्याके बदलेमें एक और आदमीको मारा जाता है?

मैंने कहा—हाँ यही तो। यही तो उसकी उचित सजा है। इन बातोंको पुस्तकमें पढ़ा है।

नयनने जरा हँसकर कहा—लेकिन सभी उचित बातें तो संसारमें होती नहीं हैं भला।

मैंने कहा—क्यों नहीं होती हैं नयन दादा?

नयनने एकाएक कुछ जवाब नहीं दिया। कुछ देर सोचकर कहा—जान पड़ता है, सभी लोग अपराधियोंको पकड़ा नहीं दे सकते, इसलिए।

क्यों नहीं पकड़ा सकते क्यों मनुष्य यह अन्याय करता है यह बात उस दिन भी मैं नहीं जान पाया और आज भी नहीं जान सका। केवल यही बात सोचते-सोचते कुछ दूर तक चलनेके बाद मैंने पूछा—अच्छा नयन दादा, वे छोड़कर फिर भी मनुष्यकी हत्या करेंगे?

नयनने कहा—नहीं भैया, अब न करेंगे। जबतक मैं जिन्दा हूँ, तबतक वे यह काम फिर नहीं करेंगे।

इस जवाबसे मैं अधिक प्रसन्न नहीं हो सका। उन्हें फाँसी होना ही मेरी समझमें ठीक था—मुझे पसन्द था। मैंने कहा—लेकिन वे लोग हत्या करके बच तो गये—उन्हें सजा तो नहीं मिली?

नयन अनमना होकर कुछ सोच रहा था। बोला—क्या अर्ज, शायद एक दिन सजा मिलेगी। पर वैसे ही प्रफुल्ल होकर बोला—मैं तो इतना अनजान नहीं मैया, तुम्हारी दादीकी अनजानी हैं। तुम जब और बड़े होना तब किसी दिन उनसे पूछना।

लेकिन और बड़े होनेतक मैं सब्र नहीं कर सका। घरमें पैर रखते ही सब ब्योरेवार हाल—केवल अपने हाथ-पैर काँपनेकी फिक्र भरी बात लेकर—मैंने अपनी दादीके आगे, आँख-मुँह-हाथ आदि अंग-प्रत्यंगके यथोचित संचालनके साथ विस्तारसे कह डाला। आदिसे अन्ततक हम दोनोंकी मुठभेड़-विजयकी कथा सुनकर दादीने केवल एक साँस छोड़ी और मुझे छातीके पास खींचकर गुमसुम-सी बैठी रहीं।

नयन अबतक चुपचाप सुन रहा था। मेरी बात समाप्त होते ही पाँचों रुपये दादीके पैरोंके पास रखकर उसने कहा—माँजी, मजे तो यों ही मिल गए, तुम्हारे रुपये तुम्हारे ही पास और आये। न किसे कुमाने और न किसे तुम्हारी मैंझली बहूके माइकोंके रुकने पड़ेंगे।

दादीने जरा हँसकर कहा—मैं ब्याह होनेपर मँझली बहूसे कह दूँगी। लेकिन ये रुपये मैं भी नहीं लूँगी नयन। या इन्हें अपने ठाकुरजीके भोगमें लगाना। लेकिन एक बात आज मैं तुमसे कहती हूँ नयन अभी तू पक्का वैष्णव नहीं हो सका।

नयनने कहा—क्यों माँजी?

दादीने कहा—पक्के वैष्णव क्या रुपये कमाकर लोगोंको अपघातके लिए उकसाते हैं? मान लो, अगर इनके बोझमें न सँभल पाकर भागा होता तो क्या होता?

नयनने कहा—होता और क्या, पाँच-सात और भी मरते। उससे नयनके पापका बोझा और कितना भारी होता माँजी?

दादी चुप हो रहीं। नयनके इशारेका अर्थ वह जानती थीं और जानता था खुद नयन। लेकिन उसने फिर कुछ नहीं कहा। धरती पर सिर रखकर दूरसे दादीको प्रणाम करके, पाँचों रुपये माथेसे लगाकर वह चुपचाप चला गया।

५—निर्भय लल्लू

हम लोगोंके शहरमें उन दिनों प्लेग फैलने लगा था, इसी बीच एकाएक हैजा फूट पड़ा। उस जमानेमें हैजेके नामसे ही लोग घबरा उठते थे अगर किसी मोहल्लेमें किसीको कालरा अर्थात् हैजा हो जाता था तो यह खबर सुनकर लोग घरोंसे भागने लगते थे। अगर कोई कालरामें मर जाता तो उसे मसानतक पहुँचानेके लिए आदमियोंका मिलना मोहाल होता था।

लेकिन उस दुर्दिनमें भी हमारी बस्तीमें एक आदमी ऐसे थे, जिनको ऐसे कामोंमें सहायता करनेमें कोई आपत्ति नहीं थी। उन्होंने किसीका मुर्दा उठानेमें कभी आनाकानी नहीं की। उनका नाम था गोपाल चाचा। उनके जीवनका व्रत ही मुर्दा मसान पहुँचाना था। मोहल्लेके लोगोंमें किसीको कोई कठिन असाध्य बीमारी होती तो वह रोज डाक्टरके घर जाकर उसकी खबर लेते रहते थे। जब सुन पाते थे कि अब उसके बचनेकी कोई आशा नहीं है, डाक्टर-वैद्यने जवाब दे दिया है, तो वह घण्टा-दो घण्टा पहले ही नंगे पैर, अँगोछा कंधेपर डाले उसके दरवाजेपर पहुँच जाते थे। हम कई लड़के और नवयुवक उनके चेले थे। मुँह भारी करके गोपाल चाचा हम लोगोंसे कह जाते थे—अरे सुनते हो, आज रातको जरा सजग रहना बुलाने आऊँ तो फरफर ही निकलना। 'राजद्वारे श्मशाने च' यह शास्त्रका वाक्य याद है न!

हम लोग कहते—हाँ चाचा याद क्यों नहीं है। आपकी एक आवाज सुनते ही हम लोग अँगोछा लेकर हाजिर हो जायँगे।

चाचा कहते—ठीक-ठीक, यही तो चाहिए भाई। इससे बढ़कर पुण्यका काम संसारमें दूसरा नहीं है।

हमारे दलमें लल्लू भी था। लल्लूको तुम लोग जानते ही हो। ठेकेदारीके किसी कामसे अगर वह बाहर न गया होता था तो वह कभी ऐसे कामोंके लिए ना नहीं करता था।

उस दिन संध्याके समय उदास मुँहसे चाचाने आकर कहा—विष्णु पण्डित-की जान पड़ता है, आज नहीं बचेगी।

सुनकर हम लोग चौंक उठे। विष्णु पण्डित बेहद गरीब थे।

स्कूलमें हम लोगोंने पं० विष्णुदत्त भट्टाचार्यसे पढ़ा था। वह खुद जन्मके रोगी थे और हमेशासे पत्नीका ही उन्हें सहारा और भरोसा था। संसारमें उनका अपना कहनेको और कोई नहीं था। मैंने दुनियामें उनके बराबर सीधा और भलमानस निस्वार्थ आदमी और कोई नहीं देखा।

रातके लगभग आठ बजे होंगे। बाँसकी चारपाईपर लिटाके समेत पण्डितजीकी पत्नीको हम लोग घरके भीतरसे निकालकर आँगनमें ले आये। पण्डितजी महाशय आँखें फाड़े शून्यसे ऊपर ताक रहे थे। संसारमें और किसी चीजके साथ उस भयानक करुण दृश्यकी तुलना नहीं हो सकती। उसे एक बार देखकर फिर जीवनभर भूला नहीं जा सकता।

लाश उठाते समय पण्डित महाशयने धीरे-से कहा—मैं साथ न जाऊँगा तो चितामें आग कौन देगा!

किसीके कुछ कहनेके पहले ही अमल कह उठा—यह काम मैं करूँगा पण्डितजी। आप हम लोगोंके पितातुल्य गुरु हैं और इस नातेसे यह मेरी माता हैं।

हम सब लोग जानते थे कि मसानतक पण्डितजीके लिए पैदल चलना असम्भव है। हमारा स्कूल उनके घरसे पाँच मिनटका रास्ता है। हाँफते हाँफते उतनी दूरतक आनेमें भी उनको आध घण्टेसे अधिक समय लगता था।

पण्डितजी जरा देरतक चुप रहकर बोले—ले जाते समय उनकी माँगमें जरा-सा सेंदुर नहीं लगा देगा अमल!

“जरूर लगाऊँगा पण्डितजी, जरूर लगाऊँगा”, कहकर अमल एक छलाँगमें घरके भीतर जाकर सेंदुरकी डिब्बी ढूँढ लाया और उसमें जितना सेंदुर था सब पण्डिताइनकी माँगमें भर दिया।

'रामनाम सत्य है” कहते हुए हम लोग घरसे पण्डिताइनकी लाश उठाके लिए बाहर ले आये। पण्डितजी झुके दरवाजेके चौखटेपर हाथ रखे चुपचाप खड़े रहे।

गंगाके किनारेका मसान यहाँसे बहुत दूरपर था—लगभग तीन कोस होगा। वहाँ पहुँचकर हमने जब लाशको नीचे रखा तब रातके दो बजे होंगे। अमल चारपाईका सहारा लिये दोनों पैर फैलाकर बैठ गया। कोई-कोई थकानसे चूर होनेके कारण इधर-उधर चित होकर लेट रहे। शुक्लपक्षकी द्वादशीके चन्द्रमाकी

खिली हुई चाँदनीमें मशानकी बालू बहुत दूरतक फैली हुई चमक रही थी। वहाँ बिलकुल सुनसान था आदमीका नामनिशान भी न था।

गंगाके उस पारसे ठंडी उत्तरकी हवाके थपेड़ोंसे जलमें लहरें उठ रही थीं। कोई-कोई लहर अमरूदके पैरोंसे आकर टकराती थी।

शहरसे बैलगाड़ीपर चिताके लिए लकड़ी आती है, वह क्या जाने कितनी देरमें यहाँ आकर पहुँचेगी। मौजमपुरके पासवाले डोमोंके घर हैं। आते समय हम लोग उन्हें पुकार आये हैं। उनके भी आनेमें जाने कितनी देर होगी!

सहसा गंगाके उस पारके क्षितिजमें एक गहरा काला बादल उठा और जोरदार उत्तरी हवाके संयोगसे वह तेजीके साथ फैलता हुआ आगे इस पारकी ओर, बढ़ने लगा। गोपाल चाचाने डरकर कहा—लक्षण अच्छे नहीं देख पड़ते रे! पानी बरसता जान पड़ता है। इस जाड़ेमें अगर पानीमें भीगना पड़ा तो प्राणोंपर बन आयेगी।

पास कहीं बचावकी जगह न थी। कोई बड़ा भारी वृक्षतक नहीं। कुछ दूरपर ठाकुरबाड़ीके बागके बाहर मालीकी झोपड़ी जरूर है लेकिन पानी बरसनेमें उतनी दूर भागकर जाना—दौड़ना तो सहज नहीं है।

देखते ही देखते आकाशमें घोर घटा छा गई। अंधकारमें चाँदनी डूब गई। उस पारसे पानी बरसनेका शब्द कानोंमें पहुँचा—धीरे-धीरे वह निकटसे निकटतर हो उठा। पानीकी दस-पाँच अगली बूँदें तीरकी तरह आकर हम लोगोंके ऊपर पड़ीं। क्या करें कहाँ जायँ, यह सोचते ही सोचते मूसलधार पानी बरसने लगा। मुर्दा ज्योंका त्यों पड़ा रहा। प्राण बचानेके लिए जिससे जिधर बन पड़ा उधर वह पागलकी तरह भाग खड़ा हुआ। कौन किधर गया कुछ कहा नहीं जा सकता।

घण्टेभर बाद जब पानी बरसकर थमा बादल निकल गये, तब एक-एक करके सब लोग वहीं लौट आये। बादल साफ हो जानेसे दिनके प्रकाशकी तरह चाँदनी चारों-ओर फैल गई।

इसी बीचमें लकड़ी लेकर बैलगाड़ी भी आ गई थी। गाड़ीवान लकड़ी गाड़ीमेंकी और और सब सामग्री उतारकर लौट जानेका उद्योग कर

लेकिन लोगोंका कहीं पता न था। किसे कौन बुलाये?

गोपाल चाचाने कहा—ये साले ऐसे ही पाजी हैं। जाड़ेकी रातोंमें घरसे निकलते ही नहीं।

इतनेमें मन्नीने कहा—अच्छा, बल्लू कहाँ गया? सब लौट आये, वही नहीं देख पड़ता। उसने तो मुखाग्नि देनेको कहा था। डरके मारे कहीं घर तो नहीं भाग गया?

चाचाने अकस्मात् सख्त होकर कहा—वह ऐसा ही है। अगर इतना डरता था तो शवसे लगकर बैठा ही क्यों था? मैं होता तो चाहे सिरके पास गाज गिर पड़ती तो भी मुर्देको छोड़कर कहीं नहीं जाता।

मन्नीने पूछा—मुर्देको छोड़कर जानेसे क्या होता है चाचा?

चाचाने कहा—क्या होता है, क्या बताऊँ! न जाने क्या-क्या होता है। यह मसान है न। यहाँ भूत-प्रेत ही तो रहते हैं।

मन्नीने कहा—मसानमें अकेले बैठे रहनेमें आपको क्या डर नहीं लगता चाचाजी?

चाचा बोले—डर! मुझे! जानता है, मैंने कमसे कम एक हजार मुर्दे तो मसान लाये और जलाये होंगे!

इसपर मन्नी और क्या कहता, चुप हो रहा। सचमुच इस कामके लिए चाचाका गर्व करना ठीक ही था।

मसानमें दो कुदालें पड़ी हुई थीं। चाचाने एक कुदाल अपने हाथमें लेकर कहा—लोगोंकी राह देखनेसे नहीं चलेगा। मैं गड्ढा खोदता हूँ, तुम लोग हाथोंहाथ लकड़ियाँ नीचे किनारेपर ले आओ।

चाचा चिताके लिए गड्ढा खोदने लगे और हम लोग लकड़ियाँ लेकर नीचे जाने लगे।

नरेन्द्रने कहा—अच्छा भाई देखो, मुर्दा फूलकर कैसे दूना हो गया है—है न?

चाचाने किसी तरफ देखे बिना ही जवाब दिया—फूलेगा नहीं? ऊपरका लिहाफ, नीचेकी कथरी सब तो भीग गये हैं।

नरेन्द्रने कहा—लेकिन रुई तो पानीसे भीगनेपर सिमटकर पिचक जाती है

चाचा कुछ भी तो नहीं।

चाचा चिढ़ उठे। बोले—तू बड़ा बुद्धिमान् है न! जा जो कर रहा है, वह कर।

लकड़ियाँ किनारेपर अनकी बोझी ही रह गई थीं।

नरेन्द्रकी नजर बराबर मुर्देकी खाटपर ही थी। एकाएक वह घबड़ा-सहमा ठिठककर बोला—चाचा मुर्दा अभी जैसे हिल उठा।

चाचा अपने हाथका काम समाप्त कर चुके थे, हाथकी कुल्हाड़ी फेंककर बोले—अरे तेरे जैसा डरपोक आदमी मैंने कभी नहीं देखा नरेन! तू इन सब कामोंमें शरीक होने आता ही क्यों है? जा अपनी लकड़ियाँ ले आ, मैं चिता बनाता हूँ। बड़ा कहींका!

और दो-तीन मिनट बीते। अबकी नरेन्द्र चौंक उठकर पाँच-सात कदम पीछे हटकर खड़ा होकर डरा हुआ बोला—ना चाचा, कम्बख्त अच्छे नहीं लगते। सचमुच मुर्दा हिलडुल रहा है।

चाचा जबरन हाँ हाँ करके ज़ोरसे हँसते हुए बोले—तुम भला मुझे डराना चाहते हो—जिसने कमसे कम हजार मुर्दे इन्हीं हाथोंसे फूँक दिये हैं, उसे?

नरेनने कहा—वह देखिए, फिर हिल रहा है।

चाचाने कहा—हाँ हिल रहा है जानता है किसलिए? भूत होकर तुझ जैसा अपना ढूँढ़ने—

उनके मुखकी बात पूरी भी न होने पाई कि अकस्मात् बिछावन ... लिपटा हुआ मुर्दा खाटके ऊपर उठ बैठा और भयंकर नाकमें सुर भर नाक-तनाती आवाजमें चिल्ला उठा—नौं नौं—नरेनको नहीं—मैं तुमको खाऊँ—

अरे बापरे! हम दोनों एकदम सिरपर पैर रखकर भाग खड़े हुए। गाँवके रास्तेके दोनों ओर झाड़ियोंका ढेर था, वह उसे अँधेरे-अँधेरे कहीं कहीं ... छोड़के भाग उत्तरकी ओर नहीं भाग सकते थे। मगर चाचा ... दोनों कमरके ऊपर पानीमें कूद पड़े। तब फेर उन्होंने गलेतक पानीमें खड़े होकर वह चिल्लाने लगे—बापरे—मैं मरा—मरा ...
राम—राम—राम—

, ,

इधर वह भूत भी मुँहपरसे लिहाफ हटाकर चिल्लाने लगा—ओ रे निर्मल, ओ रे नरेन, ओ रे हीरू भागो नहीं—मैं कल्लू हूँ—लौट आओ—लौट आओ।

कल्लूकी आवाज हमारे कानोंमें पहुँची। अपनी भूलतापर अत्यन्त लज्जित होकर हम सभी लौट आये। गोपाल चाचा भयसे काँपते-काँपते अधमरेसे होकर पानीसे बाहर निकले। कल्लूने उनके पैर छूकर कुछ लज्जाके साथ कहा—सभी लोग पानीके डरसे भाग गये, लेकिन मैं चाचाको छोड़कर नहीं जा सका, इसीसे लिहाफके भीतर घुस गया था।

चाचाने कहा—खूब किया बेटा अच्छी बहादुरी की। अब जाओ अच्छी तरह देहमें गंगाकी बालू मलकर स्नान करो। ऐसा शैतान लड़का मैंने जिन्दगीमें नहीं देखा।

लेकिन चाचाने मन-ही-मन कल्लूको क्षमा कर दिया। समझे कि इतना निडर होना उनके लिए भी असम्भव है। ऐसी भयानक रातमें अकेले मसानमें कालाचका मुर्दा और उसका गन्दा बिछौना, किसीसे कल्लू नहीं डरा—किसी चीजसे उसका दिल नहीं दहला! यह क्या कम साहसकी बात थी!

जब लोगोंने चितामें आग देनेके लिए कल्लूका नाम लिया तब गोपाल चाचाने घोर आपत्ति करके कहा—ना यह न होगा। कल्लूकी माँ यह सुन पायेगी तो वह फिर मेरा मुँह नहीं देखेगी।

लाश जला दी गई। हम लोग गंगामें स्नान करके घर लौटे, उस समय सूर्योदय हो रहा था।

६—देवघरकी यादगार

डाक्टरके कहनेसे हवा बदलनेके लिए मैं देवघर आया था। आते समय रविबाबूकी यह कविता बार-बार याद आई थी, जिसका मतलब यह है कि "दवा और डाक्टर, दोनोंने मिलकर जब हड्डियाँ ही हड्डियाँ शरीरमें रहने दीं, और वे भी जर्जर हो गईं, तब डाक्टरने हुक्म दिया कि हवा बदलने किसी अच्छी जगह जाओ। तब हुआ यह कि व्याधिसे बढ़कर आधि हो गई।"

हवा बदलनेसे साधारणतः कितना लाभ होता है इसे लोग जानते हैं फिर भी हवा बदलने जाते ही हैं। मैं भी आया। चहारदीवारीसे घिरे हुए

बागके भीतर बने हुए बड़से घरमें रहता हूँ। रात तीन बजेसे पास ही कहीं एक आदमी फूटे स्वर जैसे बेसुरे गलेसे भजन गाना शुरू कर देता है। मेरी नींद खुल जाती है। दरवाजा खोलकर बरामदेमें आकर बैठ जाता हूँ। धीरे धीरे रात समाप्त होने लगती है—चिड़ियोंका आना-जाना और चहचहाना शुरू हो जाता है।

मैं देखता था, उन चिड़ियोंमें सबसे पहले बहुत तड़के दोयल उठती है। अँधेरा गायब होने भी नहीं पाता झुटपुटेमें ही उन चिड़ियोंका गाना शुरू हो जाता है। इसके बाद एक-एक करके बुलबुल, श्यामा, शालिक और टुनटुनी नामकी चिड़िया आती हैं। पासके घरमें जो आमका पेड़ था उसमें, मेरे घरके बकुल कुंजमें सड़क-किनारेके पीपलकी चोटीपर, ये सब चिड़िया जमा होती थीं। सबको मैं आँखोंसे देख नहीं पाता था लेकिन हर रोज बोली सुनते-सुनते ऐसा अभ्यास हो गया जैसे उनमेंसे हर एक चिड़िया मेरी पहचानी हुई है।

पीछे रातकी मन-बहू नामकी चिड़ियाका एक जोड़ा कुछ देर करके आता था। दीवारके किनारे यूकिलिप्टस नामके विलायती वृक्षकी सबसे ऊँची डालपर बैठकर यह जोड़ा नित्य बोलता और अपनी हाजिरी दे जाता था। एकाएक ऐसा हुआ कि न जाने क्यों वह जोड़ा दो दिनतक नहीं आया। यह देखकर मैं व्यस्त हो उठा। मनमें सोचने लगा—किसीने उन्हें पकड़ तो नहीं लिया! इस तरफ बहेलियोंकी—चिड़ीमारोंकी कमी नहीं है। चिड़ियोंको पकड़कर बाहर भेजना ही इन चिड़ीमारोंकी जीविका है। लेकिन तीन दिनके बाद चौथे दिन फिर वह जोड़ा आया। उसे देखकर जान पड़ा, जैसे सचमुच एक भारी चिन्ता दूर हो गई।

इसी तरह सबेरेका समय कटता है। तीसरे पहर फाटकके बाहर सड़कके किनारे आकर बैठता हूँ। घूमने-फिरनेकी शक्ति अपनेमें न थी जिनमें थी उनकी ओर एकटक ताका करता हूँ। देखता था, मध्यवित्त या मध्यवर्गके गृहस्थोंके घरके जो रोगी यहाँ थे, उनमें स्त्रियोंकी ही संख्या अधिक है।

पहले ही कुछ कमसिन लड़कियाँ जाती नजर आती थीं, जिनके पैर फूले फूले थे। मैं समझ गया, इन्हें बेरी-बेरी नामका रोग है। पैरोंकी छिपानेके लिए—इस कुरूपताकी लज्जा को ढकनेके लिए बेचारी

करती थीं। वे मोजा पहननेके दिन नहीं थे, गर्मी पड़ने लगी थी तब भी मैं देखता था कोई-कोई खूब कसे मोजे पहने रहती थीं। किसीको देखता था, उसकी साड़ी इतनी नीची है कि ज़मीनमें लोट रही है। यद्यपि इससे चलनेमें बाधा पड़ती थी, तो भी वे अपने पैरोंके ऐबको कौतूहली लोगोंकी नजरोंसे छिपा रखना चाहती है।

और सबसे बढ़कर मुझे दुःख होता था एक गरीब घरकी औरतको देखकर। वह अकेली ही आती थी। उसके साथ न कोई आत्मीय-स्वजन होता था न कोई सखी-सहेली। सिर्फ तीन छोटे-छोटे लड़की-लड़के रहते थे। अवस्था उसकी ध्यान पड़ता है यही चौबीस-पचीस बरसकी होगी किन्तु उसकी देह जैसे झुलसी और टूटी हुई थी वैसे ही मुँह पीला-पीला था उसमें जैसे एक बूँद भी रक्त न था। अपने शरीरका बोझ सँभालकर चलनेकी शक्ति उसमें नहीं थी तो भी सबसे छोटे बच्चेको वह गोदमें लिये रहती थी। वह बच्चा अपने पैरोंसे चल नहीं सकता था लेकिन उसे वह घरमें भी शायद छोड़ नहीं आ सकती थी। उस औरतकी दृष्टि न जाने कैसी दीन और थकी हुई थी। ध्यान पड़ता था मुझे देखकर उसे जैसे लज्जा आती है। किसी तरह उस स्थानको चटपट लाँघकर वह चली जाना चाहती थी। फटे-मैले कुर्ते और धोतीसे तीनों बच्चोंको किसी तरह ढाँक-ढूककर नित्य वह इसी रास्तेसे जाती थी। शायद उसने सोचा होगा कि किसी उपायसे—दवा-दारूसे जो नहीं हुआ वह इस संथाल परगनेके स्वास्थ्य ठीक करनेवाले जल-वायुमें, इस अत्यन्त कष्टदायक टहलनेसे ही प्राप्त कर लूँगी—उसकी तन्दुरुस्ती फिर ठीक हो जायगी वह आराम हो जायगी। रोगसे छुटकारा पाकर उसकी ताकत फिर लौट आयगी— फिर वह अपने बच्चोंकी, पतिकी सेवा करके संसारमें अपने नारी-जीवनको सफल-सार्थक बना सकेगी।

मैं बैठा-बैठा अपने मनमें सोचता था कि इसके सिवा उसकी और क्या कामना हो सकती है! वह भारतकी नारी है उसे इससे अधिक पानेकी बात कब किसने सिखाई है! मैं मन-ही-मन उसे आशीर्वाद देता था कि वह आरोग्य होकर अपने घर लौट जा सके—जिन तीनों बच्चोंने उसकी सारी जीवनी-शक्ति चूस ली है उन्हींको पाल-पोसकर मनुष्य बनानेका अवसर

पाये। यह किसकी लड़की है किसकी स्त्री है, उसका घर कहाँ है, यह कुछ मैं नहीं जानता। सारे भारतकी असंख्य नारियोंकी प्रतीक होकर यह जैसे मेरे मनके भीतर एक अमिट गहरी लकीर-सी कर गई, जो सहजमें मिटनेवाली नहीं।

मेरे साथ यहाँ एक नवजवान मित्र आया था। उसकी सेवा निःस्वार्थ थी। कलकत्तेमें जब मैं बहुत बीमार था तब उसने जैसे मन लगाकर मेरी सेवा की थी वैसे ही यहाँ भी मैंने उसे अपनी सेवा करते पाया। बीच-बीचमें वह कहता था—चलिए दादा, आज जरा टहल आवें। मैं कहता था—तुम जाओ भाई, मैं यहीं बैठकर यह काम पूरा कर दूँगा। तब वह असहिष्णु होकर कहता था कि आपसे भी अधिक बूढ़े कितने ही लोग यहाँ टहलते-घूमते हैं। जरा घूमिये फिरियेगा नहीं तो भूख कैसे लगेगी? इसपर मैं कहता था कि भूख कम लगनेसे भी काम चल जायगा लेकिन बेकार राह-राह, मारे-मारे फिरना मुझसे न हो सकेगा।

वह खफा होकर अकेले ही घूमने चला जाता था। लेकिन जाते समय मुझे सावधान कर देता था कि देखिये, अँधेरेमें घर न लौटियेगा। नौकर को पुकार कर लालटेन लानेके लिए कह दीजियेगा। इधर करैत साँप[1] कुछ अधिक होते हैं। यों वे किसीसे नहीं बोलते लेकिन अपने ऊपर किसीका पैर पड़ना वे पसन्द नहीं करते।

उस दिन मेरे मित्र घूमने गये थे। संध्या होनेमें अभी देर थी। मैंने देखा, कई बूढ़े आदमी भूख पैदा करनेके कर्तव्यको पूरा करके नाकिमर तेज चालसे अपने डेरोंको लौट रहे थे। सम्भवतः वे वात-व्याधिके रोगी थे, इसी कारण संध्यासे पहले ही इनको घरके भीतर पहुँच जानेकी जरूरत है।

उनका चलना देखकर मुझे भरोसा हुआ कि मैं भी कुछ दूर टहल सकता हूँ। मैंने सोचा चलूँ, मैं भी जरा थोड़ी दूर घूम आऊँ। उस दिन राहमें बहुत दूरतक घूमा। अंधकार हो आया। सोचा मैं अकेला हूँ; मगर एकाएक पी

१ करैत विषधर काला नाग होता है। उसका काटा हुआ बचता।—अनुवादक

घूमकर देखा एक कुत्ता मेरे पीछे आ रहा था।

मैंने उससे कहा—क्यों रे, मेरे साथ चलेगा? अँधेरी राहमें फाटक पहुँचा देगा?

वह दूरपर खड़ा होकर दुम हिलाने लगा।

मैं समझ गया कि वह राजी है। मैंने कहा—तो फिर मेरे साथ आ।

सड़कके किनारे एक लालटेनकी रोशनीमें मैंने देखा, कुत्ता सयाना था। रोगके कारण पीठपरके रोयें झड़ गये थे। जरा लँगड़ाकर चलता था।

लेकिन जब जवान होगा तब उसमें काफी ताकत होगी यह स्पष्ट जान पड़ा। उससे तरह-तरहके अनेक सवाल करते-करते मैं अपने डेरेके सामने आ पहुँचा। फाटक खोलकर मैंने उसे भीतर बुलाया। मैंने कहा—आ भीतर आ। आज तू मेरा अतिथि है।

कुत्ता बाहर ही खड़े-खड़े पूँछ हिलाता रहा, किसी तरह भीतर घुसनेकी हिम्मत न कर सका।

इतनेमें लालटेन लेकर नौकर आया। उसने फाटक बन्द करना चाहा। मैंने कहा—बन्द न करो खुला ही रहने दो। अगर वह कुत्ता भीतर आवे तो इसे खानेको दे देना।

लगभग एक घण्टेके बाद मैंने खबर लेकर जाना कि वह नहीं आया, कहीं चला गया।

दूसरे दिन सबेरे बाहर आते ही मैंने देखा, मेरा कलका अतिथि फाटकके बाहर खड़ा है। मैंने कहा—कल मैंने तुझे खानेका न्योता दिया था तू आया क्यों नहीं?

इसके जवाबमें मेरा मुँह ताकता हुआ वह उसी तरह पूँछ हिलाने लगा। मैंने कहा—आज तू खाकर जाना बिना खाये न जाना। समझा?

इसके उत्तरमें उसने जोर जोरसे पूँछ हिलाई। शायद उसका मतलब यह था कि सच कह रहे हो न?

रातको नौकरने आकर बतलाया कि वही कुत्ता आकर आज बाहरके बरामदेके नीचे आँगनमें बैठा है। खानसामा साहबको बुलाकर मैंने कह दिया कि यह कुत्ता मेरा अतिथि है। उसे पेटभर खानेको देना।

दूसरे दिन खबर आई कि मेरा अतिथि फिर नहीं गया। मेहमानदारीकी ममताके खिलाफ वह आरामसे निश्चिन्त होकर बन्द हुआ है। मैंने कहा—खैर, होगा तुम उसे खानेके लिए देना।

मैं जानता था कि रोज बहुत-सी खानेकी सामग्री फेंक दी जाती है, इसलिए कुत्तेको खिलानेमें किसीको आपत्ति न होगी। लेकिन आपत्ति थी और बहुत बड़ी आपत्ति थी। हमारी रसोईकी पत्तलका अधिकतर हिस्सा इस बागके मालीकी स्त्रीके पेटमें जाता था परन्तु मुझे यह मालूम न था। मालिन कमसिन थी देखने-सुननेमें भी अच्छी थी। साथ ही खानेमें उसे कोई विशेष विचार न था। नौकरोंकी उसीके साथ पूरी सहानुभूति थी। इसलिए मेरे अतिथिको रोज उपवास करना पड़ता था।

तीसरे पहर मैं सड़कके किनारे जाकर बैठा। देखा मेरा अतिथि पहलेसे ही आकर वहाँ जमीनपर बैठा है। यही नियम निश्चय हो गया। जब मैं सड़कसे जाता तब वह मेरे साथ-साथ जाता था। मैं पूछता—क्यों रे अतिथि, आज मांस कैसा पका था? हाड़ चबानेमें कैसा स्वाद आया?

वह पूंछ हिलाकर जवाब देता। मैं समझता कि आज उसे बहुत अच्छा लगा। मैं यह नहीं जानता था कि मालिनने मारकर उसको बाहर निकाल दिया है। वह बागके भीतर घुसने ही नहीं देती। इसीसे वह कुत्ता घरके सामने सड़कपर बैठा रहता है। मेरे नौकरोंकी भी इसमें साजिश थी।

एकाएक मेरी तबीयत खराब हो गई, दो दिनतक मैं कमरेसे नीचे उतरकर नहीं आ सका। दोपहरके समय ऊपरके कमरेमें बिछौनेपर पड़े-पड़े अखबार पढ़कर समाप्त किया था और खुली हुई खिड़कीसे बाहरकी धूपसे तपे हुए नीले आकाशकी ओर अनमना होकर मनमें यह सोच रहा था कि कमेटीके जो पण्डे या मान्य हैं उनको मन्त्री होनेकी कैसी उत्कट आकांक्षा है, कैसी पद-लोलुपता है, अथवा निःस्पृहताके आवरणमें उसे छिपानेके लिए कितने कौशलसे काम लेते हैं! जिन्होंने कानून बना दिया पढ़ नहीं सुनी, उन्हींके साथ कानूनकी व्याख्याको लेकर कैसी झपट, कैसी लड़ाई ठाने हुए हैं। यह बात निःसन्देह प्रमाणित कर देना चाहते हैं ये कमेटी कि कानूनके निर्माताओंका इरादा अच्छा नहीं है! विडम्बना और किसे कहते हैं!

सहसा खुले हुए दरवाजेसे कमरेके फर्शपर कुत्तेकी परछाईं देख पड़ी। मुँह बढ़ाकर रसा अतिथि सामने खड़ा पूँछ हिला रहा है। दोपहरके समय सब नौकर सो रहे हैं, उनकी कोठरियाँ बन्द हैं। इसी मुनौसमें छिपकर वह एकदम मेरे कमरेके सामने आकर हाजिर है। मैंने सोचा, दो दिनसे मुझे नहीं देखा, इसीसे धाकर मुझे देखनेके लिए आया है।

मैंने पुकारा—आओ अतिथि, भीतर आओ।

वह नहीं आया, वहीं खड़ा-खड़ा पूँछ हिलाने लगा।

मैंने पूछा—खा चुका रे? आज क्या खाया?

एकाएक ध्यान पड़ा कि उसकी दोनों आँखें जैसे गीली हो रही हैं, यह जैसे एकान्तमें मेरे आगे कुछ नालिश करना चाहता है। नौकरोंको मैंने पुकारा। उनके दरवाजा खोलनेका शब्द होते ही अतिथि यहाँसे भाग खड़ा हुआ।

मैंने नौकरसे पूछा—क्यों रे, आज कुत्तेको खानेके लिए कुछ दिया है?

उसने कहा—जी नहीं। मालकिनने उसे मारकर भगा दिया था।

मैंने कहा—आज तो बहुत-सा खानेका सामान बचा था। वह सब क्या हुआ?

नौकरने कहा—मालकिन सब उठा ले गईं।

हंगामा सुनकर मेरे मित्रकी नींद टूट गई। वह आँखें रगड़ते-रगड़ते कमरेके भीतर आये और जरा मुस्कराकर बोले—दादाकी बातें निराली होती हैं। आदमियोंको तो खानेको नहीं मिलता और आप घरके कुत्तेको बुलाकर खिलाते हैं। खूब।

मेरे मित्र जानते हैं कि इससे बढ़कर अकाट्य युक्ति और नहीं हो सकती। मनुष्यको न देकर कुत्तेको देना—अन्धेर ही तो है!

सुनकर मैं चुप हो रहा। संसारमें किसका दावा किसके ऊपर आकर पहुँचता है यह मैं इन लोगोंको कैसे समझाता?

खैर, जब चाहे जो हो फिर अतिथिको बुलाकर खाना गया, फिर उसने बरामदेके नीचे आँगनकी धूपमें परम निश्चिन्त मनसे अपने लिए जगह कर ली। अब उसका मालकिनसे डर जाता रहा है। दिन ढल गया तीसरे पहर मैंने

उसरके बरामदेसे देखा अतिथि इसी तरफ देखता हुआ चलनेके लिए तैयार खड़ा है। मेरे चलनेके जानेका समय हो गया था न।

मेरा शरीर स्वस्थ नहीं हुआ। आरोग्य न होनेपर भी देशपरसे विदा होनेका दिन आ गया। तो भी तरह-तरहके बहाने करके दो दिन और रुका रहा।

आज सवेरेसे सामान बँधना शुरू हो गया—दोपहरकी गाड़ीसे जाना है। फाटकके बाहर गाड़ियाँ आकर खड़ी हुईं, उनपर सामान लदा जाने लगा।

अतिथि बहुत व्यस्त था—कुलियोंके साथ बराबर दौड़कर, भीतर-बाहर आ-जाकर चौकसी करने लगा, जैसे वह देख-भाल रहा हो कि कहीं कुछ खो न जाय, छूट न जाय। सबसे अधिक उत्साह उसीमें नजर आ रहा था।

एक-एक करके गाड़ियाँ स्टेशनको चल दीं मेरी गाड़ी भी चलने लगी। स्टेशन बहुत दूर न था। वहाँ पहुँचकर उतरने लगा तो देखा, मेरा अतिथि सामने खड़ा है।

मैंने कहा—क्यों रे, तू यहाँ भी आ गया!

उसने पूँछ हिलाकर इस प्रश्नका उत्तर दिया—क्या जानें, उसके क्या मानें थे।

टिकट खरीदे गये। माल-असबाबकी तौल हो गई।

किसीने आकर खबर दी कि ट्रेनके छूटनेमें बस दो ही एक मिनटकी देर है।

साथमें जो लोग सवार कराने आये थे, उन सबको मैंने यथायोग्य-प्रणाम दिया। कुछ पाया नहीं तो केवल मेरे अतिथिने।

गर्म हवामें धूल उड़कर सामने पर्देकी तरह छा गई। जानेके पहले उसी पर्देके भीतरसे मैंने अस्पष्ट देखा—स्टेशनके फाटकके बाहर मेरा अतिथि खड़ा एकटक मेरी ओर ताक रहा है। ट्रेन सीटी देकर चल दी।

पर लौटनेका आग्रह या उत्साह मुझे अपने मनके भीतर कहीं ढूँढ़ नहीं मिला। केवल यही खयाल आने लगा कि मेरा अतिथि आज लौटकर देखेगा कि परका फाटका फाटक बन्द है—उसके भीतर जानेका कोई

शायद रास्तेमें खड़े होकर दो-तीन दिन मेरी राह देखेगा—शायद दोपहरीमें किसी समय फाटक खुला पाकर चुपचाप छिपकर ऊपर चढ़ आयगा और मेरे रहनेके कमरेको खोजेगा। मुझे न पाकर फिर राहका कुत्ता राहमें ही आश्रय ग्रहण करेगा।

शायद उससे अधिक तुच्छ जीव उस शहरमें दूसरा नहीं है तो भी यह देवघरमें रहनेकी बारबार उस कुत्तेको याद करके ही आज मैं छिपकर रोने लगता हूँ।
